



All Right Reserved.

श्री १०८ गोस्वामी तुलसीदास कृत
(सटीक)

गीतावली ।

सातोकाण्ड ।

परमहंस प्रशंसमान हंसवंशावतंस
श्री सीतारामीय महात्मा हरिहरप्रसाद कृत
प्रकाशिका टीका सहित

जिस को

स्वस्ति श्री विविध विरुदावली विराजमान मानोन्नत

श्री महाराजधिराज काशिराज द्विजराज

श्रीश्री श्री श्री प्रभुनारायण सिंह

बहादुर के. सी. आइ. ई. के

आज्ञानुसार

५ म० कु० बाबू रामदीन मिहान्यन

श्री बाबू रामरणविजय सिंह ने प्रकाशित किया ।



पटना—

“खड्गबिनाम” प्रेम—बांकीपुर ।

षण्डीप्रसाद मिह ने मुद्रित किया ।

१९०६.

श्रीः

गीतावली सटीक ।



श्रीसीतारामाभ्यां नमः ।

मङ्गलाचरण—श्लोक ।

बालं दिगम्बरं रामं कौशल्यानन्दवर्द्धनम् ।
अतसीकुसुमश्यामं दध्योदनमुखं भजि ॥ १ ॥
सोरठा ।

जपत रहत सब जाम, जामु नाम ब्रह्मादिकौ ।
हरिहर करत प्रनाम, तेहि सिय सियवर चरन कौं ॥
दोहा ।

भरत लपन रिपुदहन पद, बंदि ध्याय हनुमान् ।
हरिहर टीका रचत है, देहु सुधारि सुजान ॥
मूल ।

नीलाम्बुजश्यामलकोमलाङ्ग सीतासमारोपितवासंभागम् ।
पाणौ महाशायकधारुचापं नमामि रामं रघुवंशनाथम् ॥

श्याम कमल सम श्यामल कोमल अंग औ सीता जू याम
भली भांति तें स्थित औ हाथ में अमोघ बाण औ सुंदर सारंग
जिन के तिन रघुवंशनाथ श्रीराम कों नमस्कार करत हौं । श्री
चारि लीला प्रधान हैं बाल, विवाह, वन और राजलीला । य
श्लोक के एक एक पद से जनाए । नीलाम्बुजश्यामल कोम
बाल, औ सीतासमारोपितनामभागें तें विवाह, औ पाणौमहाश
चापें तें वन, औ नमामिरामंरघुवंशनाथं तें राज्यलीला ।

राग असावरी—आजु सुदिन सुभघरी सुहाई
शीलगुन धाम राम नृप भवन प्रगट भए आई ॥ १ ॥
पुनीत मधुमास लगन यह वार जोग समुदाई । ह
चर अचर भूमिसुर तनुरुह पुलकि जनाई ॥ २ ॥ व
विवुधनिकर कुसुमावलि नभ दुंदुभी बजाई । कौस
मातु सब हरपित यह सुप वरनि न जाई ॥ ३ ॥ सुनि
मुत जन्म लिए सब गुरजन विप्र बुलाई । वेद विहित
क्रिया परम सुचि आनंद उर न समाई ॥ ४ ॥
वेदधुनि करत मधुर मुनि बहुविधि बाजु बधाई । पुरख
प्रियनाथ हेतु निज निजसंपदा लुटाई ॥ ५ ॥ मनि
बहु कीतु पताकनि पुरी रुचिरकरि छाई । मागध सु
वंदीजन जहँ तहँ करत बडाई ॥ ६ ॥ सहज सिंगार
वनिता चलि मंगल विपुल बनाई । गावहिं देहिं
मुदित चिरजियो तनय सुषदाई ॥ ७ ॥ वीथिन्ह कुमकुम
अरगजा अगसु अवीर उडाई । नाचहिं पुर नर नारि प्रे
देहदसा बिसराई ॥ ८ ॥ अमित धेनु गज तुरग बसन
जातरूप अधिकारी । दैत भूप अनुरूप जाहि जोइ सक

रुद्र पाई ॥ ८ ॥ सुयो भए सुर मंत भूमिपुर घनगनमः
 मलिनाई । सवहि सुमन दिक्मत रवि निकसत कुमुदविपि
 दिन्पाई ॥ १० ॥ जो सुपहिंधु महत सौकर तें सिख विधि
 प्रभुताई । मोड़ सुप उमगि खवध रछो दमदिमि कवन लत
 फही गाई ॥ ११ ॥ जो रघुवीरचरन चित्तक तिन्ह को गति
 प्रगट देपाई । खदिरन खमल खनूप भगति दृढ तुलसिदास
 सब पाई ॥ १२ ॥ १ ॥

गयी मनि गयी फरति है आजु सुंदर दिन औ सुंदर सुभ पर
 में रूप नील औ गुन के घाम औ राम महागन द्वापरध के वृह में आ
 पे जगट भए । भवन प्रगट भए आई फरिबे को यह भाव कि अपन
 इच्छा करि परपाम ने आदके प्रगटे, गर्भ ने नारी ॥ १ ॥ अति पवि
 चैत्रमास कर्क लग्न पांच ग्रह उच्च, मेष के मूर्धे, मकर के मंगल, तुल
 के जनिश्वर, कर्क के वृहस्पति, मीन के शुक औ श्रीरामनन्म दिन 'मेरुतंत्र'
 औ 'रामसुधा' में सोमवार औ 'मृग्गागर' में बुधवार औ गोसाईं ज
 मंगलवार एहि ग्रंथ में लिखे सो कथांतर करि स्पष्टस्थाकरना औ यां
 समुदाय सुकस्मीदि है । चर जंगम अचर स्थावर औ भूमिपुर ब्राह्मण
 दर्पवन्त हैं सो कैसे जानि परची तेहि हेतु लिखत हैं कि तनुरुह को
 रोम सों पुलक करि जनाय दिए । शंका । अचर की पुलकावली को
 जानि परी । उत्तर । अचर पर्यंत वृक्षादि तिन के रोम रूप वृण पत्रा
 हैं ते लहलहाय उठे सोई पुलकना है । चर अचर से भूमिपुर को पृथ
 लिखिबे को यह भाव कि श्रीरघुनाथ को ब्रह्मण्य जानि ब्राह्मणन के
 सब तें अधिक आनंद भयो भतएव भागवत में लिखा । "ब्रह्मण्यः सत्य
 सन्धश्च रामो दाशरथि र्यथा ।" मधुमास को अति पुनीत कहिबे को य
 भाव कि वर्ष का आदि मास है अतएव श्रीदशरथ महागज अश्वमे
 याग चैत्रही में आरम्भ किए । वाल्मीकीय रामायण में लिखा ॥ २
 देवतन के समूह आकाश में नगारा बजाइ पुष्पसमूह वरपत हैं । नगर
 बजाइबे को यह भाव कि रावण के भय तें छिपे छिपे फिरत रहे

आहु-नगारा, बजाइ-मगटे औ श्रीकौशल्या जू आदि सब माता-हर्षित हैं यह सुख वरनि नहीं जात है जाते चौथे पुन में पुत्र पाए याते मातन को सुख अकथनीय ठहराये ॥ ३ ॥ दशरथ महाराज पुत्रजन्म सुनि सब कुलवृद्ध औ ब्राह्मणों को बोलाय लिए । वेदविहित नांदीमुख श्राद्धादि परम शुचि-क्रिया करि जो आनंद भयो सो घर में नहीं समात है । गुरुजन विप्र दोऊ विप्र बोलाइवे को यह भाव कि लौकिक क्रिया गुरुजन औ वैदिक क्रिया ब्राह्मण सम्हारें ॥ ४ ॥ मधुर स्वर तें सुनि यह में वेदधुनि करत औ बहु प्रकार ते बधाई वाजति है । पुर-बासीप्रिय जो नाथ हैं तिन के हेतु अपनी अपनी संपदा लुटाई । प्रियनाथ कहिवे को यह भाव कि महारोज के पुत्र होए विना जो अनाथ रहे सो सनाथ भए ॥ ५ ॥ तोरन-वंदनवार केतु ध्वजा पताका फरहरा वा केतु सचिन्ह जैसे विष्णु की ध्वजा में गरुडचिन्ह औ शिव की ध्वजा में वृषचिन्ह औ पताका चिन्ह रहित, मागध कथक, मृत पौराणिक, बंदी भाट ॥ “सूताः पौराणिकाः प्रोक्ता मागधा-वंशशंसकाः । वंदिनस्त्वमलप्रज्ञाः प्रस्तावसदृशोक्तयः” ॥ ६ ॥ सहज शृंगार जेहि भाति तें किए रहीं तैसहीं उठि धाई । मंगल विपुल हरदी दूर्वादि । सहज शृंगार को यह भाव कि मंगल बनाइवे के आनंद में शृंगार सजना भूलि गई ॥ ७ ॥ गलिन में केसर औ अरगजा को कीच है औ अगर का धुआं औ अवीर उड़त है औ देहदसा बिसराइ प्रेम में भरि पुर के नर नारि नाचत हैं ॥ ८ ॥ गज हाथी, तुरंग घोड़ा, जातरूप सोना, सिद्धि अणिमादिक ॥ ९ ॥ देवता संत औ ब्राह्मण सुखी भए औ खलंगण के मन में मलिनाई आई अर्थात् दुखी भए जैसे सूर्य के निकसत सब फूल फूलत है पर कोई को बन बिलखात अर्थात् संपुटित होत है । भाव सपेदी भीतर जात स्याही ऊपर आय जान है ॥ १० ॥ जो सुख रूप समुद्र की एक बूंद ते शिव ब्रह्मा की मभुताई है सो सुख अयोध्या जी के दशो दिशा में उमांग रहो वा अयोध्याजी तें उमंगि के दशो दिशा में जाय रहो ताको कवन जतन तें गाइ कहाँ, भाव बूंद को जो भली भांति न जानै सो समुद्र को कैसे बखानै ॥ ११ ॥ जे रघुनाथ के चरन के चिन्तक हैं तिन की गति मगट देखि परति है

अर्थात् ज्ञानिन हों कहीं प्रगट न भए औ भक्तन के पुत्र है प्रगट-भए
भाव जो स्वयं रखा सो परवश भयो, अंतरालरहित निर्मल औ
उपमारहित दृढ़ भक्ति तब तुलसीदास ने पाई । भाव केवल भक्ति करि
रघुनाथ के प्रगटे तें कर्मज्ञान को भरोसा छोड़ि केवल भक्ति दी दृढ़
करि लियो ॥ १२ ॥ १ ॥

राग जयतथी—सहेली सुनु सोहिलोरे सोहिलो सोहिलो
सोहिलो सोहिलो सब जग आशु । पृत सपूत कौसिला जायो
अचल भयो कुलराज ॥ १ ॥ चैत चारु नौमोसिता मध्य गंगन
गत भानु । नपत जोग यह लगन भले दिन मंगल मोदनि-
धानु ॥ २ ॥ व्योम पवन पावक जल थल दिसि दसहु सुमंगल-
मूल । सुर दुंदुभी वजावहिं गावहिं हरषहिं वरषहिं फूल ॥ ३ ॥
भूपतिसदन सोहिलो मुनि वाजे गहगहे निसान । जहं तेहं
सजहिं कलस ध्वज चामर तोरन केतु बितान ॥ ४ ॥ सींचि
सुगंध रचे धौके गृह आंगन गली बजार । दल फल फूल दूब
दधि रोचन घरघर मंगलचार ॥ ५ ॥ मुनि सानंद उठै दस-
खंदन सकल समाज समेत । लिये बोलि गुर संचिव भूमिसुर
प्रमुदित चले निकेत ॥ ६ ॥ जातकर्म करि पुजिं पितर सुर
दिये महिदेवन दान । तेहि अवसर सुत तीन प्रगट भए मंगल
मुद कल्याण ॥ ७ ॥ आनंद महं आनंद अवधे आनंदबधावन
होइ । उपमा कहे चारिफल की मोकीं भली न कहै कवि कोइ
॥ ८ ॥ सजि आरती विचित्र धार कर लूथ लूथ वरनारि ।
गावतचली बधावन लैलै निजनिजकुलअनुहारि ॥ ९ ॥ असही
दुसही मरहु मनहिमन वैरिन बढहु विपाद । नृपसुत चारि
प्रास चिरजीवहु संकरगौरिप्रसाद ॥ १० ॥ लैलै ढोय प्रजा

प्रमुदित चलि भांतिभांति भरिभार । करहिं गान करि आन
 राय की नाचहिं राजदुधार ॥ ११ ॥ गज रघ वाजि वाहिनी
 वाहन सवनि रंवारै साज । जनुरतिपति रितुपति कोसलपुर
 विहरत सहितसमाज ॥ १२ ॥ घंटा घंटी पंपाठन आउज
 भांकि येनु डफ तार । नूपुरधुनि मंजीर मनोहर करकंकन
 भनकार ॥ १३ ॥ नृत्य करहिं नटनटो नारिनर अपने अपने
 रंग । मनहुं मदन रति विविध वेपधरि नटत मुदेस मुधंग ॥ १४ ॥
 उघटहिं छंदप्रवध गीतपद रागतानयंधान । सुनि किन्नर
 गन्धर्व मराहत विधके हैं विबुधविमान ॥ १५ ॥ कुंकुम अगर
 अरगजा छिरकहिं भरहिं गुलाल अश्वीर । नभ प्रसून भरि
 पुरी कोलाहल भइ मनभावति भीर ॥ १६ ॥ बडौ धयस विधि
 भयो दाहिनी गुरसुर आसिराद । दसरथमुकृतसुधासागर सब
 उमगे हैं तजि मरजाद ॥ १७ ॥ ब्राह्मन वेद बंदि विरुदावलि
 जयधुनि मंगलगान । निकसत पैठत लोग परस्पर बोलत
 लगि लगि कान ॥ १८ ॥ वारहिं मुकुता रतन राजमहिप्रो
 पुर सुसुधि समान । बगरे नगर नेवछावरिमनिगन जनु जुवारि
 जवधान ॥ १९ ॥ कौन्दि वेदविधि लोकरोति नृप मंदिर
 परमहुलास । कौसल्या केकई सुमित्रा रहसविवसु रनिवास
 ॥ २० ॥ रानिन दिए वसन मनि भूषन राजा सहनभंडार ।
 मागध सूत भाट नट जाचक जहं तहें करहिं कवार ॥ २१ ॥
 विप्रवधू सनमानि सुआसिनि जनपुरजन पहिराइ । सनमाने
 अपनीस असीसत ईस रमेस मनाइ ॥ २२ ॥ अष्टसिद्धि नव-
 निधि भूति सब भूरतिभवन कमाहिं । समउ समाज राजदंश-
 रथ की लोकन सकल सिद्धाहिं ॥ २३ ॥ को कहि सकै अवध-

वासिन को प्रेम प्रमोद उखाहुं । सारद सैस गनेस गिरीसहिं
अगम निगम अवगाहु ॥२४॥ सिव विरंचि मुनि सिद्ध प्रसंसत
वडेभूप के भाग । तुलसिदास प्रभु सोहिलो गावत उमगि २
अनुराग ॥ २५ ॥ २ ॥

सहेली प्रति सहेली की उक्ति है । सहेली सखी वा सहेली सहेवाली
जेहि को यह उत्सव सोहात अर्थात् असही दुसही नाहीं । सोहिलो
कहैं उत्सव सष जगत में सोहिला है याते बहुवार लिखे वा पांच बेर
लिखे तें पांचो देवतन को उत्सव युक्त जनाए वा पंचभूत सब हर्षित
भए जे पहिले रावणादि करि दुखी रहे ताते पांचवार वा पहिले
सोहिलो रे जो लिखे सो सुनिवे में है फेरि चारि बार लिखे जातें
चारि भाइन का जन्मोत्सव है वा आनंद तें बहुवार लिखे । सपूत कहिवे
को यह भाव कि जन्मतै तीन भैयन को और बोलाए वा दिन ग्रहादि
भले तें जाने कि सपूती करेंगे । अचल भयो कुलराज कहिवे को यह
भाव कि पुत्र भए बिना जो चल होत रह्यो सो अचलभयो ॥१॥ शुक्ल
पक्ष मघ्यान्ह फाल औ बार मंगल आनंद को निधान है ॥२॥ आकास
वायु अग्नि जल औ थल करि पृथ्वी लेना औ दशोदिशा में सुमंगल
का मूल है आकाशादि पांचो लिखे तें पांचो भूतन को हर्ष जनाए ॥३॥
निसान नगारा चामर कहैं चमर वितान सामिआना ॥ ४ ॥ सुगंध
अतर गुलाबादि दल तुलसी बिल्वपत्रादि फल सुपारी नारिअर आदि
रोचन गोरोचन वा रोरी ॥ ५ ॥ दशस्पंदन दशरथ महाराज निकेत
महल ॥ ६ ॥ जातकर्म नांदीमुखश्राद्ध जेहि में दही अक्षत से श्राद्ध
औ दुर्वादि जल से तर्पण होत है ताको करि पितर सुर पूजि ब्राह्मणन
को दान दिए । शंका । सूतक में पूजा औ दान कैसे किए । उत्तर ।
जब ली नार नहीं छीना जाय तबलों सूतक नाहीं लगत है । तेहि अवसर
में तीन पुत्र और प्रगट भए मंगल मुद कल्याण अर्थात् मंगल रूप
भरत जी मुदरूप लक्ष्मण जी औ कल्याण रूप शत्रुघ्न जी हैं ॥ ७ ॥
श्रीरघुनाथ के जन्म के आनंद महं तीनों भैयन के जन्म भयो ताते
आनंद महं आनंद लिखे । अजोध्या जी में आनंद युक्त बधाया होत है

चारो फल सम चारो भयन को कहे ते हम को कोऊ कवि भलों न
 कहैगो अर्थात् जाको जन मोक्षादि दाता है जात तेहि को मोक्षादि की
 उपमा कैसे संगवै ॥ ८ ॥ विचित्र थार अद्भुत थार वरनारि अहिवाती
 कुलअनुहारि कुल के योग्य, भाव ब्राह्मणी सतोगुणी ठाठ मे औ सत्रिया
 रजोगुनी ठाठ से इत्यादि ॥ ९ ॥ असही कहे जो और की बंती
 न सहि सकै दुसही कहैं दुख करि परवदती सहै वा दुसही दुष्ट ए सव
 मन ही मन अर्थात् कुट्टि के मरहु औ चरिन को विपाद बढ़ा ॥ १० ॥
 दोष कहैं भेंट की सामग्री अर्थात् अपने अपने जाति के अनुरूप जैसे
 अहीर दही, चरई पान इत्यादि आन कहैं दोहाई ॥ ११ ॥ वाहिनी जो
 सेना ताको वाहन जो नायक तिन ने हाथी रथ घोड़ा सवनि के साज
 संचारे “वाहयतीति वाहनः” इस व्युत्पत्ति ते नायक को वाचक
 भयो मानो सेनापति नहीं है काम है, सेना नहीं है वसन्त ऋतु है सो
 अयोध्या जी में समाज साहित बिहरत है इहां समाज भूषण वसनादि हैं
 वा गजरथ औ सुरंगरथ औ वाहिनी वाहन अर्थात् घोड़ी घोड़ा
 हाथी आदि सवनि के साज संचारे अपर पूर्ववत् ॥ १२ ॥ घंटा
 हाथी आदि के घंटी हाथिन के झेला की औ सादनी पायक आदि की
 आवाज कहैं तासा अरबी में तासा को आवाज कहत हैं, तार करताल
 मंजीर पावजेय ॥ १३ ॥ अपने अपने रंग कहैं चाल तें अर्थात् संगीत
 नाचनेवाले संगीत की चाल तें औ तांडव नाचनेवाले तांडव की चाल
 तें इत्यादि । नट नटी नारि नर नृत्य करत हैं मानी काम रति बहुत
 वेप धरि सुदेश कहैं सुंदर औ सुधंग कहैं सूधे अंग तें नाचत हैं अर्थात्
 हाथ मुंह देहा नाहीं होए पावत है वा सुधंग शुद्ध अंग नृत्य के ॥ १४ ॥
 छंद औ प्रबन्ध औ गीत के पद राग तान वंधान पूर्वक उपदधि अर्थात्
 गावहि जैसे ध्रुपद तिलाना है तैसे छंद प्रबन्ध गीत भी है संगीत ग्रंथन
 में स्पष्ट बंधान कहैं लय अर्थात् गीत समाप्त पर्यन्त तान ताल बराबर
 चला जाय बार बराबर भी भेद न पड़े सुनि के गंधर्व किन्नर सराहत
 हैं कि अस हम नहीं गाय सकते औ देवतन के विमान विशेष थकि
 गण अर्थात् अचल है गण भाव जो स्वर्ग में नहीं सुने रहे सो सुने तावें
 मोहि रहे ॥ १५ ॥ तीसुर आदि से अति मेही औ अति लाल जो बनत

ताको गुलाल कहत हैं औ तेहि से कम लाल औ मोटा जो जोन्हरी आदि के पिसान से बनत है ताको अवीर कहत है । कोलाहल अधिक शब्द । मनभावती भीर जो भीर बहुत दिन से चाहत रहे सो भई ॥ १६ ॥ बड़ी वयस साठि हजार वरिस की अवस्था में गुरु औ देवता के आर्शिर्वाद ते विधाता दाहिनो भयो “ पाष्टि वर्षसहस्राणि जातस्य मम कौशिक ” इति श्रीमद्रामायणे । महाराज दशरथ के भृकृत रूप जे अमृत के सब समुद्र हैं अर्थात् चारों समुद्र, ते मर्याद कहैं किनारा छोड़ि उमगै भाव जैसे समुद्र जो किनारा छोड़ि उमगै सो सब जग डूबि जाय सो एक को को कहै सब मुकृत समुद्र उमगे एहि तैं यह व्यंजित किए कि सब ब्रह्माण्ड आनंद में डूबि गयो ॥ १७ ॥ विरदावली यश । लगि लगि कान कहिवे को यह भाव कि वेदादि धुनि तैं जो महाशब्द भयो तातैं सुनात नाहीं कान में लगि जब जोर सें बोलत हैं तब सुनात है ॥ १८ ॥ मोती जवाहिर आदि श्री महाराज की पटरानी औ पुर की स्त्रीगन समान नेवछावर करहिं । एहि तैं यह जनाए कि पुरवासिनिनि को भी आनंद महारानिन के तुल्य भयो नेवछावर करत में जो गिरे मनिसमूह ते बगरे कहैं छितिराने नगर में ज्वार जोन्हरी औ जब धान के समान ॥ १९ ॥ मंदिर में परम हुलास पूर्वक वेद लोक रीति महाराज कीन्हे अर्थात् वेदरीति जातसंस्कार अभ्युदयिक श्राद्धादि पूतना रक्षणदि, लोकरीति नार गाइव औ राई नोन वारय औ चौकी हेतु आगि आदि राखव, सब रनिवास कौशल्य कैंकई सुमित्रा आदि रहसविवश कहिए हर्ष के विशेष बस भई ॥ २० ॥ सहन कहैं संपूर्ण कवार कहैं यश ॥ २१ ॥ सुआसिनि कहैं सावित्री फन्यावर्ग, जन दासादि, पुरजन पुरवासी, अवनशि दशरथ महाराज ईश शिव रमेश विष्णु ॥ २२ ॥ आठो सिद्धि औ नवो निधि सब ऐश्वर्य युक्त महाराज के भवन में कमाहि कहैं परिचर्या करत हैं । लोकप इन्द्रादि । “अणिमा महिमा चैव गरिमा लघिमा तथा । प्राप्तिः प्राकाम्यभीक्षित्वं वशित्व-श्चाष्टसिद्धयः ॥ पद्मो स्त्रियां महापद्म शब्दो मकरकच्छपौ । मुकुन्दकुन्दनीलाश खर्वश्च निधयो नव ॥ इति शब्दार्णवे ” २३ गिरीश शिव अगम शास्त्र निगम वेद इन्ह को अथाह है व शिवादि को अगम वेद को अथाह है २४।२५।२

राग विलावल—आजु महामंगल कोसलपुर सुनि नृप
 के सुत चारि भये । सदन सदन सोहिलो सुहावन नभ अरु
 नगर निसान हये ॥ १ ॥ सजिसजि जान अमर किन्नर मुनि
 जानि समयसम गानठये । नाचहिं नभ अपहरा मुदित मन
 पुनिपुनि वरपहिं सुमनचये ॥ २ ॥ अति सुष वेगि वीलि गुर
 भूसुर भूपति भीतर भवन गये । जातकर्म करि कनक वसन
 मनि भूपित सुरभिसमूह दये ॥ ३ ॥ दल रोचन फल फूल
 दूव दधि जुवतिन्ह भरिभरि थार लये । गावत चली भीरु भद्र
 वीथिन्ह बंदिन बांकुरि विरद वये ॥ ४ ॥ कनककलस चामर
 पताक ध्वज जहंतहं बंदनवार नये । भरहिं, अबीर अरगजा
 छिरवाहिं सकललोक एकरंग रये ॥ ५ ॥ उमगि चल्थो आनंद
 लोका तिहुं देत सबनि मंदिर रितये । तुलसिदास पुनि भरेइ
 देपियत रामकृपाचितवनि चितये ॥ ६ ॥ ३ ॥

हये कहैं वजे ॥ १ ॥ समैसम गान ठये अर्थात् सोहरादि गान
 ठाने, चये समूह ॥ २ ॥ सुरभी धेनु ॥ ३ ॥ बांकुरिविरद उत्कृष्ट यश,
 पये कहैं पदे ॥ ४ ॥ रए रंगे ॥ ५ ॥ रितये खाली किये ॥ ६ ॥ टिप्पणी—जान
 विमान । अमर देवता । सुमनचये सुमन के समूह । भूसुर ब्राह्मण ।
 जातकर्म नंदीमुख आर्द्र । दल तुलसी । रोचन हलदी । फल सुपारी
 नारियल । जुवतिन्ह युवा स्त्रीगण । वीथिन्ह गलियों में । पये फदे वा
 किये । कनककलस सोने का कलस । तीनों लोक में आनंद उमड़ चला ।
 सभी अपना २ घर खाली करके दान देने लगे । तुलसी दास जी
 कहते हैं कि श्री रामचन्द्र की कृपा दृष्टि से फिर भरे के भरे देख पड़ते
 हैं ।

राग जयतश्री—गायें विमल विद्युध वरवानी । भुवन कोटि
 कान्छान कंटु पायो पुन कोसिलारानी ॥ १ ॥ मास पाप

तिथि धार नपत यह योग लगन सुभ ठानी । छल धन
 गगन प्रमन्न साधु मन दमदिसि द्विद्य हुलमानी ॥ २ ॥ वर
 पत मुमन वधाय नगर नभ हरप न जात वपानी । ध्यौ
 हुलास रनिधासनरेमहिं त्यौं जनपद रजधानी ॥ ३ ॥ अमर
 नाग सुनि मनुज सपरिजन विगतविपाद गलानी । मिलिहि
 सांभ रावन रजनीधर लंकसंक अकुलानी ॥ ४ ॥ देवपितर
 गुरुविप्र पूजि नृप दिवेदान कचि जानी । मुनि वनिता पुर-
 नारि सुधासिनि सहसभांति सनमानी ॥ ५ ॥ पाद अधाद
 असीसत निकसत जापकजन भए दानी । यौं प्रसन्न केकई
 सुमिचहिं होहुमहिस भवानी ॥ ६ ॥ दिन दूसरे भूप भामिनि
 दोड भई सुमंगलपानी । भयो सोहिलो सोहिलो मो जनु सधि
 सोहिले सानी ॥ ७ ॥ नाचत गाथत भो मनभावत सुप
 सुषवध अधिकानी । देत लेत पहिरत पहिरावत प्रजा प्रमोद
 अधानी ॥ ८ ॥ गान निसान कोलाहल कीतुक देपत दुनौ
 सिहानी । हरि विरेचि हरपुर सोभाकुलि कोसलपुरी लुभानी ॥
 आनंद अवनिराजरवनी सब मागहु कोपि जुडानी । आसिप
 दैदे सराहहिं सादर उमा रमा ब्रह्मानी ॥ १० ॥ विभवविलास
 वाढि दसरथकी देपि न जिनहिं सोहानी । कीरति कुसल भूति
 जय रिधि सिधि तिन्ह पर सबै कोहानी ॥ ११ ॥ छठी बारहौ
 लोकवेदविधि करि सुविधानविधानी । राम लपन रिपुदमन
 भरत धरे नाम ललित गुरजानी ॥ १२ ॥ सुकृत सुमन तिल
 मोद वासि विधि जतन बंन भरि धानी । सुपसनेह सब
 दियो दसरथहिं परि पल्लव थिर धानी ॥ १३ ॥ अनुदिन
 उदय उकाह उमग जग घरघर अवधकहानी । तुलसी

रामजन्मजस गावत सो समाज उर पानी ॥ १४ ॥ ४ ॥

विबुध देवता कल्याण कंद कल्याण के मूल वा मेघ जायो उत्पन्न कियो ॥ १ ॥ सुभ ठानी शुभस्थानी । जल थल आकाश आ साधुन के मन प्रसन्न होत भयो आ दशो दिशा को हृदय हुलसत भयो । शंका । जलादि प्रसन्न कैसे भए । उत्तर । जल निर्मल भयो पृथ्वी कृपी संपन्न भई, गगन मेघादिरहित भयो, सोई प्रसन्न होना है ॥ २ ॥ जनपद देश राजधानी अयोध्या ॥ ३ ॥ देवता नाग मुनि मनुज परिवार सहित, विपाद गलानि रहित भए आ रावण राक्षसों के मिलेहि माझा अर्थात् फुट बिना लंका शंका तै अकुलात भई 'मिलेहि माझाधि वात विगारी' जैसे यह चौपाई में मिलेहि माझ का अर्थ है तैसे इहां जानना । वा जब देवता आदि विपाद गलान रहित भए सो विपाद गलानादि रावन रजनीचर के माझ मिलेहि ते अर्थात् डेरा किए ते लंका शंका तै अकुलात भई ४।५।६ दूसरे दिन महाराज की दोऊ भामिनी कैकेयी जू सुमितां जू सुमंगल की खानि भई अर्थात् श्री राम जी के दूसरे दिन दशमी को पुण्य नक्षत्र मीन लग्न में श्री भरत जी को प्रादुर्भाव भयो । भरत जी के दूसरे दिन एकादशी को श्लेषा नक्षत्र कर्क लग्न में लक्ष्मण जी शत्रुघ्न जी को प्रादुर्भाव भयो । उत्सव में उत्सव भयो मानो सृष्टि उत्सव में सानी है श्री मद्रामायणे "पुण्येजातस्तु भरतो मीनलग्ने प्रसन्नधीः सार्षे जाती तु सौमित्री कुलीर भ्युदिते रवौ । पाञ्चज्येद्युःपाञ्चजन्यात्मा कैकेय्या भरतोऽभवत् । तदन्येद्युःसुमित्राया मनन्तात्मा च लक्ष्मणः । सुदर्शनात्मा शत्रुघ्नो द्वौ जातौ युगपत्प्रिये ॥" अतएव श्री गोसाईजी छठी तीन दिन में स्पष्ट लिखे त्यों आजुं कालि हूं परों जागर होहिंगे नेवते दिए । शंका । पहिले तेहि अवर सुत तीन प्रगटभए मंगल सुद कल्याण एहि पद में एकै दिन सब भाइन का जन्म जनाए आ इहां तीन दिन में कहे सो कैसे । उत्तर । कल्पांतर करि याको व्यवस्था जानना ॥ ७ ॥ प्रमोद आनंद ॥ ८ ॥ दुनी संसार, कुलि सब ॥ ९ ॥ पृथ्वीपति की रानी आनंदित भई माग कोख ते जुड़ात भई । भाव माग तो पति ते जुड़ानै रह्यो पर पुत्र भए ते कोखिउ करि जुड़ानी वा आनंद की भूमि जे सब महाराज की रानी ते भाम आ कोखि ते जुड़ात भई । रमा उमा ब्रह्मानी

सराहि के को घर भाव कि विश्व के पिता को पुत्र बनाए ताते धन्य ॥ १० ॥ विभव का विस्तार औ बंग की वृद्धि दशरथ महाराज देखि के तिन को न सोहानी निन्द पर यश मंगल ऐश्वर्य जय रिद्धि औ अणिमादिक सिद्धि सर्व कोहानी भाव ए सब ताको त्याग किए ॥ ११ ॥ कृष्ण ज्ञानी विधानी जो श्री बगिछ जू सो छटी औ बरही की लोक वेद विधि को सुंदर विधान नै करि राम लपन रिपुद्वन भरत सुंदर नाम करे । इहां छन्दोनुरोप ते प्रमपूर्वक नाम न लिखे ॥ १२ ॥ पहिले तिल फूल में बासा जात है फेर पेरा जात है तब फुल्ले होत है ताको रूपक कहत हैं ब्रह्मा ने मुकुत रूप सुगंध दार फूल में आनंद रूप तिल को बासि के यन्न रूप फोल्ह में घानी भरि पेरि के मुख रूपी फुलेल दशरथ महाराज को दिए औ खरी औ खलेल कई फोकट जो सो धिरधानी कई देवता तिन को दिए ॥ १३ ॥ प्रति दिन उछाह को उदै औ उमंग है औ जगत में घर घर अयोध्या जी की कहानी है रही है सो समाज उर में आनि के तुलसी रामजन्मयश गावन है । भाव जाते हमारे हृदय में भी उछाह को उमंग उदय होय ॥ १४ ॥ ४ ॥

टिप्पणी—महाराज ने देव पितर गुरु और ब्राह्मणों को पूजि के रुचि जान अर्थात् रुचि अनुकूल दान दिये । मुनिपतनियों को और पुर की नारियों और मुआसिनियों का अनेक प्रकार से सम्मान किया याचकों को इतना दान दिया कि वे लोग आशीर्वाद देते हुए दानी होकर राजद्वार से निकलते हैं अर्थात् इतना अधिक दान मिला और ऐसा आनन्द कि वे लोग भी दानी हो गये । आशीर्वाद में कहते हैं कि हे महेश भवानी ! ऐसेही केकई और मुमित्रा पर प्रसन्न होहु ।

रागवीदारा—अवध बधावने घर घर मंगल साज समाज । सगुन सोहावने मुदित करत सब निज निज काज ॥ छंद ॥ निजकाज सजत संवारि पुर नर नारि रचना अनगनी । गृह अजिर अटनि बजार बीघिन्ह चारुचौके विधिघनी ॥ चामर पताक बितान तोरन कलस दीपावलि वनी । सुष सुकृत सोभामयपुरी विधि सुमति जननी जनु जनी ॥ दो०—चैत

चतुरदश चांदनी, अमल उदित निसिराजु । उडंगन च
 लसी दस दिसि, समगत आनन्द आजु ॥ छंद । आन
 उमगत आजु विबुध विमान विपुल बनायकै । गावत बजा
 मटत हरषत सुमन वरपत आइकै ॥ १ ॥ नर निरधि क
 सुर पेधि पुर छवि परस्पर सजुपाइकै । रघुराज साज सरा
 लोयनलाहु लेत अधाइकै ॥ २ ॥ दो०—जागिय राम हठ
 सजनोरी, रजनी रुचिर निहारि । मंगल मोद मठी मूरति
 जहं नृपबालक चारि ॥ छंद—मूरति मनोहर चारि विरति
 विरंचि परमारथमई । अनुरूप भूपहि जानि पूजन योग विधि
 संकर दई । तिन की छठी मंजुल मठी जगसरस जिन्ह की
 सरसई । किए नींद भामिनि जागरन अभिरामिनी जामिनि
 भई ॥ ३ ॥ दो०—सैवक सजंग भये समय, सुसाधनसहि
 सुजान । मुनिवर गुरु सिषये लौकिक, वैदिक विविधि
 विधान ॥ छंद । वैदिकविधान अनेक लौकिक आचरत सु
 जानिकै । बलिदान पूजा मूलिकामनि साधिराखी आजिकै ।
 जे देव देवी सेइयत हितलागि चितसनमानिकै । ते तंत्रमंत्र
 सिपाइ रायत सबन सो पहिचानिकै ॥ ४ ॥ दो० । सकल
 सुभासिनि गुरजन, पुरजन पाहुने लोग । विबुध बिलासिनि
 सुरमुनि, आपक जो छेहि जोग ॥ छंद । जेहि जोग जे तेहि
 भांति ते पहिराइ परिपूरन किए । ते कहत देत असीस
 तुलसीदास ज्यो हुलसतहिए ॥ ज्यो आजुं कालिहु परंव जागर
 होहि ने बते दिए । ते धन्य पुन्यपयोधि जे तेहिसमै सुपजीवन
 जिए ॥ दो० । भूपतिभागवलो सुरनर, नाग सराहि सिंहाहि ।
 त्रिशवरवेप अखी संपति, सिधियनिगादिक माहि ॥ छंद ।

प्रनिमादि सारद सैखनंदिनि वाल लालहि पालहीं । भरि
जनम जी पाये न ते परितोष उसा रसा लही ॥ निजलोक
विसरे लोकपनि घर कीन चरचा चालहीं । तुलसी तपत
तिहुताप जग जनु प्रभु कठी छाया लही ॥ ६ ॥ ५ ॥

अब छठी लिखत हूं, कवि की उक्ति है । अवध में मंगल साज
समाज औ बधावा घर घर है औ निज निज काज करत सधुन सोहा-
वने होत ताते सब मुदित हैं । पुर नर नारि अगनित रचना संवारि
कै जाको जो काज ताको सजत हैं । गृह आंगन अटारिन बजार औ
गलिन में घनी विधि ते सुंदर चाँकें औ चबंर पताका चंदवा बंदनवार
फलश औ दीपावली बनी है । मुख मुकृत सोभामय पुरी जो श्री
अयोध्या जू तिन को ब्रह्मा जू की सुंदर मति रूपा जननी ने माने
उत्पन्न करी है ॥ अब सखी प्रति सखी की उक्ति है । आज उजेरी
चैत चतुर्दशी को निर्मल अर्थात् धूम मेघ आदि रहित निशिराज कहैं
चन्द्रमा प्रकाशमान हैं औ तारागण की पंक्ति सोभित भई है औ दशो
दिशा में आनंद उमगत है आजु देवता अनेक बिमान बनाय के आनंद
उमगत गावत बजावत नाचत हर्षित होत आय के सुमन बर्षत हैं ॥१॥
नर आकाश देखि औ देवता पुरछवि देखि परस्पर आनंद पाय रघु-
राज को साज सराहि अपाय के लोचन लाभ लेत हैं ॥२॥ री सखी
राम छठी की राति सुंदर निहारि के जागिए । मंगल औ मोद सोई
मंदिर है मंदिर में मूरति रहति है, इहां महाराज के चारों बालक सोई मूर्ति
हैं परमार्थ रूप मनोहर पारि मूर्ति ब्रह्मा सुंदर रचिके ताके अनुरूप
महाराज दी को पूजन योग्य जानि ब्रह्मा शिव मिलि दई तिन की
छठी सुंदर मंदिर में है वा तिन की छठी मंजुल कहैं सुंदर मंदिर है
औ जिन्ह की सरसई करि जगत सरस है सो नौद किए औ भामिनि
जागरन किए ताते रमणीया रात्रि भई वा जिन्ह की सरसई ते जगत
सरस है तिन्ह की छठी रूप सुंदर मदी में आर को को कहैं नौद
रूपा भामिनि भी जागरन किये ताते रमणीया रात्रि भई ॥३॥ सेवक
समय के सुंदर साधनहारि औ साचिब मुजान सब सजग भए तिन के

मुनिवर जे गुरु ते लौकिक वैदिक अनेक प्रकार के विधान
 सब सुनि जानि के अनेक वैदिक लौकिक विधान को आचर
 हैं वलिदान पूजाहंतु औ जदी औ मणि आनि के साधि रा
 हित लागि चित ते सनमानि के जे देव देवी सेइयत है ते देव
 तंत्र मंत्र सबनि सो पहिचानि के सिखाय राखत । पहिचानि के
 को यह भाव कि जेहि देवता में जाकी प्रीति है वा ते देव देवी
 मुनिवरन सो पहिचान करि के अपना २ जंत्र मंत्र सिखाय राख
 सिखाइवे को यह भाव कि जो एहिवार न पूजे जाहिगे तो का
 कोऊ पूजैगो ॥४॥ संपूर्ण सोहागिनि श्रेष्ठवर्ग पुरजुन पाहुन
 विलासिनि कहैं देवपत्नी देवता मुनि औ याचक लोग जो जहि
 के हैं तेहि को तेहि भांति बख भूषणादि पहिराय परिपूर्ण किए
 तुलसीदास को हृदय हुलसत है तैसे हुलसत हिए जय कहत असौ
 देव हैं औ नेवता दिए कि ज्यों आजु जागरन भयो है अर्थात्
 राम की छठी को तैसे काल्ह श्री भरतकी छठी को औ परी श्रीलक्ष्म
 शत्रुघ्न की छठी को जागरन होहिगे, अब गोसाईं जी कहत हैं ते पुन
 हैं औ पुन्य के समुद्र हैं जे तेहि समय में सुखपूर्वक जीवन ते मि
 अर्थात् वहि उत्सव में जे रहे ॥५॥ संपाति कहैं लक्ष्मी औ सिद्धि अणि
 मादि ते स्त्री सखी को श्रेष्ठ वेप करि कमाति हैं अर्थात् दासीपना
 कराति हैं औ अणिमादि सिद्धि औ सरस्वती औ पार्वती श्री बालरा
 को छालत पालत हैं जन्म भरि में जे परितोष न पाए ते परितोष उपा
 रमा लहत भई अर्थात् पुत्र खेलायेवे को सुख न पाए रही सो पारि औ
 इंद्रादिक अपने लोक को भूले, जावे को को कहैं घर की चरचा त
 नहीं चलावत हैं । गोसाईं जी कहत हैं मानो तीनों ताप में तपत संसार
 मसुछठी की छाया पारि है ॥ ६॥५॥

राग जयतश्री—वाजत अवध गहागहे आनंद बधायै ।

नामकरन रघुवरनि के नृप सुदिन सोधाए । माय रजायस
 राय को रिपिराख बोलाए ॥ सिध्य सचिव सेवक सया
 सादर सिरनाए । साधु सुमति समरथ सबै सानंद

हल दल फल मनि मूलिका कुनि काज लिपाए ॥ १ ॥
 गनप गौरि हर पृजिकै गोहृष्ट दुहाए । घर घर मुद मंगल
 महागुनगान सुहाए । तुरित मुदित जहं तहं चले मन के
 भए भाए । सुरपति मामनु घन मनो मारुत मिलिधाए ॥ २ ॥
 गृह पांगन चौहट गली वाजार बनाए । कलस चनर तोरन
 ध्वजा मुबितान तनाए ॥ चित्र चारु चौकै रची लिपि नाम
 जनाए । भरि भरि मरवर वापिका परगजा सनाए ॥ ३ ॥
 नर नारिन्ह पल चारि मै भव साज सजाए । दशरथपुर छवि
 आपनी मुरनगर लजाए ॥ विबुध दिमान बनाइकै आनंदित
 पाए । हरपि सुमन घरपन लगे गये धनु जनु पाए ॥ ४ ॥ वरे
 विप्र चहुं वेद के रयिकुल गुर जानी । आपु वशिष्ठ अथर्वनी
 सहिमा जग जागी ॥ लोकरीति विधिबेद की करि कछौ
 सुवानी । मिनु मनेत धनि बोलिये कौसल्या रानी ॥ ५ ॥
 सुनत मुपासिनि लै चलीं गावत बडभागी । उमा रमा
 सारद सची देपि मुनि अनुरागी । निज निज रुचि वेप
 विरचियौ हिजि मिलि संग लागीं । तेहि थवसर तिहुंलोक
 की मुदसा जनु जागीं ॥ ६ ॥ चारु चौक बैठत भई भूप
 भामिनि सोहैं ॥ गोद मोद मूरति लिये मुकती जन जोहैं ।
 सुप सुपमा कौतुक कला देपि मुनि मुनि मोहैं । सी समाज
 कहै वरनिकै एसो कवि कोहैं ॥ ७ ॥ लगे पठन रचारिचा
 रिपिराज विराजे । गगन सुमन भरि जय जये बहु बाजने
 वाजे ॥ भए अमंगल लंक मै संक संकट गाजे । भुवन चारिदस
 के वडे दुप दारिद भाजे ॥ ८ ॥ बाल विलोकि अथर्वनी

हेनि हरहि 'वनायो । मुम को मुम मोद मोद को रामना
 मुनायो ॥ आन वाल कल कोसिजा दल वरन सुहायो
 हंद ललन आनंद की जेनु बंजुरि पायो ॥ ८ ॥ वोहि वाहि
 वपि जोरि कै करपुट सिर राये । जय जय त्रय कर्नानि
 सादर सुर माये ॥ सत्यसंध सांघे सदा जे आधर आये ॥ प्रनत
 पात पाये सही जे फल पमिताये ॥ १० ॥ भूमिदेव दे
 देपि कै नरदेव सुयारी । वोहि सचिव सेवक सषा पठधारी
 मंडारी ॥ देहु दाहि लेहि चाहिए नन नानि संभारी । कर्म
 देन हिय हरयिकै हेरि हेरि हंकारी ॥ ११ ॥ राम नेवहावरी
 लेन को हठि होत भियारी । बहुरि देत तेहि देपिये मान
 धनधारी ॥ भरतलपनरिपुद्मनहूं धरे नाम विचारी । फल
 दायक फल चारि के दसरय सुतचारी ॥ १२ ॥ भये भूप
 बालकनि के नाम निरुपम नीके । गये सोच संकट मिटे त
 तें पुरती के ॥ सुफल मनोरथ विधि किये सब विधि सबहीके ।
 अब छैहैं गाये मुने सब की तुलसी के ॥ १३ ॥ ६ ॥

कवि की शक्ति । आनंद बधावा अवध में गहागह वाजत है । गहागह
 यह अतुल्य है चारो भाइन के नामकरण के हेतु । महाराज सुंदर दिन
 सोभावत भए । महाराज की आज्ञा पाय थी बसिष्ठ जू के शिष्य औ
 महाराज के मंत्री दास सत्ता बोलवावत भए ते आइ सादर शिर नवाए
 ते सब साधु समर्थ को बसिष्ठ जू आनंद सहित सित्तावत भए । भाव
 वस्तु आने की विधि समुद्रादि जल तुलसी दुर्वा बिल्वादि दल सोपारी
 आदि फल पंच रत्न आदि मणि सतावरी आदि जही और जे संपूर्ण
 राज के वस्तु लिखाइ दिए ॥ १ ॥ गणेश गौरी श्री शिव जी को पूजि
 कै गाइन को दुहाए । घर घर में महा आनंद मंगल औ गुन के गान सुंदर
 ५ । मन के भाए भए ते सचिव सेवकादि जहां वहां हरित हर्षित

चले मानो इंद्र की आज्ञा तें मेघ पवन मिलि करि धाए । २। यह आदि सुगम ।
विचित्र सुंदर चौकें रचि कै नाम लिखि जनावत भए अर्थात् यह चौक
श्री राम की है यह श्री भरतादि भैयन की है औ तलाव बावली में
अरगजा भरि भरि के सनाए ॥ ३ ॥ एतना बड़ा काज सो चारि पल
में नर नारि सब मजाए । दशरथपुर ने अपनी छवि तें इन्द्रलोक को
छजित किए अतएव देवता विमान बनाय के आनंदित आए । भाव
लजीली पुरी में रहना उचित नहीं । हर्षि के फूल वरखन लगे, मानो गए
धन पाए ॥४॥ वशिष्ठ जी ने बरे कहैं नेवता दिए चारो वेद के ब्राह्मणों
को औ आप वशिष्ठ जो अथर्वनी हैं जाकी महिमा जगत जानत है सो
लोकराति औ वेद की विधि करि सुन्दर बानी ते कहे । सिसुइ० सु० ॥५॥
सुनत मात्र सुआसिनी बढि भागिनी गावत ले चली । पार्यती लक्ष्मी
सरस्वती इन्द्रानी स्वरूप देखि गान मुनि कै अनुरागत भई । अपनी २
रचि अनुसार बेख घनाय हिलि मिलि संग लागत भई सेहि अवसर में
तीनों लोक की मानो सुंदर दशा जागी । भाव चौकठ के बाहर होते
सुंदर दसा जागी तो जब घर के बाहर निकसंगे तब क्या जानै क्या
होयगो, बरही के दिन आगन में निकालवे की रीति है ॥ ६ ॥ सुंदर
चाँके में भूपभामिनी बैठत भई गोद में आनंद की मूर्ति लिए सोभत
हैं जेहि मूर्ति कां सुकृतीजन देखत हैं, सुख औ परम शोभा औ कौतुक
की कला देखि मुनि के मुनि मोहत हैं । सो इ० सु० ॥७॥ विराजे शोभे
संक संकट गाजे कहैं संका औ संकट गाजत भए ॥ ८ ॥ बालक को
देखि अथर्वणी ने शिव को जनायो जो भुभ को भुस मोद को मोद राम
नाम है, सो हंसि के सुनायो माता पिता आदि को सुनायो, हंसने को
यह भाव कि, इन का नित्य नापें जो है, ताको अब धरत हों । पाधे-
“श्रियः कमलवासिन्प्याः रमणोज्यं यतो हरिः । तस्मात् श्रीराम इत्यस्य
नाम सिद्धं पुरातनम् ॥ सहस्रनामसदृशं स्मरणान्मुक्तिबं नृणाम् ॥ ”
वशिष्ठ को अथर्वनी रघुवंश में भी लिखा है । “अथार्वनिधेस्तस्य विजि-
तारिपुरः पुरः । अर्ध्यामर्धपाति वाच माददे वदतां वरः ॥ ” अथर्वनी
कहिवे ते, पुरोहित कृत्य के ज्ञाता जनाये, तथा च कामन्दके—“व्रण्यां
च दण्डनीत्यां च कुशलः स्यात्पुरोहितः । अथर्वविदिनं कुर्यां चित्तं प्राप्ति-

कंपौष्टिकम् ॥” तीनों वेद में, औ राजनीति में, प्रवीन होय, सो पुरोहित
 अथर्वण वेद करि विहित शान्तिक पाण्डिक कर्म करै। थाल्हा रूप सुंदर श्री
 कौशल्या जू हैं, तिन में सकल आनंद को मूल, मानो अंकुर आयो है।
 इहां अंकुर के स्थान में बाल श्री राम हैं, अंकुर ते दुइ दल निकसत हैं,
 सो इहां राम नाग के सुंदर दोऊ अक्षर हैं ॥९॥ श्री रामजी को देखि के,
 औ वशिष्ठ जी के कहिये ते, नाम जानि के ताको जपि कै ब्रह्मपुट जोरि
 सिर पर राखे, अर्थात् प्रणाम किए, हे करुणानिधे, हे सत्यसंध, हे प्रण-
 तपाल, आप की जय होय जय होय, आदर सहित देवता भांषे, आप जे
 आपर आपे कहैं, कहे अर्थात् “जनिं डरपहु मुनि सिद्ध सुरेसा। तुमहि
 लागि धरिहौं नरवेसा ॥” इत्यादि ते सदा सांचे, जे फल अभिलाषे रहे
 ते ठीक पाए, अर्थात् आप के अवतार के अभिलाषे रहे सो पाए ॥१०॥
 ब्राह्मण औ देवतन को देखि कै सुखी जोनरदेव सो संचिन सेवक
 सखापटधारी बखन के अधिकारी, औ भंडारी अन्नादिक के अधिकारी
 घोलाय के आग्रा दिए ॥ ११ ॥ धनधारी कुबेर ॥ १२ ॥ भूप के
 बालकन के उपमा रहित नीके नाम भए, तब ते पुरातियन के सोच गये,
 ओ संकट मिटे, भाव सूतिकाग्रह में अनेक विघ्न को भय रहत है, औ
 स्त्रियन को भीरु सुभाव भी होत है, ताते डरी रहीं सो घरही कुशलपूर्वक
 समाप्ति भई, ताते सोच गयो, या शुभ को शुभ मोद को मोद राम नाम
 मुनि सोच रहित भई ॥ १३ ॥ ६ ॥

राम बिलायल—सुभग सेव सोइति कौसल्या रुचिर
 राम सिमु गोद लिये। बार बार विधु बदन विलोकति
 लोचन चारु चकोर किये ॥ १ ॥ कबहुं पौंठि पय पानं
 करायति कबहुं रापति लाय दिये। बालकलि गावति हल-
 रावति पुलकित प्रेम पियूष पिये ॥ २ ॥ विधि महेस मुनि
 सुर सिंहात सब देपत चंबुद ओट दिये। तुलसिदास ऐसी
 रुप रघुपति पै क्हाछूं तो पायो न विये ॥ ३ ॥ ७ ॥

कवि की उक्ति। विष्णु चंद्र ॥१॥ श्री राम प्रेम रूप अमृत को पिए,

तो श्री कौमल्या जू ने चाल्नीला के पद गावनि, औ श्री रघुनाथ को हाथ पर गुलाबनि, औ रामांचिन टॉनि हैं, भाव हर्ष ते ॥ २ ॥ बादर के अंड देठ देखिने को यह भाव कि, मलय होय दृग्निने ते माता हम लोंगों के ओर दृष्टि करैगी, तो यह मुख जान रहैगो, ऐसा मुख रघुपति से बिये कहैं, दुमरे ने न पायो ॥ ३ ॥ ७ ॥

राग सौमठ — छैछो लाल कवहिं बडे बलि कैया । राम लपन भावते भरत रिपुदहन चारु चाख्यो भैया ॥ १ ॥ घाण विभूषन बसन मनोहर अंगनि विरचि बनैहीं । सीमा निरपि निछावरि करि उरलाय वारने जैहीं ॥ २ ॥ छगन मगन अगना पेलिही मिलि ठुमुकि ठुमुकि कव धैहीं । कलवल वचन तोतरे मंजुल कहि मा मोहि बुलैहीं ॥ ३ ॥ पुरजन सचिव राउ रानी सब सेवक सपा महेली ॥ लैहै लोचनहाइ सुफल लपि ललित मनोरघ बिलौ ॥ ४ ॥ जो सुप को कालसा छटू सिव सुख सनकादि उदासी । तुलसी तेहि सुप सिम्बु योसिला मगन पै प्रेम पिपासी ॥ ५ ॥ ८ ॥

मैया बलिजाय, हे लाल, कव बड़े है हो। भाषते कहैं सोहाते ॥ १ ॥ बाल विभूषन कटुला जामे बजर बट्ट वधनहा आदि रहत है, औरो पदिक हारादि अनेक, औ बसन झिगुलिया चौतनी आदि मन के हरैया अंगन में विरचि के बनावोंगी, वा अंगनि को भी विशेष रचि धमै हों भाव चोटी गांठि उघटि टिठौना आदि है शोभा देखि नेयछावर करि उरलाय फिरि आप नेयछावरि होय जैहो ॥ २ ॥ छगनमगन एक खेल विशेष है, कल बल जो बुद्धि के बहुत कला औ बल से बुझाय तोतरे ओंभ और के और कहे सोई स्पष्ट करत हैं, कहि मा मोहि बुलै हो अर्थात् माय स्पष्ट न कहि मा कहि बोलैहो ॥ ३ ॥ पुरजन सचिव आदि सुंदर मनोरथ रूप लता में सुंदर फल देखि लोचन लाहु लेहैं हैं, इहां सचिव पद से आठो मंत्री जानना, चाल्मीकीये—

“ धृष्टि र्जयंतो विजयः सुराष्ट्रो राष्ट्रवर्द्धनः । अशोको धर्मपालश्च
सुमंत्रश्चाष्टमो महान् ” ॥४॥ लालसा मे लट् है, भाव जैसे एक ठांव घूमत
घूमत लट् अचल रहत ॥ ५ ॥ ८ ॥

पञ्चनि कव चलिहो चारो भैया । प्रेम पुलकि उर लाइ
सुभन सब कहत सुमित्रा भैया ॥ १ ॥ सुंदरतन सिसुवसन
विभूषन नय सिध निरधि निकैया । दलिचिन प्रान नेछावरि
करि करि लैहै मातु वलैया ॥ २ ॥ किलकनि नटनि चलनि
चितवनि भजि मिलनि मनोहर तैया । मनिपंभनि प्रतिविंब
भलकछवि छलकिहि भरि अंगनैया ॥ ३ ॥ बाल विनोद
मोद मंचुल विधु लीला ललित जुन्हैया । भूपति पुन्य पयोधि
उमगि घर घर आनंद वधैया ॥ ४ ॥ हूँ हैं सकल सुकृत
सुप भाजन लोचन लाहु लुटैया । अनायास पाइ हैं जनम-
फल तोतरै वचन सुनैया ॥ ५ ॥ भरत राम रिपुदमन लपने के
चरित सरित चन्हवैया । तुलसी तब के से अजहुं जानिबै
रघुवर नगर बसैया ॥ ६ ॥ ८ ॥

निकैया सुंदरई । तुन तोरिबे को यह भाव कि अपनी नजर न
लगे ॥२॥ नरनि नाचनि भजि मिलनि भागि के मिलना मणिखंभनि
में जो प्रतिविंब परेंगे तिन की छवि की झलक भरि अंगनाई छलकिहि,
भाव प्रतिविंब का प्रतिविंब भरि अंगनाई परिदि वा अवहीं जो घर में
रहिवे ते मणि खंभनि में प्रतिविंब के झलक की छवि है, सो जब बाहर
खेलिई, तब भरि अंगनाई झलकिहि, भाव आंगन भरि बालक बालक
देखि परेंगे ॥ ३ ॥ चारो भैयन के लरिकखेल जो आनंद, सो चन्द्रमा
औ सुंदर खेलमा जो है, सो तेहि चंद की चांदनी, तेहि चन्द प्रकाश
युक्त को देखि के पुण्य के समुद्र जे भूपाति ते उमगिहैं, जब समुद्र
उमगत है, तब चन्द करत है, इहां घर घर में आनंद ने जो वधाई

तोना है, सो शब्द है ॥ ४ ॥ तोतरे वचन के सुननहारे वेपरिश्रम जन्म
क फल को पावेंगे, भाव वेद वेदांत के श्रवण मनन निदिध्यासन बिना
जन्म को फल अर्थात् मोक्ष पावेंगे, इहां माधुर्यपक्ष में स्पष्ट है ॥ ५ ॥
श्री गोसांई जी कहत हैं, भरत राम रिपुदवन लपन के चरित्र रूपी
नदी के स्नान करैया जे हैं तिन को तब के सरिस अबो रघुवरनगर
वसैया जानना ॥ ६ ॥ ६ ॥

राग कीदार—चुपरि उवटि अन्हवाय कौ नयन चांजिरचि
रुचि तिलक गोरोचन को कियो है । भू पर अनूप मसिबिंदु
वारे वारे वार विलसत सीसपर डेरिहरै दियो है ॥ १ ॥ मोद
भरि गोदलिये छालति सुमित्रा देपि देव कहैं सबको सुकृत
उपवियो है । मातु पितु प्रिय परिजन पुरजन धन्य पुन्यपुंज
पेपि पेपि प्रेम रसपियो है ॥ २ ॥ लोहित ललित लघु चरन
कर कमल चाल चाहि सो छवि सुकवि जियजियो है । बाल
कैलि वातवस भलकि भलमलत सोभा की दीयटि मानो
रूपदीप दियो है ॥ ३ ॥ राम सिसु सानुज चरित चारु गाय
सुनि सुजननि सादर जनमलाहु लियो है । तुलसी विद्याद्व
दसरथ दसचारिपुर जैसे सुप योग विधि विरच्यो न वियो
है ॥ ४ ॥ १० ॥

उवटन लगाय तेल चुपरि नहवाय के नेत्र में काजर दिये औ रुचि
पूर्वक रचि कै गोरोचन को तिलक कियो औ भौंह पर उपमा रहित
स्याम बिंदु दियो, अर्थात् टिठौना औ छोटे छोटे थार सिर पर शोभित
हैं, देखे से हृदय हरि लेत हैं ॥ १ ॥ आनंद में भरि कै गोद में जिये
सुमित्रा जू को दुलारत देसि देयता कहत हैं, कि सब को छुटन उदै
भयो है, औ माता पिता प्रिय परिवार के जन औ पुरजन धन्य औ
पुन्य के पुंज हैं, फाहे ते कि देखि देखि के प्रेम रस को पी जियो हैं ॥ २ ॥
गुंदर छाल छोटे २ चरन औ कर कमल का चाल कहैं चलावना जो

सो छावि देखि कै सुंदर कवि को जीव जी उठ्यो है, इहां चाल शब्द ने हाथ पैर का चलावना लेना क्योंकि वंकड़ों चला अयहीं आगे करे मानो सोभा रूप दीवट पर रूप रूपी दीया धर्यो है सो बाल के रूप वायु के वस झलकि के झलमलात है ॥ ३ ॥ गोसाईं जी कहत है कि चौदहो भुवन में ऐसे सुख के योग्य महाराज दशरथ को छोड़ि के ब्रह्मा ने दूसरे को नहीं बनायो है ॥ ४ ॥ १० ॥

राम सिसु गोद महामोद भरे दशरथ कोसिलहु ललकि लखन लाल लिये हैं । भरत सुमित्रा लये कैकई सनुसमत तन प्रेम पुलकि मगन मन भये हैं ॥ १ ॥ मेढी लटकन मति कनक रचित बाल भूपन बनाइ आछे अंग अंग ठये हैं । चाहि चुचुकारि चूबि लालत लावत उर तैसी फल पावत जैसे सुखीज बये हैं ॥ २ ॥ घन छोट विबुध बिलोकि वरधत फूल अनुकूल वचन कहत नेह नये हैं । ऐसे पितु मातु पूत पुर परिजन विधि जानियत आयुभरि एई निरमये हैं ॥ ३ ॥ अजर अमर होहु करो हरि हर छोहु जरठ जठरिन्ह आसिर्वाद दिये हैं । तुलसी सराहे भाग तिन्ह के निन्ह हिये डिंभ राम रूप अनुराग रंग रये हैं ॥ ४ ॥ ११ ॥

बालराम गोद में हैं, ताते दशरथ महाराज महामोद में भरे हैं औ श्री कौसल्या जू भी ललकि कै लपन लाल को लिये हैं, भरत जू को भी सुमित्रा जू औ शत्रुहन जू को कैकई जू लिये हैं, प्रेम तें तन पुलकि करि कै सब के मन मगन भये हैं ॥ १ ॥ बालपर के बाल कों चोटी सरिस दूनो ओर से गूँथि के पीछे के ओर ले जात हैं, ताको मेढी कहत हैं, तीमे लटकने लटकत हैं, और मणि सोना ते रचित, अर्थात् जड़ाऊ बाल समयके भूपन आछे बनाय के अंग अंग में ठाने हैं, अर्थात् पहिराये हैं, देखि चुचुकारि गुमि के दुलारन, औ हृदय में लगावत हैं तैसे फल पावन नित सुंदर बीज बोए हैं, इहां सुंदर बीज सुंदर फल

हैं ॥ २ ॥ मेघ के ओट ने देवता देवि के फूल वर्षत हैं औ नये नेह
से अनुकूल वचन कहत हैं वा नेह से देव नम्र हैं गए हैं वा अनुकूल
वचन कहत हैं कि इन के नेह नयीन हैं अर्थात् अस न देखे । पिता माता
नगर परिचय को जानियत हैं कि विधाता आयुष भरि में ऐसे इनहीं
को बनाए हैं ॥ ३ ॥ जरठ जगेरिन्ह गूढ़ औ घृद्धिया डिंभ बालक रये
रंगे ॥ ४ ॥ ११ ॥

राग प्रभाधरी—आशु अनरसे हैं भोर के पय पियत न
नीके । रहत न बैठे ठाठे पालने भूलराहु रोअत राम मेरो सो
सोचु सबझो के ॥ १ ॥ देव पितर यह पुजिअे तुला तौलिअे
घी के । तदपि कबहु कबहु के सपी ऐसही अरत जब
परत दृष्ट दुष्ट ती के ॥ २ ॥ बेगि बोलि कुलगुरु कुश्रै माथे
हाथ अमीके । सुनत आइ रिपि कुसहरे नरसिंहमंत्र पठि
जो सुमिरत भय भी के ॥ ३ ॥ जामु नाम सर्वस सदा सिव
पारवती के । ताहि भरावति कौसिला यह रीति प्रीति की
हिय हुलसति तुलसी के ॥ ४ ॥ १२ ॥

अनरसे हैं खनमनाए हैं ॥ १ ॥ घृत को तुला दान सुख कारक
रोगहारकह, अरत छेलात ॥ २ ॥ शीघ्र बोलाइये कुलगुरु को कि
माथ को अमृत रूप हाथ ते कुश्रें सुनत मात्र में ऋषि आय के नरसिंह
मंत्र जो सुमिरत भय को भय होत सो पढ़ि के कुशहरे कुश ते मार्जन
किये ॥ ३ ॥ १२ ॥

माथे हाथ जब दियो ऋषि राम किलकन लागे । सहि-
मा समुझि लीला विलोकि गुरु सजल नयन तन पुलकि
रोम रोम लागे ॥ १ ॥ लिये गोद धाएं गोद ते मोद मुनि मन
अनुरागे । निरधि मातु हरषीं हिये थाली थोट कहति मृदु-
वचन प्रेम कीसे प्रागे ॥ २ ॥ तुम सुरतरु रघुवंस के देत अभि-

मत भागे। मेरे विसेषगति रावरी तुलसी प्रसाद जाके सकल
अमंगल भागे ॥ ३ ॥ १३ ॥

माता के गोद तें घाए तब मुनि गोद में लिए औ हर्ष ते
मुनि मन में अनुरागे ॥ २ ॥ छुरतह कल्पवृक्ष, अभिमत बांछित
फल ॥ ३ ॥ १३ ॥

अमिअ विलोकनि करि कृपा मुनिवर जब जोए। तब ते
राम अरु भरत लपन रिपुदमन सुमुपि सधि सवाल सुअन
सुपसोये ॥ १ ॥ लाय सुमित्रा लिए छिए फनिमनि ज्यो
गोए। तुलसी नेवछावरि करति मातु अतिप्रेममगन मन
सजल सुलोचनकोए ॥ २ ॥ १४ ॥

अपिय विलोकनि अमृत दृष्टि जोए देखे ॥ १ ॥ सुमित्रा जू हृदय
में लगाय लिए जैसे सर्प मणि को छपावत कोय कहैं कोर ॥ २ ॥ १४ ॥

मातु सकल कुलगुरुवधू प्रियसखी सुहाई। सादर सब
मंगल किए महि मनि महेस पर सबनि सुधेनु दुहाई ॥ १ ॥
बोली भूपभूसुर लिये अति विनय बडाई। पूजि पायं सनमानि
दानदिये लहि असौस मुनि वरपैं सुमन सुरसाई ॥ २ ॥
घरघर पुर बाजन लगे आनंदबधाई। सुध सनेह तेहि समय
को तुलसी जानै जाको चोरो है चित चहुंभाई ॥ ३ ॥ १५ ॥

सकल माता कुलगुरु वधू अरुंधती औ सुंदर प्रिय सखी आद
सहित मंगल किए। भूमि में जो मणि कहैं श्रेष्ठ महेश तिन पै वा महिम्
स्तोत्र ते सबनि ने सुंदर धेनु दुहाई। अयोध्या खंड में क्षीरेश्वर महादेव
पर दूधदुहावना लिखा है ॥ १ ॥ ब्राह्मणों को महाराज बोलाय लिए
अति विनय बडाई ते पाय पूजि सनमानिके दान दिए तब आसीन
पाय सो मुनि के देवतन के स्वामी फूल वर्षत भए ॥ २ ॥ ३ ॥ १५ ॥

राग घनाश्री—या सिंसु के गुन नाम बडाई । कीकहि
 यकै सुनहु नरपति श्रीपतिसमान प्रभुताई ॥ १ ॥ यद्यपि
 अधि वय रूप शील गुन समै चारु चाखौ भाई । तदपि लोक
 तोचन चकोर ससि राम भगत सुषदाई ॥ २ ॥ सुर नर मुनि
 करि अभय दनुजहति हरिहि धरनि गरुआई । कीरति विमल
 विश्वषध मोचनि रहिहि सकल जगछाई ॥ ३ ॥ या की चरन
 सरोज कपटतनि जो भजिहै मनलाई । सो कुल जुगल-
 सहित तरि है भव एह न कछू अधिकारी ॥ ४ ॥ सुनि गुरुवचन
 पुलकितन दंपति हरप न हृदय समाई । तुलसिदास अव-
 लोकि मातुमुष प्रभुसन में मुसुकाई ॥ ५ ॥ १६ ॥

समै बराबर ॥ ५ ॥ १६ ॥

टिप्पणी—राक्षसों को मार कर सुर नर मुनि को अभय करेंगे ।
 और पृथ्वी की गरुआई कहें बोल उतारेंगे, सो अब पाप को हरनेवाली
 विमल कीर्ति संसार में छाये रहेगी ॥ १६ ॥

राग बिलावल—अवध आज्ञा आगमी एक आयो । कर-
 तल निरपि कहत सबगुनगन बहुतनि परिचो पायो ॥ १ ॥
 बूढो बडो प्रमानिक ब्राह्मण संकर नाम मुहायो । संग सिंसु
 सिष्य सुनत कौसिल्या भीतर भवन बुलायो ॥ २ ॥ पाय-
 पपारि पुनि दयो आसन असन वसन पहिरायो । मेले चरन
 चारु चारों सुत भाये दाय दिवायो ॥ ३ ॥ नयसिष्य बाल बिलोकि
 बिप्र तनु पुलक नयन जल छायो । लैलै गोद कमल कर नि-
 रपत उरप्रमोद अनमायो ॥ ४ ॥ जग प्रसंग कछो कौसिक
 मिसि सोयस्त्रयंवर गायो । राम भरत रिपुदमन लपन को
 जय सुष सुजन सुनायो ॥ ५ ॥ तुलसिदास रनिवास रहस्य

भयो सब को मन भायो । सनमान्यौ महिदेव असौसत सा-
नंद सदन सिधायो ॥ ६ ॥ १७ ॥

शिव जी जोतपी बनि कै रांग में सुंदर शिष्य कागि भंशुड जी के
धनाय कै इष्ट दर्शन हेतु आए हैं । उर प्रमोद अनमायो हृदय में आनंद
नहीं अमात है ॥ १७ ॥

टिप्पणी—आगम जानने वाले को आगमी अर्थात् ज्योतपी कहते
हैं । करतल तलहथी । परिचो परिचय अर्थात् शिवरूपी ज्योतिपी जी
ने जिन २ को जैसा फल कहा सो सच देख पड़ा । शिव जी बार बार
राम जी को गोद में ले कर कमल समान कर देख देख कर इतने
प्रसन्न हुए कि हृदय में आनन्द नहीं अंटा अर्थात् आनन्द हृदय से
उमड़ गया ॥ १७ ॥

राग केदार—पौष्टिये लाल पालने हैं, भुलावैं । कर
पद मुख चप कमल लसत लषि लोचन भंवर भुलावैं ॥ १ ॥
बालविनोद मोद मंजुल मनि किलंकनि धानि पुलावैं । तेह
अनुराग ताग गुहिये कहूं मति मृगनयनि बुलावैं ॥ २ ॥ तुलसी
भनित भली भामिनि उर सो पहिराइ फुलावैं । चारु चरित
रघुवर तेरे तेहि मिलि गाइ चरण चित लावैं ॥ ३ ॥ १८ ॥

हे लाल पालने पौष्टिये हम बुलावैं । कर पद मुख नेत्र रूप कमल
शोभित देखि कै अपने नेत्र रूप भ्रमर को बुलावैं ॥ १ ॥ बालक्रीड़ा
को आनंद सोई सुन्दर मणि है । मणि खानि ते निकसत है सो कहत
हैं कि किलंकनि रूपी खानि से बुलावैं अर्थात् प्रगटावैं तेहि मणि को
अनुराग रूपी धागा में गुहिये को मति खेपी मृगनयनी अर्थात् पट्टहारिनी
को बुलाय लेउ ॥ २ ॥ गौसाई जी कहत हैं कि भनित भली रूपी
भामिनी के उर में सो मणि का डार पहिराय के फुलावैं अर्थात् आनं-
दित करें । हे रघुवर तेरे सुन्दर चरित्र को तेहि भनित रूपी भामिनी के
रांग मिलि गाइके चरण में चित लगानों ॥ ३ ॥ १८ ॥

सोइए लाल लाडिलेरधुराई । मगनमोद लिए मोद-
 रुमिवा बारवार बलिजाई ॥ १ ॥ हंसै हंसत अनरसे अनरसत
 प्रतिबिंबनि ज्यों भाई । तुम्ह सब के जीवन के जीवन सकल
 सुसंगलदाई ॥ २ ॥ मूलमूल मुरवीधि बेलि तमतोम सुदल
 अधिकाई । नपत मुमन नभ बिटप धोडि मानो छपा छिटकि
 छविछाई ॥ ३ ॥ हौ जभांत अलसात तात तेरी बानि जानि
 मै पाई । गाइ गाइ हलराइ बोलिहौं सुघनीदरौ सुघाई ॥ ४ ॥
 याछरु छवीले छौना छगन मगन मेरे कहति मल्हाइ मल्हाई ।
 सानुजहिय हुलसति तुलसी के प्रभु कि ललित लरिकारै ॥ ५ ॥ १८

हंसिये ते हंसत हैं औ उदास होवे ते उदास होत है बिंबनि प्रति
 जैसे परिछाहीं । तुम सब के जीवन के जीवन औ सब सुसंगल देनिहार
 हो ॥ २ ॥ मूल मूल नक्षत्र है मुरवीधी लता है औ तमसमूह सुंदर
 दलों की अधिकाई हैं औ नक्षत्र कहें तारागण फूल हैं सो आकाश रूप
 वृक्ष पर छिटकि औ धोडि कहें कैलि के मानो रीति छवि छाई है । मूल
 लिखिये को यह भाव कि जड़ में एक मुसरा रहत है तमैं महीन महीन
 बहुत सोर रहत है । मूल नक्षत्र के ग्यारह तारे हैं तेहि में से एक मुसरा
 के स्थान है आ दस महीन महीन सोरों के हैं ॥ ३ ॥ हे तात अलसात
 जम्हात हौ, तुम्हारी बान हम जान पाई, भाव जब अस करत हौ तब
 सोभत हौ हाथ पैर हिलाय गाय गाय मुखनिंदिया को बोलैहौं ॥ ४ ॥
 मल्हाई मल्हाई रमिआय रमिआय ॥ ५ ॥ १९ ॥

ललनलोने लैरुआ बनि मैआ । सप सोइअ नीडवेरिआ
 भद्र चारु चरित चारुऔ भद्रआ ॥ १ ॥ कहति मल्हाइ लाइ
 उर छनछन छगन छवीले छोटे छैआ । मोदकंद बालकुमुदचंद
 मेरे रामचंद्र रघुरैआ ॥ २ ॥ रघुवरबाल कैलि संतन की
 सुभग सुभद सुरगैआ । तुलसी दुहि पीवत सुपन्नोवत पयसुपे-
 मघनोवैया ॥ ३ ॥ २० ॥

लेहआ धरारा चारु चरित सुंदर है चरित्र जेठि के ॥ १ ॥ छेपा
बालक मोद कंद आनंद के मूल औ कुल रूप कुमुद के चंद्रमा ॥ २ ॥
रघुवर की बालकेलि संतन की सुंदर शुभ देनिहारी कामधेनु है । तेहि
कामधेनु ते सुंदर प्रेम रूप दूध जामे घना घीव है ताको तुलसी दुहि कै
पीवत है ताते मुखपुत जीवत है ॥ ३ ॥ २० ॥

सुपनीद कहति बालि पाइहैं । रामलपन रिपुदमन
भरत सिसु करि सबसुमुप सोपाइहैं ॥ १ ॥ रोवनि धोवनि
अनपानि अनरसनि छीठि मूठि निठुर नसाइहैं । हंसनि
पेलनि किलकनि आनंदनि भूपतिभवन बसाइहैं ॥ २ ॥ गोद
विनोद मोदमय मूरति हरषि हरषि हलराइहैं । तनु तिल
तिलकरि बारि राम पर लैहैं रोगबलाइ हैं ॥ ३ ॥ रानी राज
सहित सुत, परिजन निरषि नयनफल पाइहैं । चारु चरित
रघुवंसतिलक के तहं तुलसिहि मिलि गाइहैं ॥ ४ ॥ २१ ॥

अब माता फुसिलावति हैं कि सुखनीद कहति है कि हे आली मैं
आइ हौं, सुमुख प्रसन्न ॥ १ ॥ रोअनि धोआनि रुठि है रोइवे के अर्थ
मैं अनखानि खनमनानि, अनरसनि उदासीनता, दीठि नजर, मूठि दोनों
ताको निठुरता ते नसाओंगी । भाव दया न करोंगी वा ए सब जो निठुर
तिन्ह को नसाओंगी भूपति भवन बसाइवे को यह भाव कि जब बालक
सुखपूर्वक सोअत है तब उठे पर आनंदपूर्वक खेलत है ॥ २ ॥ क्रीड़ा
औ आनंदमय मूरति को गोद में लै कै हरखि हरखि के हलराओंगी
तन को तिल तिल करि कै श्री राम पर नेवछावरि करि रोग बलाय हम
लै हों ॥ ३ ॥ रानी राजा को पुत्र परिवार समेत देखि कै नैननि को
फल पाओंगी सुंदर चरित रघुवंसतिलक के तहां तुलसी के संग मिलि
गाओंगी ॥ ४ ॥ २१ ॥

राग असावरी—कनक रतनमय पालनो रच्यो मनहुं
मारसुतहार । विविध पेलौना किंकिनी लागे मंजुल मुक्ताहार ।

रघुनन्दन भेंटन रामलला ॥ १ ॥ इननी उवटि अरुवाइकै
 मनिभूपन मजि नियो गोइ । पौटाये पटुपायने सिसु निरपि
 मगन मनमोइ ॥ दमरयनंदन रामलला ॥ २ ॥ मदनमोर
 की चंद्रिका भलकनि निदरति तनजोति । नोन कमल मनि
 जलद की उपमा कहे लघमति होति ॥ मातु सुकृतफल
 रामलला ॥ ३ ॥ लघु लघु लोहित ललित है पद पानि अधर
 एकरंग । को कवि जो छवि कहि सकै नयमिय सुन्दर सब
 अंग ॥ परिजनरंजन रामलला ॥ ४ ॥ पगनूपर कटि किं-
 किनी करकंजन पहुंची मंजु । छिय हरिनय अद्भुत बन्यौ
 मानो मनमिज मनिगनगंजु । पुरजनसुरमनि रामलला ॥ ५ ॥
 लोचन नीलसरोज से भूपर ममिधिंदु विराज । जनु विधुमु-
 पछवि अमिष कोरछक राम्यो रसरज ॥ सोभासागर राम-
 लला ॥ ६ ॥ गभुपारी अलकायली लसे लटकन ललित
 ललाट । जनु उड़गन विधु मिलन को चले राम विदारि करि
 याट ॥ सखसुहायन रामलला ॥ ७ ॥ दैपि पेलवगा किलकहिं
 पद पानि विलोचन लोल । विचित्र बिहंग अलि जलज ज्यों
 सुपमासर करत यलोल ॥ भक्तकल्पतरु रामलला ॥ ८ ॥ बाल
 बोलि विनु अरथ की सुनि देत पदारथ चारि । जनु इन
 वचनन्हि ते भये सुरतरु तापस त्रिपुरारि ॥ नाम कामधुक
 रामलला ॥ ९ ॥ सपी सुमित्रा वारहीं मनिभूपन वसन वि-
 भाग । मधुर भुलाइ मल्लावई गावै उमगि उमगि अनुराग ।
 है जग मंगल रामलला ॥ १० ॥ मोती जायो सीप में अरु
 अदिति जन्यो जग भानु । रघुपति जायो कौसिला गुन
 मंगल रूप निधानु । भुषनविभूषन रामलला ॥ ११ ॥ राम

सागर रामलला के नेत्र नील कमल सम हैं औ भौंह पर काजर
 को बिंदु सोभत है सो मानो काजर को बिंदु नहीं है शृंगार रस है
 ताको मुख चंद्र के छवि रूप अमृत को रक्षक राख्यो है ॥ ६ ॥ सहज
 सोहावन रामलला के गधुवारी अलकावली औ सुंदर लटकन ललाट
 पर लसत है मानो चंद्रमा के मिलन को तारागन तम बिदारि राह करि
 चले । इहां लटकन उदगन हैं मुख शशि है तम अलकावली है दूनो तरफ
 बाल अलगाए ते जो लकीर है गई है सो राह है ॥ ७ ॥ भक्तकल्पतरु
 राम लला जो हैं सो खेलवना देखि कै किलकत हैं पग हाथ नेत्र चंचल
 है मानो विचित्र पक्षी भ्रमर औ कमल परम सोभा रूप सर में कलोल
 करत हैं इहां विचित्र बिहंग बालकन के पग में महावराद से चिरई
 लिखी जाति है सो है नेत्र भ्रमर कर कमल है ज्यों का मानो अर्थ किया
 है सो भी होत है । कुवलयानंदे “मन्ये शंके भुवंमापोनूनमित्येवमादिभिः ।
 उत्प्रेक्षा व्यज्यते शब्दैरिवशब्दोऽपितादृशः ॥” ज्यों इवपर्याय है ॥ ८ ॥ नाम
 फामधेनु है जोहि के तेहि रामलला के बिनु अर्थ के बालबचन जो सो मुने
 से चारो पदार्थ देत है भाव आप तो बे अर्थ को है औ सब अर्थ देत
 है वा बाल बोल बिनु अर्थ को जो है ताको मुनि के मुनैया चारो फल
 देखे को समर्थ होत है मानो इन बचनन ते भए हैं कल्पवृक्ष औ तपस्वी
 औ शिव जी भाव देखिवे में बेअर्थ के एऊ हैं पर सब अर्थ देत हैं । सो
 क्यों न होहि कारण को गुन कार्य में रहतही है ॥ ९ ॥ जगमंगल
 जो रामलला हैं तिन को सखी औ सुमित्रा जू मणिभूषण बसन पृथक २
 नेवछावर करत हैं धीरे २ गुलाब अनुराग ते उमगि २ रगिभाष गावत
 हैं ॥ १० ॥ मोती सीप में जन्म्यो औ जगत में अदिति ने मानु को
 जन्मायो औ गुन मंगल मोद के पात्र रघुकुल के पति औ सुवन के
 विशेष भूषण करनेवाले रामलला को कौशलप्याजू उत्पन्न किये ॥ ११ ॥
 श्री राम प्रगट जब ते भए तब ते सब अमंगल के मूल गए मित्र आनं-
 दित औ दित कोई नातेदार उदय के प्राप्त भए हैं और बैरिन के उर
 में नित ही शूल है सो क्यों न होय भव भय के भंजनहार रामलला
 हैं ॥ १२ ॥ रिपुगनगंजन रामलला जो हैं सो अनुज सखा मिमू
 रंग लै के जब चांगान खेलन जैं जयापि जोहि दंडा से गेंदा तेखा

जात है ताको चौगान कहत हैं पर इस खेल का भी नाम चौगान है।
लंका में सरभर औ गुरपुर में नगरा बाजिये को यह भाव कि बान
फाल में इतनी फुरती है तो आगे क्या जान कैसी होयगी ॥१३॥ जो
श्रीराम दायी रथ घोड़ा संचारि सिकार का चलेंगे तब दगकंधर के
घर में धकधकी होयगी कि अब इस भी धनुषारन करि के जनि दौड़े
सो क्यों न होय, अरि रूपी दायी के सिंह रामलला हैं ॥१४॥ मुनि
औ सखिन के गीत अनुकूल सुर मुनि मुनि के असीस देइ जय जय
कहत हर्षत हैं औ फूल बर्षत हैं सो क्यों न सुखी हों। ई सुरन के सुत
दायक रामलला हैं। अनुकूल गीत को यह भाव कि जिस चाहत रहे तस
गीतो में सुनत हैं ॥१५॥ तुलसीजीवन रामलला जो हैं सो यह पौद्ग-
कलानिधान बालचरितमय चंद्रमा है वा तुलसी के जीवन जे रामलला
हैं तिन के पौद्गकलानिधान बालचरित्रमय जो यह चंद्रमा है ताको
तुलसी अपने चित्त को चकोर कियो सो प्रेम रूपी जो अमृत रस
ताको पान करत है। चंद्रमा के पौद्ग कला अमृतादि है तेहि के अनु-
सार रघुकुलमंडनादि पौद्ग विशेषण किए। चंद्रकला यथा—“अमृतामा-
नदाहुष्टिपुष्टिभीतिरतिताया । लज्जाश्रियंस्वधाराविजयोत्साहंसवर्तिततः॥
छायाचपूरणीवामाममचंद्रकलाङ्गाः । स्वधीजाघानमेताथ क्रमात्संधूज-
येत्तुधीः ॥१॥” शारदातिलकादितंत्र में शंखस्थापनप्रकरण में प्रसिद्ध है।
रघुकुलमंडन रामलला को अमृत कला कहिये को यह भाव कि वंश विना
मृतक सरीर सम जो रघुकुल भया रहा ताको जिआय लिए। दसरथ
नंदन को मानदा कला कहिये को यह भाव कि जो जगत के कारण
सो पुत्र भए एहि ते अधिक कवन सन्मान देहिगे। महिमा अवधि
राम पितृ माता, औ। विधि हरिहर सुरपति दिसिनाथा। वरनहि सब
दसरथ गुनगाथा ॥ मातृसुकृतफल रामलला को तुष्टिकला कहिये
भाव कि अने सुकृत को फल पाए तोष होत है सो सुकृत फल
को पाय संतुष्ट भई। “आनंद अवनिराजरवनी सब मागहुं
नी”। परिजन रंजन को पुष्टिकला कहिये को यह भाव कि
के जन को पोषण करि रंजित किए कछु काल धीते सब
वड़े भए परिजन सुखदाई। सुरजन सुरमाण रामलला को प्रीति-

कला कहिये को यह भाव कि प्रीति तैं चितामणि सम सब कौं मनो-
 वांछित फल देत हैं । प्रणवों पुर नर नारि बहोरी । ममता जिन पर
 प्रगुहि न थोरी ॥ सोभासागर को रति अर्थात् रमणोद्दीपनकारिणी
 कला कहिये को यह भाव कि बालस्वरूपों में सखी देखि के ठगि गई ।
 अवलोकि हौं शोचविमोचन कौं ठगि सी रही जो न उगे धिग से ।
 सहज सोदावन रामलला को लज्जा अर्थात् लज्जादायिनी कला
 कहिये को यह भाव कि जेतने सोदावने रहें सब लजाय गए । भुजनि
 भुजग सरोज नयनानि वदन विधु जित्यौ लरनि ॥ औ ॥ लाजहिं तन
 शोभा निरपि, फोटि फोटि शत काम । भक्त कल्पतरु को श्री
 कला कहिये को यह भाव कि भक्तन को सब प्रकार की श्री देत
 हैं । राम सदा सेवक रुचि राखी ॥ औ ॥ राखत भले भाव
 भक्तन को कलुक रीति पारथाहं जनार्द । नाम कामधेनु है जाको
 तेहि रामलला को स्वधा पितृगणतृप्तिजनिका कला कहिये को यह
 भाव कि संतान के नाम की बड़ाई सुनि के पितर लोग तृप्ति होत
 हैं । रामरूप गुन शील सुभाऊ । प्रमुदित होंहिं देपि सुनि राज ॥
 जगमंगल रामलला को रात्रिकला अर्थात् विश्रामदायिनी कहिये को
 यह भाव कि रात्रिउ विश्राम हेतु है औ एऊ है । सो सुषधाम राम
 अस नामा । अपिललोक दायक विश्रामा ॥ भुवनविभूषन रामलला
 को ज्योत्स्ना कला कहिये को यह भाव कि भुवन को विभूषन ज्योत्स्ना
 कला है एऊ हैं । सहज भकास रूप भगवाना । औ । पुरुष प्रसिद्ध प्रकाश
 निधि । भवभयभंजन रामलला को हंस कहिए सूर्य सो रहैं जेहि में
 सो हंसवति कला ताको कहिये को यह भाव कि सूर्य तमनाशक हैं
 औ एऊ अज्ञानतमनाशक हैं वा हंस जो सूर्य ताको कला चंद्रमा में
 रहत औ एऊ सूर्यवंदी हैं ॥ राम कस न तुम्ह कहहु अस, हंसवंश
 अवतंस । रिपुनगंजन रामलला को छायाकला कहिये को यह
 भाव कि छाया ताप हरत औ एऊ रिपुगण के मारि भक्तन को ताप
 हरत । शीतल सुपद छाह जेहि कर की भेटव पाप ताप माया । अरि-
 करि केहरि राम लला को पूरणी कला कहिये को यह भाव कि राव-
 णादि शत्रुन को मारि जगत् के मुख ते परि पूर्ण किए । जब रघुनाथ

समर रिपु जीते । सुर नर मुनि सब के मय बीते ॥ सुरमुखदायक
रामलला को वामा कहैं सुंदरी कला कहिवे को यह भाव कि चंद्रमा
की सुंदरी कला मुखदायक है एक देवतन के मुखदायक है । तुलसी को
जीवन राम लला को अमा अर्थात् परिमाणरहित कला कहिवे को या
भाव कि परिमाण रहित कला जीवनदात्री औ एक जीवनदाता ॥
मान मान के जीव के जिव सुष के सुष राम । चंद्रमा की चौदहकला
प्रगट है अमावस परिवा की दुइ कला गुप्त है तेहि ते गोसाईं जी चौदह
तुक से बाललीला प्रगट राखे दुइ तुक में गुप्त किए अर्थात् पहिले औ
अंत में ॥ १६ ॥ २२ ॥

राग कान्हरा—पालने रघुपतिहि झुलावे । हैलै नाम सप्रेम
सरस स्वर कौसल्या कल कीरति गावै ॥१॥ कैकि कंठ दुति
श्यामवरन वपु बाल बिभूपन विरचि बनाए । अलकैं कुटिल
ललित लटकन भू नीलनलिन दोउ नयन सुहाए ॥२॥ सिंघु
सुभाय सोहत जब कर गहि बदन निकट पदपल्लव ल्याए ।
मनहुं सुभग जुग भुजग जलज भरि लेत सुधा संसि सीं
सघु पाए ॥ ३ ॥ उपर अनूप विलोकि पिलौना किलकत
पुनि २ पानि पसारत । मनहु उभय अंभोज अरुन सो बिधु
भय विनय करत अति आरत ॥४॥ तुलसिदास बहु बास
विषस अलि गुंजत सो छवि नहिं जात वधानी । मनहु सकल
श्रुति कथा मधुप द्वैविसद सुजस वरनत वरधानी ॥५॥ २३ ॥

पालना में रघुपति को झुलावति हैं, कौसल्याजू मेम सहित मधुरस्वर
से नाम ले ले के अर्थात् पना मना तोना छगन मगन आदि कहि कहि
के सुंदर कीर्ति गावति हैं ॥ १ ॥ मोर के कंठ की पुनि समान श्याम
वरन गरीर है तामें बाल समय के बिभूषण विनय रचि के बनाये गए
हैं टेढ़े अलक हैं मोह पर सुंदर लटकन हैं औ नील कमल राम सुंदर
दोऊ नयन हैं । “अलकाधूर्णकुंजया इत्यमरः” टेढ़े पार को अलक कहत हैं ॥

बाल सुभाव ते जब कर ते गहि कै मुख के निकट पहलव इव अर्थात्
पहलवमकोमल औ लाल पद को ले आवत भए तब अस सोहत
मनो सुंदर दुइ सर्प सचुपाय कहै आनंदित चंद्रमा से कमल से भरि के
सुधा लेन हैं इहां दोऊ हाथ सर्प हैं, पद कमल हैं, मुख चंद्रमा हैं, छावि
सुधा है ॥ ३ ॥ ऊपर उपमा रहित खेलौना देखि कै किलकारी मारत
औ पुनि पुनि हाथ पसारत हैं मानो दुइ कमल चंद्रमा के भय से अति
आर्त सूर्य से विनय करत हैं । इहां खेलौना सूर्य हैं लाल रंग से औ
हाथ दोऊ कमल हैं औ पुनि पुनि पसारना आर्तता है ॥ ४ ॥ गोसाईं
जी कहत हैं कि बहुत सुगंध ते बिबस जो भ्रमर गुंमत है सो छवि
घरानी नहीं जाति हैं मानों सकल वेदन की कृपा भ्रमर हैं के श्रेष्ठ
धानी ते उज्ज्वल सुयश रघुनाथ को घरनत हैं ॥ ४ ॥ २३ ॥

भूलत राम पालने सोहैं भूरि भाग जननी जन जोहैं ।
अधर पानि पद लोहित लोने सर सिंगार भव सारस सोने
॥ ३ ॥ किलकत निरपि बिलोल पिलौना मनहुं विनोद लरत
छवि छौना ॥ ४ ॥ रंजितभजन कांजबिलोचन भाजत भास
तिलकं गोरोचन ॥ ५ ॥ लसै मसिविंदु वदन विधु नौकी
चितवत चित चकोर तुलसी को ॥ ६ ॥ २४ ॥

जोहैं देखत हैं ॥ १ ॥ तन कोमल के सुन्दर श्यामता में बाल
समय के विभूषणन की परिछाही श्रलकति है ॥ २ ॥ ओठ हाथ पद
सुंदर लाल हैं मानो शृंगार रूप तडाग में लाल रंग के कमलें उत्पन्न
भए हैं इहां लुप्तोत्प्रेक्षा है इहां सर शृंगार से श्याम शरीर लेना काहे
से कि शृंगार रस भी श्याम है ॥ ३ ॥ खेलौना देखि चंचल है किलकत
हैं मानो खेलवार में छावि के बालक लरत हैं । इहां हाथ पर हाथ पांव
पर पांव का फेकना सो लरना है कमलवत् नेत्र जो अंजन से रंजित
हैं औ भाल में गोरोचन कै तिलक शोभत है ॥ ५ ॥ सुंदर विधु वदन
में छिठौना लसत है तेहि मुखचंद्र को चित रूप चकोर तुलसी को
चितवत ॥ ६ ॥ २४ ॥

रागकल्याण—राजत सिमुरूप राम सकलगुननिकाय

धाम कौतुकी कृपाल ब्रह्म जानु पानिचारो । नीलकंज जल-
 पुंज मरकतमणि सहस्र स्याम कामकोटि सोभा अंग अंग
 कपेर वारी ॥ १ ॥ हाटक मणि रत्नपवित्र रचित इन्द्र-
 मंदिराभ इंदिरानिवास सदन विधि रच्यो सँवारी । विहंग
 नृपभञ्जिर अनुजसहित वाजकेलिकुसल नील जलजलोच-
 हरि मोचन भय भारी ॥ २ ॥ अरुन चरन अंकुस ध्वज कं-
 कुलिस चिन्ह रुचिर भाजत आति नूपुर वर मधुर मुण-
 कारो । किंकिनो विचित्र जाल कंबु कंठ ललित मा-
 डर विसाल कैहरिनपकंकन कर धारी ॥ ३ ॥ चारु चिबु-
 नासिका कपोल भालतिलक भृकुटि शयन अधर सुंदर द्वि-
 ल्वि अनूप न्यारी । मनहु अरुन कांजकोस मंजुल जुग पांति
 प्रसव कुंदकली जुगुल जुगल परम शुभ्र वारी ॥ ४ ॥ चिह्न
 चिकुरावली मनो पडंघिमंडली बनो बिसेपि गुंजत जल-
 ब्राह्मक किलकारो । एकटक प्रतिविंब निरपि पुलकित हरि
 हरपि हरपि लै उलंग जननी रसभंग मन विचारी ॥ ५ ॥ वा-
 क्य सनकादि संभु नारदादि शुक मुनिंद्र करत विविधि जोष
 काम क्रोध लोभ जारी । दसरथ गृह सोइ उदार भंजन संसार
 भार लीलाभवतार तुलसिदासचास हारी ॥ ६ ॥ २५ ॥

सकल गुणसमूह के धाम कृपाल ब्रह्म कौतुकी शिशुरूप राम कहें
 हैं। रूप पद से यह जनाए कि रूप मात्र से शिशु ।
 सकल गुणनिधान से वात्सल्यादि सकल गुण संपन्न जनाए । अर्थात् केवल
 निर्गुण नहीं, कौतुकी ते स्वतंत्र जनाए । कृपाल ते यह जनाए कि हैं
 ब्रह्म पै लोगन के सुख देने हेतु घुटुरुवन में चलत हैं, नील कंज जल-
 पुंज मरकत मणि सहस्र स्याम, इहां तीन उपमा दिए ताते मालोप-
 अलंकार है वा कमलवत् कोमल औ मेघवत् गंभीर मरकतवत् ।

औं श्यामता नीलिज को, अपर सुगम ॥ १ ॥ जेहि नृप को सदन सुवर्ण
मणि गन्न से जड़ित औ रचित इंद्र मंदिर के सदृश लक्ष्मी को वासस्थान
विधाना ने संचारि के रत्न्या नेहि नृप के आंगन में अनुज सहित हरि
विहरन हैं सो कैसे हैं चालकोलि में कुजल हैं औ नीलकमल सम
लोचन हैं जिन को औ भारी भय के नाशनिहार हैं, मणि रत्न का
भेद मणि नागादि ते होत हैं औ रत्न पर्वत ते, वह रत्न शब्द श्रेष्ठ
वाचक है “रत्नं स्वजातिश्रेष्ठजपि इत्यमरः” अर्थात् श्रेष्ठ मणि ॥२॥ लाल
धारण है तामें अंकुश ध्वज कमल वज्र के सुंदर चिन्ह हैं औ मधुर शब्द
करनिद्वारा श्रेष्ठ नूपुर आनिदी प्रोभत हैं औ कटि में विचित्र किंकिनिन
को जाल कहैं समूह औ शंखवत्कंठ वा “रेखाग्रयान्विता ग्रीवा कंयुर्ग्रासोति
कथ्यते” । औ बिनाल उर है तामें सुंदर माला औ चयनहा है हाथ में
कंकन धारण किए हैं ॥ ३ ॥ टोटी नासिका कपोल भालतिलक भौंह
फान औ ओष्ठ सुंदर हैं औ सुंदर उपमा रहित दांतन की छवि न्यारी
हैं मानो लाल कमल के कोश में सुंदर दुइ पांति की प्रसव कहैं उत्पत्ति
हैं तिन्ह में परम शुभ्र पारी कहैं छोटी कुंदफली दुइ दुइ हैं । इहां लाल
कमल के कोश मुख है तामें ऊपर नीचे के दंतस्थान अर्थात् दाढ़ ते
सुग पांति हैं ता में छोटी छोटी दुइ दुइ जो दंतुली तेई कुंदफली हैं ॥४॥
चिह्नन जे चालन की पांति हैं ते मानो विशेष बनी भई भंवरन की
मंडली है औ जो चालक की किलकारी है सोई मानो तिन का शब्द
है एक टरु ते प्रतिविम्ब को देखि हरणि हरणि के पुलकत जो हरि तिन
को माता रसभंग जिय में बिचारि के गोद में लै लिए भाव अवहीं तो
हरपत हैं अस न होय कि हरि उठै वा हरि तो हरणि हरणि पुलकत हैं
पर माता ने दर ते पुलकना विचारा ताते उठाय लिए ॥ ५ ॥ लीला
अवतार लीला के हेतु अवतार है जेहि को ॥ ६ ॥ २५ ॥

राग कान्हड़ा—आंगन फिरत सुठुखनि धाए । नील-
जलद तनु स्वाम राम सिद्ध जननि निरपि सुप निकट
बुलाए ॥१॥ दंधुक सुमन अरुन पद पंकज शंकुश प्रमुप चिन्ह
वनि धाए । नूपुर जनु मुनिवर कलहंसनि रचे नोड है बांध-

वसाए ॥२॥ कटि मेजल वर हार यौव दर रुचिर बाहु भूपन
 पहिराए । उर श्रौवत्स मनोहर हरिनध हेम मध्य मनिगन
 घहु लाए ॥३॥ सुभग चिबुक द्विज अधर नासिका श्रवन
 कपोल मोहि अति भाए । भू सुंदर करुनारसपूरन लोचन
 मनहुं जुगल जलजाए ॥४॥ भाल विसाल ललित लटकन
 वर बाल दसा के चिकुर सोहाए । मनो दोउ गुरु सनि कुन
 आगे करि ससिहि मिलन तम के गुन आए ॥५॥ उपमा
 एक अभूत भई तब जव जननी पट पीत वोटाए । नील
 जलद पर उडगन निरपत तनि सुभाव मानो तड़ित छपाए
 ॥६॥ अंग अंग पर मारनिकर भिखि छदिसमूह लै लै जनु
 छाए । तुलसिदास रघुनाथरूप गुन तौ कही जो विधि
 होहि बनाए ॥ ७॥२६ ॥

घुटुरुचि बकैयां ॥१॥ दुपहारिआ के फूल सम लालचरन है तामें
 कमल अंकुश आदि चिन्ह बने हैं औ नूपुर है मानो रघुवर ने नूपुर
 रूप खोता रचे तेहि में मुनिवर रूप कलहंसानि कों बाँध दै वसाए ।
 भाव इहां कोई भय नहीं होयगो इहां वसना ध्यान करना है अंकु-
 शादि चिन्ह यथा महारामायणे । रेखोर्द्धावर्तते मध्ये दाक्षिणस्यांघ्रिपंकजे॥
 पादादौ स्वस्तिकंक्षेत्रमष्टकोणस्तथैवच ॥१॥ श्रियं हलंचमुशलेसर्पोवाणांश्च-
 रेतथा । पद्ममष्टदलंचैवस्यंदनं वज्रमुच्यते ॥२॥ यवोंगुष्ठे तथाप्येतारेखोर्द्धा-
 वामतःस्थिताः । रेखोर्द्धादाक्षिणंचैवस्वस्तिकाग्रोज्जपादपः ॥ ३ ॥ अंकु-
 शंचध्वजंचैवमुकुटंचक्रमेवच । सिंहासनंमृत्युदंडंचामरंलंघ्रमुद्यतं ॥ ४ ॥
 नृचिन्हंयवमालंमेचतुर्विंशतिलक्षणाः । क्रमेणवप्रवर्तन्ते श्रीरामस्यांघ्रिदाक्षिणे ५
 ऊर्द्धरेखायथासव्येऽपसव्येसरयूतथागोप्यदंपादमूलेचतदधःसागरांवरा ॥६॥
 कुंभंचैवपताकांचजम्बूफलमयोद्यतं । अर्द्धचंद्रोदरश्चैवपदकोणंचात्रिकोणकं
 ॥७॥ गदातथाचजीवात्माविंदुरंगुष्ठमध्यगः । सरय्यादाक्षिणैकोणेलक्षणंक्षे-
 यमुत्तमं ॥ ८ ॥ गोपदाग्रस्याशक्तिःशुभाकुंडमयोद्यतं । त्रिवलीकामपत्रं-

च पूर्णः सिंधुसुतस्तथा ॥६॥ वीणा वंसी धनुस्तूणो मरालश्चाद्रिकेति च । चतुर्विंशतिरामस्य चरणे वामके स्थिता ॥१०॥ चतुर्विंशतिरामस्येति छान्दसो दीर्घाभावः स्थितेति स्थितानीत्यर्थः । सुपांसुलुगिति सुपांडादेशः परमेष्ठ्यो मन्सर्वाभूतानीत्यादिवत् । तानि सर्वाणि रामस्य पादे तिष्ठन्ति वामके । यानि चिन्हानि जानक्या दक्षिणे चरणे स्थिता ॥११॥ यानि चिन्हानि रामस्य चरणे दक्षिणे स्थिता । तानि सर्वाणि जानक्याः पादे तिष्ठन्ति वामके ॥१२॥ ऊर्द्धरंखारुणा ज्ञेया स्वस्तिकं पीतमुच्यते । सितारुणं चाष्टकोणं श्रीश्च धालार्क- सन्निभा ॥ १३ ॥ इलंच मुशलंचैव श्वेतधुम्रमिति स्मृतं । सर्पोऽसितस्तथा याणः श्वेतपीतारुणो हरित् ॥ १४ ॥ नभोवदंबरं ज्ञेयमरुणं पंकजं स्मृ- । रयं विचित्रवर्णं च युक्तं वेदद्वयं सितैः ॥ १५ ॥ वज्रंतडिभिर्भङ्गेयं स्वैतरक्तं तथायवं । कल्पवृक्षं हरिद्वर्णमंकुशं श्याममुच्यते ॥ १६ ॥ लोहिता च ध्वजा तस्यां चित्रवर्णाभिधीयते । सुवर्णं मुकुटं चक्रं रत्नसिंहा- सनाभकं ॥ १७ ॥ कांस्यवद्यमददं स्याच्चाभरं धवलमहत् । छत्रं चिन्हं शिवं शुकं तृचिन्हं सितलोहितम् ॥ १८ ॥ याणवत्त्रेच माला च वामे च सरयुमिता । गोप्पदश्च सितारक्तः पीतरक्तसिता मही ॥ १९ ॥ स्वर्णव- र्णोऽसितं किंचित्कुंभोऽप्येवं प्रवर्तते । चित्रवर्णा पताका च श्यामं जंबूफलं तथा ॥ २० ॥ धवलश्चाद्देवद्रोऽतिरक्तदपत्तमितोदरः । पदकोणं च महास्वच्छं त्रिकोणोऽरुणएव च ॥ २१ ॥ श्यामला तु गदा ज्ञेया जीवात्मा दीप्तिरूपकः । विंदुः पीतः तथा शक्तीरक्तस्यामसितापि च ॥ २२ ॥ सितरक्तं सुधाकुण्ड- त्रिवली च त्रिवेणी च । वर्तते गोप्यवन्मीनो धवलः पूर्णमिधुजः ॥ २३ ॥ पीतरक्तसिता शीणा वेषुश्चित्रविचित्रकः । हस्तिपीतारुणश्च त्रिविधं धनु- रुच्यते ॥ २४ ॥ वेषुवद्वर्तेत तूणो हं मर्षपतिमारुण । सितपीतारुणा ज्यो- त्स्ना सर्वतोरणमनुत् ॥ २५ ॥ २ । कटि में किकिनी फंयु फंड में मुंदर हार औ मुंदर बाहु में भूषण पहिराए हैं उर में मनोहर थीवन्म औ धनु मणिगणयुक्त सुवर्ण के मध्य में जो हग्निसर मो उर में है “पीतं प्रदक्षिणायनं विचित्रंगमराजिकं । विष्णोर्विष्णुमियदीप्तं थीवन्मं नन्वकी- तितम्” ॥३॥ करुणा रम पूर्ण जो लोचन है मो मानो दृढ़ कमल है ॥४॥ मुंदर विशाल भाल है नामे मुंदर लटकन औ बाल दशा के मुंदर वार हैं मानो दोऊ गुरु अर्थात् रहस्पाति शुक औ नैनधर मंगल आगे करि

वसाए ॥२॥ कटि मेपल बर हार शीव दर रुचिर बाहु भूपन
पहिराए । उर शीवत्स मनोहर हरिनष हेम मध्य मनिगन
घहु लाए ॥३॥ सुभग चिबुक द्विज अधर नासिका श्रवन
कपोल मोहि अति भाए । भू सुंदर करुनारसपूरन लोचन
मनहुं जुगल जलजाए ॥४॥ भाल विसाल ललित लटकन
बर बाल दसा के चिबुक सोहाए । मनो दोउ गुरु सनि कुज
आंगे करि ससिहि मिलन तम के गन आए ॥५॥ उपमा
एक अभूत भई तब जब जननी पट पीत वोटाए । नील
जलद पर लडगन निरपत तजि सुभाव मानो तड़ित छपाए
॥६॥ अंग अंग पर मारनिकर मिलि छविसमूह ले लै जनु
छाए । तुलसिदास रघुनाथरूप गुन तौ कही जौ विधि
होहि बनाए ॥ ७॥२६ ॥

घुटुरुबनि वकैयां ॥१॥ दुपहरिआ के फूल सम लालचरन है तामे
फमल अंकुश आदि चिन्ह बने हैं औ नूपुर है मानो रघुवर ने नूपुर
रूप खोता रचे तेहि में मुनिवर रूप कलहंसानि कों बांह दै वसाए ।
भाव इहां कोई भय नहीं होयगो इहां वसना ध्यान करना है अंकु-
शादि चिन्ह यथा महारामायणे । रेखोर्द्धावर्त्तते मध्ये दाक्षिणस्यांघ्रिपंकजे ॥
पादादौ स्वस्तिकंक्षेयमष्टकोणस्तथैवच ॥१॥ त्रिपंढरं च मुशलं सपोवाणां व-
रेतया । पद्ममष्टदलं चैव स्यंदनं वज्रमुच्यते ॥२॥ यत्रोष्ठे तथाप्येतारेखोर्द्धा-
यामतःस्थिताः । रेखोर्द्धाक्षिणे चैव स्वस्तिकाधोऽब्जपादपः ॥ ३ ॥ अंकु-
शं च ध्वजं चैव मुकुटं च क्रमेवच । सिंहासनं मृत्युदं दं चापरं लवणमुच्यते ॥ ४ ॥
मृचिन्हं यवमालेमे चतुर्विंशतिलक्षणाः । क्रमेणैव प्रवर्तन्ते श्रीरामस्यांघ्रिदक्षिणे ५
ऊर्द्धरेखा यथासंख्येऽपसंख्ये सरयूतया गोप्यदं पादमूले च तदधः सागरांचरा ॥६॥
कुंभं चैव पताकां च जम्बूफलमथोच्यते । अर्द्धचंद्रांदरार्थं वपट्कोणं चाश्रिकोणकं
॥७॥ गदातथा च जीवात्मा त्रिदुरंगप्रमध्यगः । सरयूदाक्षिणे कोणे लक्षणं क्षे-
यमुच्यते ॥ ८ ॥ गोपदापस्त्रयाशक्तिः शृंगारं दमथोच्यते । त्रिवलीकामपत्रं-

रघुवर की चालछवि धरन करि कहन हों मो छवि कैसी है कि
 मय मृग की मर्यादा है औ कोटि काम की शोभा दगनिदारी है ॥ १ ॥
 मानो अग्नना ग्य को छोड़ि के चरण कमलन में आय बसी औ सुंदर
 नृपुं औ किकिनी की कनकन करनि मन दगनि है ॥ २ ॥ सुंदर द्याम
 कोमल तनु के योग्य भूषणन की भगनि है अर्थात् भगव है मानो सुंदर
 शृंगार रूप चाल तरु अटुन फगनि से फग्या है इहां । शृंगार रूप छोटा
 तरु रघुनाथ है औ भूषण जे शरीर में भरे हैं ते फल हैं अनुहरति कहिवे
 को यह भाव कि द्याम तन में जो रंग शोभा पावै । शृंगार तरु कहिवे
 को यह भाव कि शृंगार का रंग भी द्याम है । अटुन कहिवे को यह
 भाव कि छोटा तरु फगन नाहीं कदापि फगन भी है तौ अनेक रंग का
 फल नहीं ॥ ३ ॥ भुजों ने सर्प को औ ननों ने कमल को औ मुख ने
 चंद्रमा को मरु में जीत्या ने मय धिल, जल औ आकाश में रहे अर्थात्
 धिल में सर्प औ जल में कमल, आकाश में चंद्रमा रहे और अपर जेती
 उपमा ने दरनि से छवि नहीं भाव हमारी भी न दुर्दशा होय ॥ ४ ॥
 गुडुरुभनि चलनि से मनि आंगन में हाथ को प्रतिधिव सोहन है सो
 प्रतिधिव नहीं है कमल को संपुट है तेहि में सुंदर छवि भरि भरि के
 मानो धरनी अपने उर में धरति है । इहां चाल प्रति जो परिछाहीं मेदात
 आवत है सोई उर में धरना है ॥ ५ ॥ श्री कांशल्या जू पुत्र को देखि
 के अपने पुन्य फल को अनुभव कराति हैं औ तेहि समय की किल-
 फनि औ लखरनि प्रभु की तुलसी के हृदय में बसति है ॥ ६ ॥ २७॥

नेकु विलोकु धौ रघुवरनि । चारि फल त्रिपुरारि तोको
 दिये कर नृप घरनि ॥ १ ॥ बाल भूषन बसन तनु सुंदर
 रुचिर रज भरनि । परस्पर पेलनि अजिर उठि चलनि गिरि
 गिरि परनि ॥ २ ॥ झुकनि भांकनि छांह सों किलकनि
 नटनि हठि लरनि । तोतरी बोलनि विलोकनि मोहनी मन
 हरनि ॥ ३ ॥ सपि वचन सुनि कौसिला लपि सुठर पास
 ठरनि । लित भरि भरि अंक रैतति पैत जनु दुहुकरनि ॥ ४ ॥

कै चंद्रमा के मिलवे को तम के समूह आए हैं इहां पोखराज हीर
नीलम मानिक के जो चारो लटकन हैं सोई वृहस्पति शुक्र शनि मंगल
हैं मुख चंद्र है बिखरे बार जे मुख पर परे हैं ते तमगन हैं आगे करि
आइवे को यह भाव कि अंधकार से चंद्रमा से बर है ताते चंद्रमा के मान्य
वर्ग को आगे करि लिये अर्थात् वृहस्पति गुरु हैं शुक्र उपकारी हैं ज
गुरुपत्नी से चंद्रमा ने कुचाल किया रहा तब शुक्र सहाय किए रहे भारत
में रूपात है औ शनि ग्रहराज जे सूर्य तिन के पुत्र हैं ताते एक मान्य
हैं औ मंगल मित्र हैं ॥ ५ ॥ जब जननी पट पीत ओढ़ाए तब ए
अद्भुत उपमा भई अब सो उपमा कहत हैं कि मानो- श्याम मेघ पर
तारागुण को देखत मात्र चंचलता सुभाव छोड़ि कै बिजुरी ने
छिपाय लिए अर्थात् तारागण को भाव तारागण की अयोग्यता
करना देखिबे ते बिजुरी ने भी अयोग्यता किया ॥ ६ ॥ माने
अनेक काम मिलि कै छवि समूह को ललै कै अंग अंग पर छावत भए
गोसाईं जी कहत हैं कि रूप गुण रघुनाथ को तौ कहों जाँ ब्रह्मा के
बनाए होंहि वा जाँ रघुनाथ ब्रह्मा के बनाए होंहि तौ रूप गुण कहों
॥ ७॥२६ ॥

राग कैदारा । रघुवर बालछवि कछी बरनि । सकल सुप्र
की सौव कोटिमनीजआभाहरनि ॥ १ ॥ बसी मानहु चरन-
कमलनि अरुनता तजि तरनि । कचिर नृपूर किंकिनी मनु
हरनि रुनभुन करनि ॥२॥ मंजु मेचक मृदुल तनु अनुहरति
भूपन भरनि । जनु सुभग सिंगार सिमुतक फखौ है अद्भुत
फरनि ॥३॥ भुजनि भुजग सरोज नयननि वदन विधु जित्यौ
लरनि । रहै कुहरनि सलिल नभ उपमा अपर दुरि डरनि ॥४॥
लसत कर प्रतिविंद मनि आंगन घटकरुनि चरनि । ललज
संपुट सुकवि भरि भरि धरति जनु उर धरनि ॥५॥ पुण्यफल
अनुभवति मुराछि विलोकि दमरघघरनि । बसत तुलसी हृदय
प्रभु किलकनि ललित लरपरनि ॥ ६॥२७ ॥

रघुवर की बालछवि वर्नन करि कहत हैं सो छवि कैसी है कि
 सब सुख की मर्यादा है औ कोटि काम की शोभा हरनिहारी है ॥ १ ॥
 मानो असनता मूर्ध को छोड़ि कै चरण कमलन में आय बसी औ सुंदर
 नूपुर औ किकिनी की रनझुन करानि मन हराति है ॥ २ ॥ सुंदर श्याम
 कोमल तनु के योग्य भूषणन की भरनि है अर्थात् भराव है मानो सुंदर
 शृंगार रूप बाल तरु अश्रुत फरनि से फर्या है इहां । शृंगार रूप छांटा
 तरु रघुनाथ हैं औ भूषण जे शरीर में भरे हैं ते फल हैं अनुहरति कहिवे
 को यह भाव कि श्याम तन में जो रंग शोभा पावै । शृंगार तरु कहिवे
 को यह भाव कि शृंगार का रंग भी श्याम है । अश्रुत कहिवे को यह
 भाव कि छोटा तरु फरत नाहीं कदापि फरत भी है तौ अनेक रंग का
 फल नहीं ॥ ३ ॥ भुजों ने सर्प को औ ननों ने कमल को औ मुख ने
 चंद्रमा को समर में जीत्या ते सब बिल, जल औ आकाश में रहे अर्थात्
 बिल में सर्प औ जल में कमल, आकाश में चंद्रमा रहे और अपर जेती
 उपमा ते डरनि से छवि रहों भाव हमारी भी न दुर्दशा होय ॥ ४ ॥
 घुदुरुभनि चलनि से मनि आंगन में हाथ को प्रतिबिंब सोहत है सो
 प्रतिबिंब नहीं है कमल को संपुट है तेहि में सुंदर छवि भरि भरि के
 मानो धरनी अपने उर में धरति है । इहां चाल प्रति जो परिछाहीं मेघात
 आवत है सोई उर में धरना है ॥ ५ ॥ श्री काशल्या जू पुत्र को देखि
 कै अपने पुन्य फल को अनुभव कराति है औ तेहि समय की किल-
 कनि औ लरखरनि मधु की तुलसी के हृदय में बसति है ॥ ६ ॥ २७ ॥

नेकु बिलोकु धौ रघुवरनि । चारि फल त्रिपुरारि तोको
 दिये कर नृप घरनि ॥ १ ॥ बाल भूषण वसन तनु सुंदर
 रुचिर रज भरनि । परस्पर पेलनि अजिर उठि चलनि गिरि
 गिरि परनि ॥ २ ॥ भुक्कनि भ्रांक्कनि छांह सों किलक्कनि
 नटनि हठि खरनि । तोतरी बोलनि बिलोक्कनि सोहनी मन
 हरनि ॥ ३ ॥ सपि वचन मुनि कौमिला सपि सुठर पामि
 ठरनि । सित भरि भरि चंक रैतति पैत जनु दुहुकरनि ॥ ४ ॥

चरित निरपत विबुध तुलसी ओट दे जल धरनि । चहत सुर
सुरपति भयो सुरपति भयो चह तरनि ॥ ५॥२८ ॥

कौशल्या जू को और काम में लगी देखि सखी कहति है हे वृष-
धरनि चारो भैअन को नेकु देखु तौ मानो त्रिपुरारि ने चारो फल
तोको हाथ पर दिए हैं इहां लुप्तोत्प्रेक्षा है ॥ १ ॥ अजिर आंगन-॥ २ ॥
नटनि नाचनि ॥ ३ ॥ सखी के वचन सुनि कै औ सुंदर पासे की
ठरनि लखि के अर्थात् सुकृत को फल जानि कै कौशल्या जू चारो
भैअन को गोदी में उठाय उठाय लेत हैं मानो उठाय नहीं लेत हैं पैत
कहं दाव ताको दोऊ हाथ से बटोरत हैं । भाव जीत के जब पापा
देखत है तब खेलारी जां दांव पर द्रव्य घरा रहत है ताको दुनो हाथ
से बटोरि लेत है ॥ ४ ॥ देवता इन्द्र भयो चाहत है औ इन्द्र सूर्य भयो
चाहत हैं । भाव देवता हजार नेत्र तें देखिये हेतु इन्द्र भयो चाहत हैं
औ इन्द्र विश्व भरि के नेत्र तें देखिये हेतु सूर्य भयो चाहत हैं अर्थात्
सूर्य सब के नेत्र में रहत हैं ॥ ५॥२८ ॥

रागजैतथी—भूमितल भूप के बडे भाग । राम लपन रिपु-
दमन भरत सिमु निरपत चति अनुराग ॥ १ ॥ बाल विभूषन
लसत पाइ मृदु मंजुल अंग विभाग । दसरथ सुकृत मनोहर
विरयनि रूप करह जानु जाग ॥ २ ॥ राज सराग विराजत
विहरत जे हरद्वय तडाग । ते नृपअजिर जानु कर धायग
धरन चटक अल काग ॥ ३ ॥ मिह मिहात मराएत मुनि मन
कहै मुर किन्नर नाग । छै वर विहग विनोदिये पालक यमि
पुर उपवन बाग ॥ ४ ॥ परिजन सहित राय रानिन्ह कियो
मज्जन प्रेम प्रयाग । तुलसी फल चाखी ताके मनि सरकत
पंकज राग ॥ ५॥२८ ॥

सुंदर कौशल भंगन के विभाग पाइ के बाग मदन को विभूषन

जाभत है मानों श्री दशरथ महाराज के सुकृत रूपी मनोहर विरवानि में रूप रूपी करदा लगा । विरवा वाल तह को कहत हैं ॥२॥ जे राज मराल हर के हृदय रूपी तडाग में विहरत विराजत ते दशरथ महाराज के आंगन में चंचल काग के धरन को धकैयां ते शीघ्र धायत हैं । इहां चंचल काग भुगुंडी जी हैं “ किलकल मोहि धरन जब धावहि । चलों भागि तब पूष देपावहि ” वा चटक गंवरा आँ चंचल काग के धरन को धावत हैं ॥ ३ ॥ सिद्धि सिद्धात हैं, भाव अस भाग हमारो न भयो आँ मुनिगन सराहत हैं, भाव कहत हैं कि महाराज सब ते धन्य हैं आँ सुर किन्नर नाग कहत हैं घर पुर के उपवन आँ वाग में विहंग हैं वसि घालकानि को विलोकिए । पुर के समीप सो उपवन दूरि सो वाग ॥४॥ परिवार सहित राजा आँ रानिन्ह ने प्रेमरूपी प्रयाग में मज्जन कियो तेहि मज्जन के फल चारिउ घालक हैं । मरकत मणि आँ पद्मराग मणि के सम अर्थात् नीलमणि सम श्री राम जू आँ भरत जू, पंकज राग सम लक्ष्मण जू आँ शत्रुघ्न जू हैं ॥ ५॥२९ ॥

राग असावरी—छगन मगन आंगन पेलत चारु चाखी भाई । सानुज भरत लाल लपन राम लोने लोने लरिका लपि मुदित मातु समुटाई ॥१॥ बाल वसन भूषन धरे नय सिष छवि छाई । नोल पीत मनसिज सरसिज मंजुल मालनि मानो इन्ह देहनि ते दुति पाई ॥ २ ॥ ठुमुकि ठुमुकि पग धरनि नटनि लरपरनि सोछाई । भुजनि मिलनि रुठनि टूठनि किलकनि अवलोकनि बोलनि वरनि न जाई ॥ ३ ॥ जननि सकल चहुं वोर आल बाल मनि अंगनाई । दसरथ सुकृत विबुध विरवा विलसत विलोकि जनु विधि वर वारि वनाई ॥ ४ ॥ हर विरंचि हरि हेरि राम प्रेम परवसताई । सुप समान रघुराज के वरनत विमुह मन सुरनि सुमन भरिलाई ॥ ५ ॥ सुमिरत थोरघुवरनि की लोला लरिकाई ।

तुलसीदास अनुराग अथवा आनंद अनुभवत तब को सो
अजहू अघाई ॥ ६॥३० ॥

सुगम ॥ १ ॥ काम को नील पीत कमल की मालों ने मानहुं इन
देहन ते सुति पाई है ॥२॥ दृत्रनि प्रसन्न होनि ॥ ३ ॥ मणि का आंगन
नहीं है थाटा है चागे भैया नहीं है दशरथ सुकून के बाल कल्पवृक्ष है
ताको बिलसत देखि के प्रिया ने माना रूपी श्रेष्ठगारि चारों ओर बनाई
है चारि रुंधानि ॥ ४ ॥ शिव प्रिया विष्णु राम की प्रेम ते परवसनाई
देखि के दशरथ महागन के सुख समाज को बिभूद मन ते वर्नत है
आ देवता ने फूलानि की झरिआई है ॥ ५ ॥ श्री मान् चारों भयन की
लरिकाई की लीला सुमिरत मात्र तुलसीदास अनुराग रूप अवध में
तब के ऐसा आनंद अजहू अघाय के अनुभव करत है ॥ ६ ॥ ३० ॥

राग विलावल - आंगन पैलत आनदकंदा । रघुकुल
कुमुद सुपद चारु चंदा ॥१॥ सानुज भरत लपन संग सोहै ।
सिमु भूपन भूपित मन सोहै ॥२॥ तनु दुति मोर चंद जिमि
भलकै । मनहुं उमगि अंग अंग छवि छलकै ॥ ३ ॥ कंठि
किंकिनी पाय पैजन वाजै । पंकज पानि पहुँचिया राजै ॥४॥
कठुला कंठ बघनहा नौकै । नयन सरोज मयन सरसीकै ॥५॥
लटकन लसत ललाट लटूरी । दमकत हैदेंदंतुरिआ रूरी ॥६॥
मुनिमन हरत मंजु मसि बुंदा । ललित बदन बलि बाल
मुकुंदा ॥ ७ ॥ कुलही चित्र विचित्र भँगूली । निरपत मातु
मुदित प्रतिफूली ॥ ८ ॥ गहिमनिपंभ डिंभ डगि डोलत ।
कलवल बचन तोतरे बोलत ॥ ९ ॥ किलकत भुंकि भांकत
प्रतिबिंबनि । देत परम सुष पितु अरु अंबनि ॥१०॥ सुमिरत
सुषमा हियहुलसी है । गावत प्रेम मगन तुलसी है ॥११॥३१॥

१ । २ । ३ । पंकज पाणि कर कमल ॥ ४ ॥ मानों नेत्र काम के

तड़ाग के कमल है वा काम रूप तड़ाग के ॥ ५ ॥ रूरी भली ॥६॥७॥
कुलही टोपी औ झंगुली अंगरखी, मातु बलिहारी जात संते हर्षहि बलि
जो पूर्व पद में है ताको अन्वय इहां करना ॥ ८ ॥ डिंभ बालक ॥९॥१०
मुपमा परमा शोभा ॥ ११ ॥ ३१ ॥

राग कान्हरा—ललित सुतहि लालति सचुपाये । कौ-
सल्या कल कनक अजिर महं सिपवत चलन अंगुरिया
लाये ॥ १ ॥ कटि किंकिनो पैजनिचा पायेन वाजत रुनभुन
मधुर रिंगाण । पहुंची करनि कंठ कठुला बन्यौ केहरिनप
मनि जरित जराये ॥ २ ॥ पीत पुनौत विचित्र भंगुलिया
सोहत स्याम सरीर मोहाये । दंतिया है है मनोहर मुप-
छवि अरुन अधर चित लित चुराये ॥ ३ ॥ चिबुक कपोल
नासिका सुंदर भाल तिलक मसिहिंदु बनाये । राजत नयन
मंजु अंजनयुत पंजन कंज मीन मदुनाये ॥ ४ ॥ लटकन चारु
भृकुटिचां टेढी मेढी सुभग सुदेस सुभाये । किलकि किलकि
नाचत झटकी मुनि डरपति जननि पानि छटकाये ॥ ५ ॥
गिरि घुटुनि टेकि उठि अनुजनि तोतरि बोलत पृथ देपाये ।
बालकेलि अवलोकि मातु सब मुदित मगन आनंद अनमाये ॥ ६ ॥
देपत नभ घन बोट चरित मुनि जोग समाधि बिरति बिस-
राये । तुलसिदास जी रसिक न येहि रस ते जन जड लीयत
जग जाये ॥ ७ ॥ ॥ ३२ ॥

ललतिकर्ह दुलारनि, मनुषाण आनंद पाए, कल सुंदर ॥ १ ॥ मधुर
रिंगाण धीरे धीरे चलाए औ इहां जो जड़ाण शब्द है ताको रुदि लक्षणा
फारि पहिराये अर्थ करना ॥ २ ॥ ३ ॥ संजन कमल मीनो के पद को
नीचे किए अंजन युत सुंदर नयन शोभन हैं ॥ ४ ॥ मेढी आदि को
अर्थ पहिले लिखि आए. पानि छुटकाए हाथ छोड़ाए में जननी दरपनि

ह या आप श्री राम दग्धत हैं ॥ ५ ॥ पूष देखाए माता के मालपूषा
देखाए से तोनर बोलन अर्थात् नोनराय के मागत बालकेंलि देखि के
माता सब दर्पित हैं आ अनमाए कहें जो न अमाय अर्थात् अपार
आनंद तेहि में मगन हैं ॥ ६ ॥ विरति वैराग्य जाए वृथा ॥ ७ ॥ ३२ ॥

राग ललित । छोटो छोटो गोड़िया, अंगुरियां छोटी
छवीनी । नय जोति मोती मानो कमल दलनि पर । ललित
आंगन पैले ठुमुकि ठुमुकि चलै भुंभुन भुंभुन पाय पैजनी
मृदु मुपर ॥ १ ॥ किंकिनी कलित कटि हाटक रतन जटि
मंजु कर कंजनि पहुंचिया रुचिरतर । पिचरी भीनी भंगुली
सांवरे मरीर पुली बालक दामिनि ओठो मानो वारे वारि-
धर ॥ २ ॥ लर वधनहा कंठ कठुला भंगुली केस मेठी लटकन
मसिधिंदु मुनिमन हर । अंजन रंजित नैन चित चोरै चित-
वनि मुष शोभा परवारों अमित असमसर ॥ ३ ॥ चुटकी
बजावति नचावति कौसल्या माता बालकेंलि गावति
मल्हावत प्रेम सुभर । किलकि किलकि हंसै द्वै द्वै दंतुरियां
लसै तुलसी के मन बसै तोतरे वचन बर ॥ ४ ॥ ३३ ॥

मृदु मुखर कोमल शब्द से ॥ १ ॥ कटि में किंकिनी शोभित है
औ सोना रत्नन से जड़ी अतिशय सुंदर पहुंचियां सुंदर कर कमलानि
में हैं औ बालक के सांवरे शरीर में खुलै वाली पीत रंग की शीनी
झंगुली है मानो बालक नहीं है छोटे मेघ हैं झिंगुली नहीं है दामिनि
है ताको ओढ़ि लई है ॥ २ ॥ झंगुले केश बिखरे वार असमसर कहें
पंचवाण अर्थात् काम ॥ ३ ॥ प्रेम सुभर प्रेम में सुंदर भारि ॥ ४ ॥ ३३ ॥

सादर सुमुषि विलोकि राम सिसु रूप अनूप भूप लिये
कनियां । सुंदर स्याम सरोज बरन तन सब अंग सुभग
सकल सुष दनियां ॥ १ ॥ अरुन चरन नय जोति जग-

सगति रुनभुन करति पांय पैंजनियां । कनक रतन मनि
 जटित रटति कटि किंकिनि कलित पीतपटतनियां ॥ २ ॥
 पद्मिनी करनि पदिक हरि नय उर कठुला कंठ मंजु गज-
 मनियां । रुचिर चिबुक रद अधर मनोहर ललित नासिका
 लसति नयुनियां ॥ ३ ॥ विकट भृकुटि सुपमानिधि आनन
 कल कपोल कानन नगफनियां । भाल तिलक मसिविंदु
 विराजत सोहत सीम लाल चौतनियां ॥ ४ ॥ मन मोहनी
 तोतरी बोलनि मुनिमन हरनि हसनि किलकनियां । बाल
 सुभाय विलोल विलोचन चोरति चितहि चारु चितवनियां
 ॥ ५ ॥ मुनि कुलवधु भरोपनि भांकिति रामचंद्रछवि चंद्र
 वदनियां । तुलसिदास प्रभु देपि मगन भई प्रेमविवस कछु
 सुधि न अपनियां ॥ ६ ॥ ३४ ॥

हे सुमुखि रूप है अनूप जेहि को तेहि राम शिशु को भूप गोद
 में लिए हैं ते देखु, सखी को उक्ति है ॥ १ ॥ पीत पटतनियां करिके
 कलित कई युक्त जो कटि तेहि में रतन मागिन से जड़ित जो कनक-
 मयी किंकिनी सो रटति है । पीतपट तनियां कहें पीत रंग के वस्त्र की
 कछनी, मारवाड़ में लंगोटी को तनियां कहत हैं पर इहां राजकुमार हैं
 ताते कछनी जानना ॥ २ ॥ पदिक धुकधुकी गजमानियां गजमुक्ता
 रद दांत ॥ ३ ॥ विकट देह कल सुंदर नगफनियां कान को भूषण
 मसिद्ध है जाको काशी आदि देश में दुर्वचा भी कहत हैं, चौतनियां
 टोपी ॥ ४ ॥ विलोल चंचल ॥ ५ ॥ यह सखी को वचन मुनि चंद्र-
 वदनी कुलवधु शरोखनि तें झांकिति हैं । यह कथा सत्योपाख्यान
 में स्पष्ट है ॥ ६ ॥ ३४ ॥

राग विलावल । सोहत सहज सोहाये नयन । पंजन
 मीन कामल सकुचत तव जव उपमा चाहत कवि दैन ॥ १ ॥
 सुंदर सब अंगनि सिमुभूपन राजत जनु सोभा आये लैन ।

बड़ो लाभ लालची लोभवस रहि गए लपि रुपमा बहु
मैन ॥२॥ भोर भूप लिए गोद मोद भरे निरपत वदन सुनत
कल दैन । वाल रूप अनूप राम छवि निवसति तुलसिदास
उर अैन ॥ ३।३५ ॥

सहज सोहाए अर्थात् अंजनादि बिना ॥ १ ॥ सुंदर सब अंगन में
वालभूषण शोभन हैं । मानो भूषण नहीं हैं बहु काम हैं ते शोभा लेवे
को आवत भए पर मुपमा रूप बड़ा लाभ लखि लालची काम लोभ
वस रहि गए ॥२॥ निवसति उर अैन हृदय रूपी गृह में वसति ॥३॥३५

राग विभास—भोरभयो जागहु रघुनंदन गतव्यलीक
भगतनि उरचंदन । ससिकर छीन छीन दुतितारे तमचर सुपर
सुनहु मेरे प्यारे ॥ १ ॥ विकसत कांजकुमुद बिलपानि । लै
पराग रस मधुप उडाने । अनुज सपा सब बोलनि आए ।
बंदिन्ह अतिपुनीत गुनगाए ॥ २ ॥ मनभावतो कलैज कौजै ।
तुलसिदास कहं जूठन दोजै ॥ ३ ॥ ३६ ॥

माता की उक्ति है । हे रघुनंदन भोर भयो जागहु । तुम कैसे हो कि
व्यलीक फहें कपट तेहि करि रहित जो भक्त तिन के उर के चंदन हो
अर्थात् शीतल करनिहारे ॥ १ ॥ चंद्रमा किरन रहित भए औ तारन
की श्रुति छीन भई औ मुरुगा बोलि रहे हैं तेहि शब्द को सुनहु ॥ २ ॥
कमल फूले औ कोई सम्पुटित भई औ कमलन की धूरी रस लैके भ्रमर
उड़त भए ॥ ३ ॥ ३६ ॥

प्रात भयो तात बलि मातु विधुवदन पर मदनवारी कीटि
उठो प्रानप्यारे । सूत मांगध वंदी वदत विरदावली द्वारसिसु
अनुज प्रियतम तिहारि ॥ १ ॥ कोकगत सोक अवलोकि ससि
छीन छवि अरुनमय गगन राजत रुचिर तारे । मनहु रवि
पाल मृगराज तमनिकर करि दलित अति ललित मनिगन

विद्यारे ॥२॥ सुनहु तमचर सुपर कीर कलहंम पिक कीकि रव
कलित बोलत दिहंगवारि । मनहुं सुनिवृन्द रघुवंसमनि
रावरे गुनतगुन आश्रमनि सपरिवारे ॥ ३ ॥ सरनि विकसति
कंजपुंज मकरंद वर मंजुतर मधुर मधुकर गुंजारि । मनहुं
प्रभुजन्म सुनिचयन अमरावती इंदिरानंद मंदिर संवारि ॥४॥
प्रेम संमिलित वर वचन रचना अकनिराम राजोव लोचन
उधारि । दास तुलसी मुद्रित जननि करे आरती सहज सुंदर
अजिर पांड धारि ॥ ५ ॥ ३७ ॥

हे तान ! प्रात भयो, मैं माता बलि जाउँ औ तुम्हारे सुख चन्द्र पर
कोटि मदन वारों । हे भानुप्यारे उठो, पौराणिक कथक भांड धिरदावली
कहत हैं औ तुम्हारे अनिश्चय प्रिय बालक और अनुज द्वार पर खड़े
हैं । १॥ चंद्रमा की छवि छीन देखि कै चक्र वाक शोक रहित भए औ
लाल रंग मय आकाश में सुंदर तारे राजत हैं । मानो बाल रवि रूप सिंह
ने तमसमूह रूप हाथिन को विदारित करि अति सुंदर मणि गणन
को छितिराय दिये । इहां मणिगण तारा हैं मुरगा बोलत हैं औ सूगा औ
राजहंस औ कोइलि औ मोर रव कलित कहें शब्दयुक्त हैं औ बघौ
पच्छिन के बोलत हैं सो सुनहु । पक्षी औ पक्षिन के बच्चा नहीं बोलत
हैं हे रघुवंशमणि मानो मुनिगन परिवार सहित आश्रमन में आप के
गुण वर्णत हैं, इहां आश्रम खोता है । ३ । तद्भागन में कमलन के समूह
प्रफुल्लित हैं तिन में श्रेष्ठ रस है तापर भ्रमर अति सुंदर मधुर गुंजार
करत हैं मानो भ्रमर गुंजार नहीं करत हैं प्रभु को जन्म सुनि के इन्द्र
के पुरी में चयन है अर्थात् देवता लोग नृत्यगान करत हैं प्रफुल्लित कमल
नहीं हैं लक्ष्मी ने आनंद को मंदिर बनायो है ॥ ४ ॥ प्रेमयुक्त श्रेष्ठ
वचन रचना सुनि श्रीगम कमल सम नेत्र उधारत भए । गोसाईं जी
कहत हैं कि हरपित जननी आरती करनि दें औ सहज सुंदर जो रघु-
नाथ सो आंगन में पधारत भए ॥ ५ ॥ ३७ ।

जागिये लूपानिधान जानि राघ रामचन्द्र जननी कहै

अर्थात् शोभाहीन और मय तारन की धुनि मलीन मानो मूर्ख
 नहीं उए पूर्ण ज्ञान को प्रकाश भयो और रात्रि नहीं बीती भव का
 वेलास अहंता ममतादि बील्यो और आज्ञा त्राम रूप अंधकार को तोप
 रूप मूर्ख के नेत्र ने जगाय दिये ॥ २ ॥ हे प्राण जीवन धन मेरे वारे
 अधुर शब्द ने पक्षीन के समूह बोलन हैं, हमारे वचन को विश्वास करि
 श्रवण ते तुम सुनहु मानो पक्षी नहीं बोलन हैं वेद रूप बंटी और मुनि-
 वृंद रूप मृत मागधादि जय जय जय जय जयति कैट भारे कहि यम
 कहन हैं ॥ ३ ॥ कमल समूहों के फूलन मात्र कमलन के लगि के पृथक हैं
 भंवरन के समूह मुंदर कोमल धुनि ते गुंजत चले भाव सायंकाल में
 कमलन के संपुटित होने ते भीतर पवि गए रहे ते उड़ि चले ते भ्रमर
 कमल विहाय गुंजार करत नहीं उड़न हैं मानो घंगरुय पाय सय शोक
 रूप गृह रूप छोड़ि कै तिटारि मेवक गुण को गुणन प्रेम में मत्त फिरत
 हैं । संपुटित कमल का गृह रूप में उत्प्रेक्षा करने का यह भाव कि
 संपुटित कमल से भी निकलना कठिन है और गृह रूप से भी निकलना
 कठिन है और संपुटित भए पर भ्रमर को केवल कमल देखि परत है
 तैसे गृह रूप में जे पड़े हैं तिन को केवल घर देखि पड़त है । इहां
 कमल के प्रफुल्लित होए से भ्रमर छुट्टी पावत है इहां प्रभु कृपा करि
 जब निकाल तब छुट्टी पाव ॥ ४ ॥ रसाल प्रिय वचन सुनत मात्र
 अतिशय दयाल जे श्री राम ते जागे । जंजाल भागत भए और अनेक
 दुःखन के समूहन के दारत भए । गोसाईं जी कहन हैं कि दास मुखार-
 विंद देखि कै अति अनंद भए ताते माया के परम मंद भारे भ्रम फंद
 छूटे ॥ ५ ॥ ३८ ॥

बोलत भवनिप्रकुमार ठाढे नृप भवन द्वार रूप सील
 गुन उदार जागहु मेरे प्यारे । विलपित कुमुदिनि चकोर
 चक्रवाक हरष भोर करत सोर तमचर पग गुंजत अलि
 न्यारे ॥ १ ॥ रुचिर अधुर भोजन करि भूपन सजि सकल
 अंग संग अनुज बालक सब विविधिविधि मंत्रारे । करतल
 गहि ललित चाप भंजन रिपुनिकरदाप कटितट पटपीत

तून मायक अनियारे । २ ॥ उपवन मृगया विहार क
गवने सुपाल जननी मुप निरप पुन्य पुंज निज विचारे ।
तुलसिदास भंग लीजै जानि दीन धमै कौजै दोजै ।
विमल गावै चरितवर तिहारि ॥ ३॥३८ ॥

राजभवन के दरवाजे पर राजन के बालक ठाढ़ भए बोलत
अपान् तुम्हारे जागिरे को मत्स्यना देखत हैं । हे रूपशील पुन पुन
मेरे प्यारे जागहु, भोर भपने कोई औ चकोर बिलखत हैं औ चकोर
को हरप है दुखता औ और पक्षी जोर करत हैं और अमर न्यारे
करत हैं, एतना सुनि जागे रह गेप है ॥१॥ अनुज औ बालक सब
बिबिधि बिधि संचारे भए हैं तिन के संग सुंदर मधुर भोजन करि
औ सकल अंगन में भूषन औ कटिदंश में पीतपट औ तरकस
सायक पुल्ल जालि के औ रिषु समूहन के अहंकार भंजन
सुंदर चापसुतल में गाढ़ के डरवन में शिकार खेलिबे के हेतु
गवने । जननी ने दुख देखि के अपने पुन्य का समूह विचारा । हारा
कोहि को भार मानस रानापन में स्पष्ट है । जे मृग राम दान के मागे
ने तनु मोहि सुरलोक निधारे । गोसाईं जी कहत हैं कि हम को लो
लीजै औ दीन जानि के भमै कौजै औ निर्मल मति दीजै जाते तेहो
अहं चरितन को गावै । इहां गोसाईं जू आवेस मे देहाध्यास भूलि प्रलज
सह हो ॥ ३९ ॥

रागनट—खेलन चलिषै आनंदकांद । सखा प्रिय नृप हार
ताढे विपुल बालक वृन्द ॥१॥ तपित तुम्हरे दरस कारन
बातक दास । वपुष वारिद वरपि कवि जल हरहु लोचन
॥२॥ वंधु वचन विनीत सुनि उठे मनहु केहरि वान ।
सु सर चाप वार उर नयन बाहु विमाल ॥३॥ चलत
प्रतिदिवस राजत अजिर सुपमापुंज । प्रेमवस प्रतिचान
नने नने देति शासन कांज ॥ ४ ॥ निरपि परम विचित्र

सोभा चकित चितवर्हिमात । हरप त्रिवस न जात कहि
निजभयन विहरहु तात ॥ ५ ॥ देखि तुलसीदास प्रभुछवि
रहे मय पल रोकित । यकित निकर चकोर मानहु सरद डंडु
विलोकि ॥ ६ ॥ ४० ॥

सखा औ प्रिय जे बालकन के अनेक युत्यों ते, नृपद्वार में खड़े हैं वा
सखा औ प्रिय औ बालकन के अनेक युत्यों नृपद्वार में खड़े हैं, तुम्हारे
दरस के कारण, चतुरदास रूप चातक जे त्रिपित हैं तिन को सररी रूप
मेघ ते छवि रूप जल घरपि के नेत्रन की प्यास हरहु ॥२॥ विनीत नम्र
केहारी बालक कहें सिंह को बालक ॥३॥ परम शोभा पुंज जो आंगन
है तेहि में चलत संते पद की परिछाहीं शोभति है सो परिछाहीं नहीं
है मानो मेमयस चरण प्रति पृथ्वी कमलन के आसन दोति
है ॥ ४ ॥ हर्ष के विशेष यस हैं ताते नहीं कहिजात है कि हे तात निज
भयन में विहरहु अर्थात् बाहर न जाहु ॥ ५ ॥ गोसाई जी कहत हैं कि
प्रभुछवि देखि के सब पलक रोकि रहे मानो चकोरन के समूह सरद
पूनों के चंद को देखि थकित भए ॥ ६ ॥ ४० ॥

विहरत अवध वीधिन्ह राम । संग अनुज अनेक सिसु
नव नील नीरद स्याम ॥ १ ॥ तरुन अरुन सरोजपद बनि
कनकमय पद चान । पीत पट कटि तून बर कर ललित जघु
धनुवान ॥ २ ॥ लोचननि की लहत फल छवि निरपि पुर-
नरनारि । वसत तुलसी दास उर अवधेस के सुत चारि ॥३॥४१

नवीन स्याम मेघ सम स्याम श्रीराम अनुज औ अनेक शिशुन के
संग अवध की गलिन में विहरत हैं ॥ १ ॥ तरुण जो लालकमल तद्रूप
चरण हैं तामें सुवर्ण मयी पनही बनी है अर्थात् पहिरे हैं, पीतपट औ
तरकस कटि में है, श्रेष्ठ करनि में सुंदर छोटे धनुष औ चान हैं ॥ २ ॥
लोचन इ० मु० ॥ ३ ॥ ४१ ॥ करतल सोहत चान धनुहिया । यह पद
छेपक है ताते न लिखा

जैसे राम ललित तैसे लोने लपन लालु । तैसेई भात
 सोल सुपमा सनेहनिधि तैसेई सुभ प्रसंग सनुसालु ॥१॥
 धरें धनु सर कर कसे कटि तरकसी पीरे पट वोटे चले
 चारु चालु । थंग थंग भूपन जराय की जगमगत हरत जन
 की जी को तिमिर जालु ॥२॥ पैलत चौहटा घाट वीधी
 वाटकनि प्रभु सिव सुप्रेम मानस मरालु । सोभा दान दैदे
 सनमानत जाचक जन करत लोक लोचन निहालु ॥ ३ ॥
 रावन दुरित दुष दले सुर कहै आजु अवध सकल सुख को
 सुकालु । तुलसी सराहै सिद्ध सुकृत कौसल्या जू की भूरिभाग
 भाजन भुआलु ॥ ४॥४२ ॥

ललित सुंदर, लोने सुंदर, सोल सुखमा सनेह निधि सोल
 औ परम सोभा औ स्नेह के समुद्र, शत्रुशालु शत्रुहन जी ॥ १ ॥
 तरकसी तरकस जराय के जड़ाऊ के तिमिर जाल अंधकार समूह ॥ २ ॥
 शिव जी के सुंदर प्रेम रूप मानस सर के हंस जो प्रभु हैं सो चौहटा
 औ घाट गली औ फुलवारिन में खेलत हैं औ लोक के लोचन रूप
 जाचक जन के सोभा दान दै दै के सनमानत हैं औ निहाल करत
 हैं ॥ ३ ॥ देवता कहत हैं कि अवध में सकल सुख को सुकाल है पर
 रावन पाप रूप दुख को आजुऐ मारैं, भाव अवध के सुख में न भूलैं
 हमारे दुख को देखि शीघ्रता करैं वा देवता कहत हैं कि आजु कहैं वा
 समैं में रावन पाप रूप जो दुख है ताको मारैं तो अवध में सकल सुख
 को सुकाल होय । भाव फेर दुकाल का भै न रहि जाय । गोसाईं जी
 कहत हैं कि बड़े भाग्य के पात्र जो महाराज दशरथ औ कौशल्या जू
 तिन के सुकृत को सिद्ध सराहत हैं । ४॥४२ ॥

राम ललित । ललित ललित लघु लघु धनु सर कर
 तैसि तरकसि कटि कसे पट पिअरे । ललित मनहि पांथ
 पैलनी किंकिनि धुनि मुनि सुप लहै मनु रहै नित निअरे ॥१॥

पहुँचो अंगद चारु हृदय पदिक हारु कुंडल तिलक छवि
गडो कवि जिअरे । सिर सिटे पारो लाल नीरज नयन विसाल
सुंदर वदन ठाढ़े सुरतरु सिअरे ॥ २ ॥ सुभग सकल अंग
अनुज बालक संग टेंपे जर नारि रहै ज्यौ कुरंग दिअरे ।
पिलत अवध पोरि गोली भोग चकडोरि मूरति मधुर वसै
तुलसी की छिअरे ॥ ३ ॥ ४३ ॥

ललित० इ० मु० ॥ १ ॥ अंगद विजायठ पदिक धुकधुकी हार
माला वा सात पदिक के माला का नाम पदिक हार है सिर सिटे
पार लाल शिर में लाल टोपी है नीरज कमल । सुरतरु सियरे कल्पवृक्ष
के छाया में ॥ २ ॥ ज्यों कुरंग दियरे जैसे मृगा दीपक को देखि के ।
संका । मृगा तो गान सुनि मोहिन हांत है दीपक ने कैसे लिखे ? उत्तर ।
व्याधा दीपक धारि के कुछ गान करत हैं तब मृगा उहां आवत है
यह प्रसिद्ध है चकडोरी चकई ॥ ३ ॥ ४३ ॥

छोटि ऐ धनुहिआ पनहिआ पगनि छोटो छोटि ऐ
कछौटी फटि छोटि ऐ तरकमी । लसत भंगुली भोनी
दामिनि की छवि छोनो सुंदर वदन मिर पगिआ जरकमी ॥ १ ॥
यय अनुहरत विभूषन विचित अंग जोहै जिय आवति मनेह
की सरकमी । मूरति की मूरति कही न परे तुलसी पै
जानै मोई जाकि उर बसकै करकमी ॥ २ ॥ ४४ ॥

फटाई फटनी ॥ १ ॥ अवस्था के अनुसार विचित भूषण अंग
में हैं देखिने नें जिय में स्नेह की प्रवन्ताई आवति है तुलसी पै मूरति
की मूरति नहीं फटि परे है जा के हृदय में फटक ऐसी बसकै है अर्थात्
मूरति मोई जानै ॥ २ ॥ ४४ ॥

राग टोड़ी राम जपन एक शेर भरत रिपुदमन लाल
एक शेर भए । सरजू शीर मम सुपट भूमिअल गनि गनि

गोइया वांछि लये ॥ १ ॥ कंदुक केलि कुसल हय चटि चटि
 मन कस कसि ठोकि ठोकि पये । करकमलनि विचित्र
 चौगानै पेलन लगे पेल रिभये ॥ २ ॥ व्योम विमाननि विदुष
 विलोकत पेलक पेपक छांइछये । सहित समाज सगहि
 दसरथहि वरपत निज तरु कुसुमचये ॥ ३ ॥ एक लै बढत
 एक फेरत सब प्रेम प्रमोद विनोद मये । एक कहत भइ
 हाल राम जू को एक कहत भइया भरत जये ॥ ४ ॥ प्रभु
 बकसत गज वाजि वसन मनि जय धुनि गगन निसान हये ।
 पाइ सपा सेवक जाचक भरिजीव न दूसरे द्वार गये ॥ ५ ॥
 नभ पुर परति निछावरि जहँ तहँ सुरसिहनि वरदान दये ।
 भूरिभाग अनुराग उमगि जे गावत मुनत चरित नितये ॥ ६ ॥
 हारे हरप होत हिय भरतहि जिते सकुचि सिर नयन नए ।
 तुलसी सुमिरि सुभाव सौल सुकृती तेइ जे एहि रंग रए ॥ ७ ॥

राम इ० सु० ॥ १ ॥ गेंदा के खेल में जे कुशल हैं ते घोड़न पर
 चढ़ि चढ़ि कै मन को ठोकि ठोकि मजबूत करि करि के खड़े भए ठोकि
 ठोकि मजबूत करिबे को यह भाव कि हम हारंगे नहीं अवश्य जीतंगे
 अस निश्चै करि करि वा मन को फेरि फेरि के अर्थात् मिलाप छांड़ि
 छोड़ि के ताल ठोकि २ के खड़े भए वा मन भरि घोड़न को कसि कसि
 के याल ठोकि ठोकि के चढ़ि चढ़ि खड़े भए हस्त कमलन में विचित्र
 दण्डा है रिझावनवाले खेल खेलन लगे यह खेल था भांति ते खेला
 जात है दूनो ओर गोइया खड़े होत हैं बीच में एक सीवां बनावत हैं
 जमीन में गेंदा को धरि घोड़े पर से दंडा मारि मारि के गेंदा को सीवां
 के ओर बढ़ावत हैं औ दूसरे ओर से दंडा मारि मारि के गेंदा को
 फेरत हैं जेहि ओर से सीवां पार होय तेहि को हाल होय अर्थात् जीत
 लेय ॥ २ ॥ आकाश तें विमानन पर देवता देखत हैं खेलनेवाले और
 खनेवालों की छाया छाय रही वा खेलनेवालों पर देखनेवालों की

छाया छाये रही वा खेलनेवालों की छाया सम देखनेवाले अर्थात् देवता छाजे समाजसहित राजा दशरथ को सराहि के अपना तरु जो कल्पवृक्ष ताको पुष्प समूहें वर्षत भए ॥ ३ ॥ सब प्रेम अनन्द औ कौतुक में जे हैं तिन में से एक गेंदा कों लै बढ़त औ एक रोकि कै फेरत एक कहत है कि राम जू की जीत भई औ एक कहत है कि भैया भरत जीते ॥ ४ ॥ हये कहैं इने अर्थात् बजाए ॥ ५ ॥ जहं तहं पुर तें औ आकाश तें नेवछावरि परति है अर्थात् आकाश तें देवता औ पुर तें पुरवासी नेवछावर करत देवता औ सिद्ध वरदान देत भए अनुराग में उमगि के जे ए चरित नित्य सुनत गावत हैं तिन के बड़े भाग हैं ॥ ६ ॥ सिर नैन नए सिर औ नैन नीचे के नवावत भए रए कहैं रंगे ॥ ७ ॥ ४५ ॥

पिलि पिलि सुपिलनिहारे । उत्तरि उत्तरि चुचुकारि तुरंगनि सादर जाइ जाहारे ॥ १ ॥ बंधु सखा सेवक सराहि सनमानि सनेह संभारे । दिए वसन गज वाजि साजि सुभ साजि सुभांति संवारे ॥ २ ॥ सुदित नयन फल पाइ गाइ गुन सुर सानंद सिधारे । सहित समाज राज मंदिर कहं रामराउ पग धारे ॥ ३ ॥ भूपभवन घर घर घमंड कल्याण कोलाहल भारे । निरपि हरपि आरती निछावरि करत सरौर बिसारे ॥ ४ ॥ नित नये मंगल मोद पवध सब विधि सब लोग सुपारे । तुलसी तिन्ह सम तौज जिन्ह के प्रभु ते प्रभुचरित पियारे ॥ ५ ॥ ४६ ॥

सुंदर खेलनेवाले खेल खेलि के ॥ १ ॥ बंधु सखा सेवक कों सराहि सनमानि के फिरि सनेह को सम्हारे अर्थात् सनेह में आप जो बिदल हई गए रहे ताको सम्हारे पुनि वसन औ घोड़ा हाथी साजि कै औ सुंदर भांति ते संवारे जे सुभ साज भाव सुंदर पोसाक ते दिए वा कल्याण साजि के सुंदर भांति ते संवारत भए औ वसनादि दिए वा सनेह सम्हारे यह सब दिए भाव जेहि की जेतनी प्रीति तेतनी दिए वा

सनेहको सम्हारे भए जो बंधु आदि हैं तिनको सराहि सनमोनि के वस-
नादि दिए सनेह सम्हारे भए कहिये को यह भाव कि सनेह को न
सम्हारे तो देहाध्यास रहित है जाहि ॥२॥ मुदित इ० सु० ॥३॥ भूपति
के भवन में औ घर घर में कल्याण को घमंड है अर्थात् कल्याण पूरि
रहा है वा कल्याण को अहंकार है ॥ ४ ॥ गोसांई जी कहत हैं कि
तिन्ह अवध बासी सम तेऊ हैं जिन्ह के प्रभु तें प्रभु का चरित पिआरा
है ॥५॥४६॥

राग सारंग—चहत महामुनि जाग जयो । नीच निसा-
चर देत दुसह दुष कसतन ताप तयो ॥ १ ॥ सापे पाप नये
निदरत पल तब यह मंत्र ठयो । विप्र साधु मुर धनु धरनि
हित हरि अवतार लयो ॥२॥ सुमिरत श्रीसारंगपानि छन
मै सब सोचु गयो । चलि मुदित कौसिक कोसलपुर सगुननि
साध दयो ॥ ३ ॥ करत मनोरथ जात पुलकि प्रगटत
आनंद नयो । तुलसी प्रभु अनुराग उमगि मग मंगलमूल
भयो ॥ ४ ॥ ४७ ॥

महामुनि जे विश्वामित्र जू ते यज्ञ औ जय दोऊ चाहत हैं । महामुनि
कहिये को यह भाव कि तपबल याही देह भए क्षत्री ते ऋषिपति
अस कोऊ मुनि नहीं भयो । नीच निसाचर दुःसहदुःख देत हैं ताते तन
तापन ते तयो आ कृश भयो ॥ १ ॥ अब विश्वामित्र जू का विचार
कहत हैं शाप देइये में पाप है आ नवनई किए में बल निरादर करत
है अस विचारि के तब यह मंत्र टान्यो कि विमादि के हित हरि अवतार
लियो है इहां और नाम न कहे हरिहीं कहे ताको यह भाव कि या
काल में अपना दुःख दगाइये पर दृष्टि है अर्थात् हरतीति हरिः ॥ २ ॥
सारंगपानि कहिये को यह भाव कि सारंग भग धनुष हाथ में है तो
क्यों न हमारे शत्रु को नाशिंगे । सगुननि साध दयो कहिये को यह भाव
कि राह भरि सगुन होत आयो ॥ ३ ॥ पुलकि करि के मनोरथ कान
जात है आ नयो जो कबहूँ न भयो आनंद गो प्रगटत है गोसांई जी

कहत हैं कि प्रभु अनुगम के उगम करि कै भग मंगलमूल भयो । भाव
नयनाई यज्ञ के ओर घर में लगे रहे तबनाई न भयो । आ प्रभु के ओर
चलन राह में भयो आगे क्या जानें केतना होयगो ॥ ४ ॥ १७ ॥

आजु सकल सुहातफल पाइहीं । सुख की सीमा विधि
आनंद की अवधि बिलाइहीं जाइहीं ॥ १ ॥ सुताई सहित
दसरदाहि देखिहीं तेस पुनकि उर लाइहीं । रामचन्द्रमुप
चन्द्र मुधा छवि नयन चकारनि पाइहीं ॥ २ ॥ सादेर समा
चार नृप वृक्षिहैं हीं सब कथा सुनइहीं । तुलसी है कृत
हाव्य आश्रमाहि राम लयन लै आइहीं ॥ ३ ॥ ४८ ॥

अब विश्वामित्र जी का मनोरथ कहत है सुख की सीमा और आनंद
की सीमा ऐसी जो अयोध्या जी हैं निज को जाय में देखिहीं ॥ १ ॥
श्रीरामचंद्र के मुख रूप चन्द्र को जो छवि रूप अमृत है ताको नैन रूप
चकारन को पिआइ हैं ॥ २ ॥ सादेर इ० सु० दो० । बहुविधि करत
मनोरथ, जान न लागी वार । करि मज्जन सरजू जल, गण भूप दरवार ॥
चौ० । मुनि आगमन सुना जय राजा । मिलन गण्ड लै विप्र समाजा ॥
करि दंडयत मुनिहि मनमानी । निज आसन बैठारिन्हि आनी ॥ चरन
पवारि कीन्ह अति पूजा । मांसम आजु धन्य नहिं दूजा ॥ विधिधि
भांति भांजन करवाया । मुनिवर हृदय हरप अनिपावा ॥ पुनि चरनन
मेलें मृत चारी । राम देखि मुनि देह विमारी ॥ भये मगन देपत मुप
सोभा । जनु चकोर पूगन शशि लोभा ॥ इहां यतनी कथा छोड़ि दिप
प्रसंग मिलाइवे हेतु हम लिखि दिया ॥ ३ ॥ ४८ ॥

राग गट—देखि मुनि राखरि पद आजु । भयो प्रथम
रनती में भव तहां जहां लो साधु समाजु ॥ १ ॥ चरन चंदि
कारजोरि निहारत कहिय कृपा करि काजु । मेरे कछु न दूदिय
राम विनु देख गेह सब राजु ॥ २ ॥ भलो कही भूपति चि
भुवन में को मुहूर्ती सिरताजु । तुलसी राम जनम लै जनि
अत सकल मुहूर्त को साजु ॥ ३ ॥ ४९ ॥

देखि इ० पद सुगम ॥ ३ ॥ ४९ ॥

राजन रामलघन जौ दोजै । जस रावरो लाभ टोटनिह
मुनि सनाथ सब कीजै ॥ १ ॥ डरपत हौ सांचेहु सनेहवस
सुत प्रभाव विनु जाने । वृक्षिये वामदेव अरु कुलगुरु तुम
पुनि परम सयाने ॥ २ ॥ रिपुरन दलि मधराषि कुसल अति
अतप दिननि घर ऐहैं । तुलसिदास रघुवंसतिलक कौ
कवि कल कौरति गैहैं ॥ ३ ॥ ५० ॥

राजन इ० पद सुगम ॥ ३ ॥ ५० ॥

रहे ठगि से नृपाति सुनि सुनिबर की बैन । कहिन सकत
कछु राम प्रेमवस पुलकगात भरे नीर नैन ॥ १ ॥ गुरु बसिष्ट समु-
भाथ कछौ तब हिय हरषाने जानि सेषसयन । सौमे सुत गहि
पानि पांय परि भूसुर उर चले उमगि चयन ॥ २ ॥ तुलसी
प्रभु जोहत पोहत चित सोहत मोहत कोटि मयन । मधु-
माधव मूरति दोउ संग मानो दिनमनि गमन कियो उत्तर
अयन ॥ ३ ॥ ५१ ॥

रहे ठगि सु० ॥ १ ॥ विश्वामित्र जू चैन कहैं आनन्द में उमगि
चले ॥ २ ॥ गोसाईं जी कहत हैं कि कोटि काम के मोहत जो प्रभु
सोभत हैं सो देखत मात्र चित कों पोहि लेत हैं अर्थात् अपने में लगाइ
लेत हैं मानो चैत्र बैसाख रूप दोउ मूरति संग लै विश्वामित्ररूप सूर्य
उत्तर दिसा को गवन कियो भाव चैत्र बैसाख पाय सूर्य अति प्रताप-
युक्त होत हैं तैसे इन दोऊ भैयन को पाय विश्वामित्र जू भण ॥ ३ ॥ ५१ ॥

राग सारंग । रियि संग हरषि चले दोउ भाई । पितु पद
वंदि सीस लियो आयसु सुनि सिप आसिप पाई ॥ १ ॥ नील
पीत पायोज बरन वपुवयकिसोर धनि आई । सर धनु पानि
पीत पट कटितट कसे निपंग बनाई ॥ २ ॥ कलित कंठ

मनिमाल कलिवर चंदन पौरि सुझाई । सुंदर बदन सरोरुह
लोचन मुख छवि वरनि न छाई ॥ ३ ॥ पल्लव पंख सुमन
मिर मोहत क्यों कही वेध लोनाई । मनो मूरति धरि उभय
भाग भई त्रिभुवन सुंदरताई ॥ ४ ॥ पैठत सरनि सिलनि
चटि चितवत घगमृग वन रुचिराई । सादर सभय सप्रेम
पुलकि मुनि पुनि पुनि लेत बोलाई ॥ ५ ॥ एक तीर तकि
इती ताडका विद्या विप्र पठाई । राख्यो जज्ञ जीति रजनीचर
भइ जग विदित बड़ाई ॥ ६ ॥ चरन कमल रज परसि
अहल्या निज पति लोक पठाई । तुलसिदाम प्रभु के वूझे
मुनि मुरसि कथा सुनाई ॥ ७ ॥ ५२ ॥

पिताकी शिक्षा छानि आशा शिर धरि लिए फिर पद कों बंदि आशिष
पाई कै कृपि के संग हरि कै दोऊ भाई चले ॥१॥ इयाम पीत कमल
के समान सरीर के वर्ण हैं औ किशोर अवस्था बनि के आई अर्थात् भली
भांति आई है वान धनुष हाथ में है औ कटि देश में पीत पट है औ तामें
तरकस बनाय कै कैसे हैं ॥२॥ कंठ में मणिमाल शोभित है औ सरीर
में सुंदर चंदन की खौरि है सुंदर मुख औ कमल सम लोचन हैं मुख
की छवि वरनी नहीं जाति है ॥३॥ अपर पद सु० ॥४॥५॥६॥७॥५२॥

राग नट । दोऊ राजसुवन राजत मुनि के संग । नय
सिप लोने लोने बदन लोने लोचन दामिनि वारिद्वर
वरन अंग ॥ १ ॥ सिरसि सिषा सुझाई उपवीत पीत पट
धनु सर करकुसे कटि निपंग । मानो मय रुज निसिचर
हरिबे को सुत पावक के साथ पठये पतंग ॥ २ ॥ करत छाड़
घन वरपै सुर मुमन छवि वरणत अतुलित अनंग । तुलसी
प्रभु विलोकि मग लोग पग मृग प्रेम मगन रंगे रूप रंग
॥ ३॥५३॥

होने सुंदर लोचन नेत्र दामिनि वरुण अंग श्रीलक्ष्मण जी
और मेघवरुण अंग श्री राम जी को है ॥ १ ॥ मानो मुख के
रूप निशाचर हरिव को अग्नि के माथ पुत्र जो अश्वनी कुमार
को सूर्य पदण हैं उहां पावक विश्वाग्नि जू हैं अश्वनी कुमार रूप
भाई हैं सूर्य चक्रवर्ती महाराज हैं ॥ २ ॥ मेघ छांह करत हैं देवता
वर्षत हैं और अनेक अनंग मम छवि वरनत हैं वा छवि वरनत में काम
मुल्लित होत है-सा अनुलित जो छवि ताको काम वरनत है ॥ ३ ॥ ५३

राग कल्याण । मुनि के संग विराजत वीर । काक
धर कर कोदंड सर सुभग पीत पट कटि तूनौर ॥ १ ॥ व
इंदु अंभारुह लोचन स्वाम गौर सोभा सदन सरीर । पुन
रिपि अश्लोकि अमित छवि उर न समात प्रेम को भोर
प्रेलत चलत करत मग कौतुक बिलमत सरित सरोवर तो
तोरत लता सुमन सरसीरुह पियत मुधासम सीतल नौर
द्वैठत विमल सिलनि विटपनि तर पुनि पेंनि वरनत
समीर । देखत नटत कोकि बाल गावत मधुप सराल कोकि
कीर ॥ ४ ॥ नयननि को फल लेत निरधि मृग पग सु
वज्रधू अहोर । तुलसी प्रभुहि देत सख आसन निज
मन मृदु कामल कुटोर ॥ ५ ॥ ५४ ॥

काक पक्ष जुलुफ कोदंड धनुष तूनौर तरकस ॥ १ ॥ इंदु के
अंभारुह कमल ॥ २ ॥ सरसीरुह कमल ॥ ३ ॥ नाचत जो मो
औ सुंदर गावत जो भ्रमर हैं और हंस कोकिल सुआ जे हैं तिन
देखत हैं ॥ ४ ॥ मृग पक्षी गौर और पारिकन के रंजवाली जो सी
रि सा नयननि को फल लेत हैं गोसाई जी कहत हैं कि सब प्रभु
पायो जे मन रूप कुटी में कामल कमल को आसन देत हैं
जे अपन कफ को कटोर जानि अस भानना करत हैं ॥ ५ ॥ ५४ ॥
नर भागन नहरा—मोहत मग मुनि संग दोउ भाई । त

तमाल चारु चंपक छवि कवि मुभाय कहि जाई ॥ १ ॥ भूपन
वसन अनुहरति अंगनि उमगति सुंदरताई । वदन मनोज
सरोज लोचननि रही है लोभाइ लोनाई ॥ २ ॥ अंसनि
धनु सर करकमलनि कटि कसे हैं निपंग वनाई । सकल
भुवन सोभा सरवस लघु लागत निरपि निकाई ॥ ३ ॥ महि
मृदु पय घनछाँछ सुमन सुर बरपि पवन सुपदाई । जल-
धलरुह फल फूल सलिल सब करत प्रेम पहुनाई ॥ ४ ॥
सकुच समीत विनीत साथ गुरु बोलनि चलनि सुहाई ।
पग मृग विचित्र विनोक्त विच विच लसत ललित लरि-
काई ॥ ५ ॥ विद्या दर्ई जानि विद्यानिधि विद्याह लही
यडाई । ग्यान दली ताडका देपि रिपि देत असीस अघाई
॥ ६ ॥ वृक्षत प्रभु मुरसरि प्रसंग कहि निज कुल कथा सुनाई ।
गाधिसुचन सनेह-मुप सम्पति उरयासम न समाई ॥ ७ ॥
वन वासी बड जतो जोगि जन साधु सिद्धि समुदाई । पुजत
पेपि प्रीति पुलकात तन नयनलाभ लुटि पाई ॥ ८ ॥ मप
राघ्यो पलदल दलि भुजवल वाजत विबुध बधाई । नित
पद्यचरितसहित तुलसांचित वसत लपन रघुराई ॥ ९ ॥ ५५ ॥

सुंदर तमाल तमाल के वृक्ष सम श्रीरघुनाथ की औ चंपक सम
श्रीलक्ष्मण की छवि यह कवि मुभाव ने कहि जात है । कविमुभाव
कहिये को यह भाव कि भावः जो न घटे सो पटावना । कविन का
मुभाव होत है ॥ १ ॥ अंगनि के अनुरूप भूपन वसन है अर्थात्
श्रीरामजी को पीत वसन औ पीत मणि आदि को भूषण है औ
श्रीलक्ष्मणजी को नीलवसन औ नीलमणि आदि को भूषण है औ सुंदर-
ताई उमगति है औ मुखन पर पाय की नैनन पर कमलन की शोभा
लोभाय रही है ॥ २ ॥ अंसन कहें कांपन पर सरवस कहें सब ॥ ३ ॥

पूरनविधु वदन मदन मन मोहै ॥ ६ ॥ सिरनि सिपंड
मुमन दल मंडन बाल सुभाय बनाये । केलि अंक तनु रेनु
पंक जनु प्रगटत चरित चुराये ॥ ५ ॥ मय रापवे लागि
दमरघ सो मागि आश्रमहि आने । प्रेम प्रजि पाहुने प्रानप्रिय
गाधिमुचन सनमाने ॥ ६ ॥ साधन फलसाधक सिद्धनि के
लोचनफल भवही के । सकल सुकृतफल मातु पिता के
जीवन धन तुलसी के ॥ ७॥५६ ॥

सुंदर मंगल मय नृपालक हैं, मंजुल मंगल कहिये को यह भाव
कि जेहि के नाम लेवे ते अमंगल नहि जात हैं, मुनि औ मुनि की पत्नी
औ मुनि के बालक कोमल मनोहर जोड़ी देखि कै कहत हैं ॥ १ ॥
नाम औ रूप योग्य वेष औ अवस्था से श्रीराम लपन अति लोने हैं
मानो मेघ दामिनि काम मरकत मणि औ सोना ने इनही तें छवि ली
है ॥ २ ॥ कमल सम चरण है कटिदेश में पीतपट औ तरकस औ
वान धनु धारन किए हैं । सिंघ सम कांध हैं, काम रूप हाथी के श्रेष्ठ सुंद
सम विशाल भुजा औ पराक्रम भारी है ॥ ३ ॥ दूषणरहित जे समय सज
भूषण ते सुअंगनि पाय सोभत हैं । दूषणरहित कहिये को यह भाव कि
बहुत मणि दोष सहितो होत हैं । नवीन कमल सम नेत्र हैं पूर्णचंद्र
सम मुख है सो मदन को मन मोहत है ॥ ४ ॥ शिर पर मोरपंख औ
फूल दल को भूषण बाल सुभाय ते बनाए हैं । खेल कै चिन्ह जो तनु
में रेनु औ पंक सो मानहु चोराए चरित को प्रगटत है भाव विश्वामित्र
जी को जो आख बचाय कै खेले कूदे हैं ताको प्रगटत हैं ॥ ५ ॥ विश्वा-
मित्र जू यज्ञ राखिये के हेतु चक्रवर्ती महाराज सों मांगि के आश्रम में
ले आए प्रान ते जिय जो पाहुन दोऊ भाई तिन्ह को प्रेम ते पूजि कै
सन्मानत भए ॥ ६ ॥ साधन इ० सु० ॥ ७ ॥ ५६ ॥

राग सूडव । रामपद पटुम पराग परी । रिपितिय
त्यागि तुरत पाहनतन कबिमय देह धरी ॥ १ ॥ प्रवल पाप
पतिसाप दुसह दव दारुन जरनि जरी । कृपा सुधा सीधी

विवुध वेलिं ज्यौ फिरि सुप फरनि फरी ॥ २ ॥ निगम चगम
मूरति महेश मति युवति वगय वरी । सोइ मूरति भइ जानि
नयनप्रथ एक टक ते न टरी ॥ ३ ॥ वरनत हृदय सह
शील गुण प्रेम प्रमोद भरी । तुलसिदास ऐसि केहि आत
की आरति प्रभु न हरी ॥ ४॥५७ ॥

पराग धूरि पाहन पाखान ॥ १ ॥ प्रवल पाप से जो पानिशाप
दुःसह अग्नि तेहि करि कठिन जगन से जो जरी रही सो कृपारूपी अमृत
से सींची गई फेरि कल्पलता के समान सुखरूप फरानि मे फरी । पां-
“गच्छतस्तस्य रामस्य पादस्पर्शान्महाशिला । काचिद्योपाऽभवत्सद्योविस्मि-
मुनिरब्रवीत् ॥ शापदग्धा पुरा भर्त्रा राम शक्रापराधतः । अहल्याख्या शिला
जहो शतलिंगीकृतः स्वराद् ॥ त्वदंघ्रिस्पर्शनात्तस्यै शापान्तं प्राह गोतमः
तस्मादियं ते पादाब्जस्पर्शाच्छुद्धाऽभवत्प्रभो’ ॥ २ ॥ जो मूरति वेद को
अगम अर्थात् वरनन में औ महेश की मतिरूप युवती ने चुनि कै वरी
वराय वरी कहिये को यह भाव कि विष्णु नृसिंह वामनादि को तनि
वरी सोई मूरति नयन गोचर भई जानि एक टक ते न टरी ॥ ३ ॥ ह
शील गुण के हृदयमें वरनत मात्र प्रेम औ आनंद से भरत भई । गोसां
जी कहत हैं कि मनु यहि प्रकार ते केहि आरत की आरति नहीं हो
है । भाव सब की हरी हैं ॥ ४ ॥ ५७ ॥

परत पद पंकज रिपिरवनी । भई है प्रगट अतिदिब्य
देह धरि मानो विभुवन कबिछवनी ॥ १ ॥ देपि बडी आचर
पुलकि तन कहत मुदित मुनिभवनी । जो चलि है रघुनाथ
पयाटे सिला न रहि है अदनो ॥ २ ॥ परसि जो पाय पुनीत
सुरसरी सोहै तौनि पथ गवनी । तुलसिदास तेहि चरन
रेनु की महिमा कहै मति कवनो ॥ ३ ॥ ५८ ॥

छवनी कन्या ॥ १ ॥ मुनिभवनी मुनिपत्नी ॥ २ ॥ तीनि प
स्वर्ग मर्त्य पाताल लोक ॥ ३ ॥ ५८ ॥

भूरि भाग भाजन भई । रूपरासि अवलोकि बंधु दीउ
 प्रेम सुरंग रई ॥ १ ॥ कहा कहै केहि भांति सराहै नहि
 करतूति नई । विनु कारन करुनाकर रघुवर केहि केहि
 गति न दई ॥ २ ॥ करि बहु विनय राखि उर मूरति मंगल
 मोद मई । तुलसी ह्वै विसोक पतिलोकहि प्रभुगुन गनत
 गई ॥ ३ ॥ ५८ ॥

भाजन पात्र, सुरंग रई सुंदर रंग में रंगी ॥ १ ॥ विनु कारन विनु
 हेतु ॥ २ ॥ करि इ० सु० ॥ ३ ॥ ५९ ॥

राग कान्हरा—कौंसिक के मय की रपवारे । नाम राम
 बन लपन ललित अति दमयराज दुलारे ॥ १ ॥ मैचक
 पीत कमल कोमल कल काकपक्षधरवारे । सोभा सकल
 सकेलि मदन विधि सुकर सरोज संवारे ॥ २ ॥ सहस्र समूह
 सुबाहु सरिस पल समर सूर भटभारे । कैलि तून धनु बान
 पानि रन निदरि निसाचर मारे ॥ ३ ॥ गिपितिय तारि
 खयंधर पिपन जनक नगर पगधारे । मग गर नारि निहारत
 सादर कहि घडभाग हमारे ॥ ४ ॥ तुलसी सुनत एक एकनि
 सो चलात बिलोकनिहारे । मूकनि वचन लाहु मानो बंधनि
 लहे हैं बिलोपन तारे ॥ ५ ॥ ६० ॥

अब मग के नर नारिन की उक्ति लिखत हैं कौंसिक इ० सु० ॥ १ ॥
 प० पालक श्याम पीत कोमल कमल सम हैं औ सुंदर जुनक धारन किए
 हैं मानो सकल सोभा समेटि के काम रूप बिधाना ने अपने कर कमल
 से मंगारें हैं, इहां लुभोन्मेषा हैं । २ ॥ समर में मूर बड़े सोदा सुबाहु
 सरिस खल अनेक सहस्र निशाचरन को खलबाह के नरकम औ धनुष
 पान जो हाथ में हैं तारी सो रण में निरादर करि कै मारे ॥ ३ ॥ देखन
 परें देखन ॥ ४ ॥ मानो मूकनि ने वचन लाहु औ अंधनि ने नेधन
 की पुतरी लहे हैं ॥ ५ ॥ ६० ।

राग टोड़ी--आए सुनि कौंसिकु जनक हरपाने हैं।
 वोलि गुरु भूसुर समाज सो मिलन चले जानि बडे भाग
 अनुराग अकुलाने हैं ॥ १ ॥ नाइ सीस पगनि असीस पाइ
 प्रमुदित पांवडे अरघ देत आदर सो आने हैं। असन वसन
 वास कौ सुपास सब विधि पूजि प्रिय पाहुने सुभाय सनमाने
 हैं ॥ २ ॥ विनय बडाई रिपि राजकु परस्पर करत पुलकि
 प्रेम आनद अघाने हैं। देये राम लपन निमिष विधकित भइ
 प्रानहु ते प्यारे लागे विनु पहिचाने हैं ॥ ३ ॥ ब्रह्मानंद दृढ
 दरस सुप लीयननि अनुभए उभय सरस राम जाने हैं। तुल-
 सी विदेह की सनेह की दसा सुमिरि मेरे मनमाने राउ
 निपट सयाने हैं ॥ ४ ॥ ६१ ॥

कौशिक को आगमन सुनि अपने बडे भाग जानि अनुराग से
 विहल भए हैं औ हरपाने हैं जे जनक महाराज सचिव आदि तिन के
 सहित मिलिबे को चले। शंका। गुरु को कैसे बोलाए ? उत्तर। श्रीजनक
 महाराज के गुरु जागबल्क जी हैं सतानंद जी पुरोहित हैं पुरोहित को
 भी गुरु कहत हैं ॥ १ ॥ प्रिय पाहुने विश्वामित्र जी ॥ २ ॥ विनय १०
 सु० ॥ ३ ॥ ब्रह्मानंद उर से औ रामदरसन सुख नेत्रन तें दूनों अनुभव
 किए। तब सरस राम हैं यह जाने अर्थात् नेत्रमुख को अधिक माने।
 गोसांई जी कहत हैं विदेह के स्नेह की दसा सुमिरि कै हमारे मन ने
 मान लिया कि महाराज अत्यंत चतुर हैं भाव ज्ञान में न भूले। “श्रेयः
 श्रुति भक्तिमुदस्य ते विभो क्लिश्यन्ति ये केवलबोधलब्धये। तेषामसौके-
 वलएवशिष्यते नान्यद्यथास्थूलतुपावधातिनाम्” ॥ ४॥ ६१ ॥

राग मलार—कोसल राय के कुंअरोटा। राजत रुचिर
 जनकपुर पैठत स्याम गौर नीकी जोटा ॥ १ ॥ चौतनी सिरनि
 कनककालि काननि कटि पट पीत सोहाए। उर मनिमाल
 विसाल विलोचन सीय खयंवर आए ॥ २ ॥ वरनि न जात

मनहि मन भावत सुभग अवहि वय घोरी । भइ है मगन विधु
 घटन विलोक्त वनिता चतुर चकोरो ॥ ३ ॥ कहं सिवचाप
 लरिकवानि दूभत विहंमि चितै तिरछो हैं । तुलसी गलिन
 भीर दरमन लगि लोग अटनि अवरोहैं ॥ ४ ॥ ६२ ॥

कुअरांदा कई कुअर जोड़ा जोड़ी ॥ १ ॥ चौतनी टोपी कनककली
 सोना फो कलिकाकार कुंडल वा पीत रंग के पुष्प की कली फान
 पर खोसे हैं ॥ २ ॥ घरनि ६० सु० ॥ ३ ॥ अटनि अवरो है अटारिन
 पर चढ़े हैं ॥ ४ ॥ ६२ ॥

ए अवधिस के सुत दोऊ । चटि मंदिरनि विलोकाति
 सादर जनकनगर मय कोउ ॥ १ ॥ स्याम गौर सुंदर किसोर
 तन तून वान धनु धारो । कटि पट पीत कंठ मुकुतामनि भुज
 विसाल बल भारो ॥ २ ॥ सुप मयंक सरसोरुह लोचन तिलक
 भाल टट्टी भौंहें । कल कुंडल चौतनी चारु अति चलत मत्त
 गज गौंहें ॥ ३ ॥ विश्वामित्र हेतु पठए नृप इन्हहि ताडिका
 मारो । मय राख्यो रिपु जीति जानि जग मग मुनिबधू
 उधारो ॥ ४ ॥ प्रिय पाहुनि जानि नर नारिन्ह नयनन्हि अयन
 दये । तुलसिदास प्रभु देपि लोग सब जनक समान भये ॥ ५ ॥ ६३ ॥

गजगौंहें गज गति से, अयन गृह, जनक समान भए विदेह भए,
 अपर पद सुगम ॥ ५ ॥ ६३ ॥

राग टोड़ी—वृभूत जनकनाथ ठोटा दोउ काके हैं ।
 तरुन तमाल चारु चंपक वरन तनु कौने बडभागी के
 सुकृत परिपाके हैं ॥ १ ॥ सुप के निधान पाये हिय के पिधान
 लाये ठग कैसे लाडूपाये प्रेम मधु छाके हैं । स्वारधरहित पर-
 मारथी कहावत हैं मे सनेहविवस विदेहता विवाके हैं ॥ २ ॥

शील मुधा के अगार मुपमा के पारावार पावत न पर पार
 पैरि पैरि थाके हैं । लोचन ललकि लागे मन अति अनुराग
 एकरस रूप चित्त सकल सभाके हैं ॥ ३ ॥ जिय जिय जोरत
 सगाई राम लपन सो आपने आपने भाय जैसे भाय जाके हैं ।
 प्रीति को प्रतीति को सुमिरवे को सिद्धवे को सरन को समर
 तुलसीझ ताके हैं ॥ ४ ॥ ६४ ॥

जनक महाराज वृक्षत हैं कि हे नाथ ए दोउ बालक कहि के हैं । ए
 जे नूतन तमाल औ सुंदर चंपा के वरन सम शरीर ते कौने बड़े भारी
 के सुकृत के फल हैं ॥ १ ॥ अब कवि की उक्ति है मुख के रासि पाए
 हृदय को पिधान कहैं डपना लगावत भए भाव जब कोऊ धन पावत है
 तब गुप्त और में तोपि कै धरत है, इहां गुप्त और हृदय है, ताको पिधान
 देहाध्यास भूलना है, उग के लडुआ अस खात भए अर्थात् बिख डारि
 लडुआ उग खवावत हैं, तब खवइआ अचेत हैं जात है तस भए औ मंग
 रूपी मदिरा में छकि गए हैं । कहावत तो रहे स्वारथरहित परमार्थी पर
 सनेह के विशेष यस भए तें विदेहता रहित है गए हैं । भाव सनेहविवस भए
 तातें स्वारथसहित औ विदेहता विवा के ताते परमार्थ रहित । इहां गोसांई
 जी यह जनाए कि परमार्थी के फल रूप राम है ॥ २ ॥ सकल सभा के
 एकरस रूप में चित्त हैं ताते लोचन ललकि के लागे औ मन अति अनु-
 रागे ते लोचन मन शील रूप अमृत के गृह परम शोभा के समुद्र को
 पैरि पैरि थाके हैं पर पार नहीं पावत हैं । शील मुधा के अगार फरि
 को यह भाव कि समुद्र मुधा को भवन है । औ यह परम शोभा रूप
 समुद्र शील रूप अमृत को भवन हैं । थाके हैं कहिये को यह भाव कि
 अघाते नहीं हैं पारावार समुद्र का नाम है । “समुद्रोच्चिरकूपारः पारावारः
 सरित्पतिः” जाके जेमे जैसे भाव हैं तेहि भाव के अनुकूल अपने अपने
 जिय में राम लपन गो नाना जोरत है । प्रीति कहिये को विश्वास करि
 मुमिरि को सवन करि को औ सरन जाइवे को योग्य जो ताको
 सिद्ध न ताके हैं ॥ ४ ॥ ६४ ॥

राग मलार—ए कौन कहाँ ते आए । नील पीत पायो ज
वरन मनहरन सुभाय सुहाये ॥ १ ॥ मुनिसुत किधौ भूप-
यालक किधौ ब्रह्म जीव जग जाए । रूप जलधि के रतन
सुखि तिय लोचन ललित ललाये ॥ २ ॥ किधौ रविमुअन
मदन रितुपति किधौ हरिहर वेप बनाए । किधौ आपने
सुकृत सुरतरु के सुफल रावरेहि पाये ॥ ३ ॥ भए विदेह
विदेह नेहवस देहदसा विसराए । पुलकगात न समात
हरप हिय सलिल मुलोचन छाए ॥ ४ ॥ जनकवचन मृदु
मंजु मधुर भरे भगति कौसिकहि भाये । तुलसी अति आनंद
उमगि उर राम लपन गुन गाये ॥ ५ ॥ ६५ ॥

श्यामपीत कमल सम वरन औ मन के हरनिहारे स्वाभाविक सुंदर
जे ए ते कौन हैं औ कहाँ ते आए हैं ॥ १ ॥ कैधौ मुनिसुत हैं कैधौ
राजा के बालक हैं । इहां मुनि के संग ते मुनिपुत्र का संदेह औ राज-
कुमार सम देखि राजपुत्र का संदेह वा विश्वा मित्र जी के कोई पहिले
के संबंधी तो नहीं हैं याते क्षत्री का संदेह कदापि अब के सम्बन्धी
होहिं याते ब्राह्मण का संदेह हैं कैधौ जीव औ जगत को जो उत्पन्न
किए जे सोई ब्रह्म हैं । मानसरामायन में स्पष्ट करि लिखा । ब्रह्म जो
निगम नेति कहि गावा । उभय वेप धरि की सोइ आवा ॥ इहां अत्यंत
शान्त औ चमत्कार देखि ब्रह्म कहे । कोऊ अस अर्थ करत हैं कैधौ ब्रह्म
जीव ही तो नहीं जगत में जन्मे हैं कैधौ रूप रूपी समुद्र के मणि हैं
कैधौ ए लला सुंदर छवि रूप तिय के सुंदर लोचन हैं ॥ २ ॥ कैधौ
रविमुअन कहें हंस हैं, काऊ अस कहत कैधौ रविमुअन कहें अश्वनी-
कुमार सो तो नहीं हैं, कैधौ काम वसंत हैं रूप जलधि के रतन इहां से
औ मदन रितुपति किधौ इहां लो अत्यंत रूप देखि संदेह है । कैधौ
वेप बनाए भए हरि हर तो नहीं हैं । इहां अति तेजस्वी देखि हरि हर
का संदेह है, कैधौ अपने सुकृत रूप कल्पवृक्ष के सुंदर फल आप ही ने

पाए हैं अर्थात् दोऊ भाइन के इहां विश्वामित्र जी को सर्वोत्कृष्ट तपस्वी जानि तप के फल रूप में संदेह है ॥ ३ ॥ नेहवस देहदसा को विसराए ताते विदेह महाराज विदेह भए । इहां भए विदेह विदेह कहिये को यह भाव कि अवतारि नाम मात्र रहा है सांचे विदेह आज भए हैं वा अब तारि जगत में विदेह रहे अब ब्रह्मानन्द हुंते विदेह भए । इसी स्वरूपानन्द की वड़ाई जानना, पुलकावली अंग में है, हृद में हरप नहीं समात है औ नेत्रन ने आंसू छाए भाव जब हर्ष हृदय में न समायो तब नैन के राह बाहर भयो ॥ ४ ॥ जनक जी के सुंदर कोमल औ मीठे औ भगति भरे वचन कौसिक को भाए । गोसाईं जी कहत हैं अति आनंद जो सो हृदय ते उमगि के श्री राम लपन के गुन गावत भए अर्थात् जनक महाराज से सब कहि देत भए ॥ ५ ॥ ६५ ॥

कौसिक कृपालु हू को पुलकित तनु भो । उमगत अनुराग सभा के सराहे भाग देपि दसा जनक की कहिये को मनु भो ॥ १ ॥ प्रीति के न पातकी दिए हू साम पाप बडो मय मिसि मेरो तब अवध गवनु भो । प्रानहू ते प्यारे सुत मागे दिये दसरथ सत्यसंध सोच सहै सूनी सो भवनु भो ॥ २ ॥ काकसिपा सिरकर केलितूनु धनुसर बालक धिनोद जातुधाननि सो रनु भो । वृक्षत विदेह अनुराग पाचरल वस रिपिराज जाग भयो महाराज अनुभो ॥ ३ ॥ भूमि देव नरदेव सचिव परम्पर कहत हम को सुरतरु शिवधनु भो । मुनत राजाकी रीति उपजी प्रतीति प्रीति भाग तुलसी के भनि साहेब को अनु भो ॥ ४ ॥ ६६ ॥

कृपालु जो विश्वामित्र निन हू को तन रोमांच युक्त भयो अनुराग सभा के भाग मराह औ जनक जी की दसा देखि के कहिये को मनु भो ॥ १ ॥ अब वृत्तान्त करन हैं पानकी ने न पान के नहीं है औ नाप दिए हू में बडो पाप है तब मर के

दधाने मे मेगे अवध में गमन भयो । भवन मृनों सो भयो शोच सहे पर
मत्स्यमनिद्र जे दशरथ महागजने मान ह ते प्यारे मुन मांगिवे ते दिए ॥ २ ॥
शिर विगे जुनफ मात्र है अर्थान् हंरी आदि नहीं तरकम आ हाथ में
जे धनु धान ते ग्यन्वाह के है । भाव युद्ध के नहीं आ बालविनोद से
अर्थान् रोप मे नहीं आ युद्ध निशाचरन के नायकन में भयो, भाव
माधामन मे नहीं । “जान्निरक्षांमि दधानिपुष्पातीनि जातुधानः ।
राक्षस नायक इत्यर्थः ॥ अनुराग आ आश्रय के वम है विदेह महाराज
पृथन है कि हे ऋषिराज यग्य भयो तव विश्वामित्र जू बोले कि हे
महाराज अनुभो अर्थान् सम्यक् भयो वा महाराज अनुभो हे महाराज
आप ही अनुभव करिण जा यग्य न पूर्ण होना तो हम आनंदपूर्वक
इहां फंस आवने ॥ ३ ॥ मुनत मात्र रघुनाथ में राजा की रीति उपजी
भाव निश्चय भयो कि राजकुमार हैं नाने उपजी आ प्रीति प्रतीति उपजी
भाव ऐसे राक्षसन के मोर हैं तो क्यों न धनु तारंगे आ ब्राह्मण राजा
मंत्री परस्पर कहने हैं कि हम को शिवधनु कल्पवृक्ष भयो भाव यही
शिवधनु के प्रसाद से यह दर्शन पाए । राजा की रीति कहे व्यवहार
मुनत मात्र प्रतीति आ प्रीति उपजी कि भाग तुलसी के हैं कि भले
माहेय को गुलाम भयो । भाव जेहि सादव के पाए ते ब्रह्मज्ञ जे जनक
महाराज तेऊ अपने को कृतार्थ माने ॥ ५ ॥ ६६ ॥

चाख्यौ भलि बिटा देव दमरथ गाय के । जैसे राम लपन
भरत रिपुहन तैसे सौख सोभा सागर प्रभाकर प्रभाय के ॥ १ ॥
ताडका संघारि मप रापे नौके पाने ब्रत कोटि कोटि भट
किए एक घाय के । एक वान बेगही उडाने जातुधान जात
सूपि गए गात है पतउआ भये वाय के ॥ २ ॥ सिला छोरे
कुवत अहल्या भई दिव्य देह गुन पेपे पारस के पंकरुछ पाय
के । राम के प्रसाद गुरु गौतम यससु भये रावरेहु सतानंद
पूत भये माय के ॥ ३ ॥ प्रेम परिहाम पोये वचन परस्पर
कहत सुनत सुप सबही सुभाय के । तुलसी सराहे भाग

कौसिक जनक जू के विधि के सुठर होत सुठर मुदाय की ॥ ४१६७

हे देव हे महाराज राजा दशरथ के चारो बेटा भले हैं जैसे राम लपन तैसे भरत शत्रुहन शील शोभा के समुद्र औ प्रताप के सूर्य हैं । इहां चारो भाइन को वर्णन करि यह जनाये कि आप को अन्यत्र वर न इंदनो परैगो ॥ १ ॥ ताड़कादि वध फेर कहत हैं ताड़क मारि कै यज्ञ राखे औ प्रतिज्ञा भले पाले कोटि कोटि भट एक एक चोट के किए तिन में एक चोट के जातुधानै वान के वेग से उड़ाने जात हैं ताते तिन के गात्र सूखि गए बवंडर के पत्ता सम भाव फिर भूतल में न आए ॥ २ ॥ शिला के कोर छुअत अहल्या दिव्य देह भई चरण कमल के पारस के गुण देखे भाव जैसे पारस के छुए लोहा सोना होत तैसे जड ते दिव्य भई श्रीराम के प्रसाद ते रावरे गुरु जो गौतम जी ते खसम भए । भाव रडुआपन छुटा औ सतानंद अपने माता के पूत भए । भाव बे महतारी के दुअर कहावत रहे सो छुटा ॥ ३ ॥ प्रेम औ परिहास तें पुष्ट भए जे सुंदर भाव के वचन परस्पर कहत हैं ते सुनत मात्र सब ही को सुख भयो । गोसाईं जी कहत हैं कि कौशिक जनक जी को भाग सराहे औ कहे विधि अनुकूल से सुंदर दांव के पासा सुदार होत है इहां सुंदर पासा परना रघुनाथ का आगमन है ॥ ४॥६७ ॥

ए दोऊ दशरथ के वारे । नाम राम घनस्याम लपन लघु नप सिप अंग उज्यारे ॥ १ ॥ निज हित लागि मांगि आनि मै धरम सेतु रपवारे । धीर वीर विरुदैत बांकुरे महा बाहु बल भारे ॥ २ ॥ एक तीर तकि हती ताड़का किय सर साधु सुपारे । जज्ञ रापि जग सापि तोपि रिपि निदरि निसाधर मारे ॥ ३ ॥ मुनितिय तारि स्रखंवर पेपन आए मुनि वचन तिहारे । राउ देपि है पिनाक नेक जेहि नृपति लाज प्रर जारे ॥ ४ ॥ सुनि सानंद सराहि सपरिजन वार्गहि वार निहारे । पूजि सप्रेम प्रसंसि कौसिकहिं भूपति सदन

संधारे ॥ ५ ॥ सोचत सत्य सनेह विवस निसि नृपहि गनत
 एतारे । पठये वोलि भोर गुर के संग रंगभूमि पगुधारे ॥ ६ ॥
 अगर लोग सुधिपाइ मुदित सबहौ सब काज विसारे । मनहुं
 मघा जल उमगि उदधि रूप चले नदी नद नारे ॥ ७ ॥ ए
 केसोर धनु घोर बहुत बिलपाति विलोकनिहारे । टग्यौ न
 वांष तिन्ह ते जिन्ह सुभटनि कौतुक कुधर उपारे ॥ ८ ॥ ए
 जाने विनु जनक जानियत करिपन भूप हंकारे । नतत सुधा-
 सागर परिहरि कत कूप घनावत पारे ॥ ९ ॥ सुपमा सौल
 सनेह सानि मानो रूप विगंचि भँवारे । रोम रोम पर सोम
 काम सत कोटि वारि फेरि डारे ॥ १० ॥ कोउ कहै तेज
 प्रताप पुंज चित ये नहि जात भियारे । कुपत सरासन सलभ
 जरे गो ये दिनकर बंस दियारे ॥ ११ ॥ एक कहै कछु होउ
 सुफल भए जीवन जनम हमारे । अवलोकै भरि नयन आजु
 तुलसी के प्रानहुते प्यारे ॥ १२ ॥ ६८ ॥

उज्जारे फरे सुंदर ॥ १ ॥ धर्मसेतु के रक्षक धीर वीर विरदबाले
 बांके आजानु बांहु और भारी बल वाले जे श्री राम लपन निन को
 निज हित लागि में मांगि आने ॥ २ ॥ ३ ॥ धनु तोरै सो धरै जानकी
 यह बचन मुनि नृपति लाज जरिजारे लाज रूप ज्वर ते राजनि को
 निन्द ने जारे हैं ॥ ४ ॥ सपरिजन परिवार सहित जनक जी ॥ ५ ॥
 मत्स्य औ मनेह के बिबस ते सोचत हैं । भाव न मत्स्य छोड़न बनत न
 रामसेन हैं । राजा को तारा गनेन राखि गई । भाव कब बिहान होयगो ॥ ६ ॥
 मानो मघा नक्षत्र के जल ने नदी नारे उमगि के मगध के ओर चले
 इहां सुधि पावना मघा को जल है, उदधि थी राम को मरूप है, नदी
 नद नारे पुरवामी हैं ॥ ७ ॥ कौतुक में कुपर बहे पर्वत को निन्द
 उखारे भर्षान् रावणादि ॥ ८ ॥ हथारो पोलाए इहां मृशामागर ग्धुनाय
 हैं औ खारा कूप अनिष्टा हैं ॥ ९ ॥ परम शोभा शील औ खेद मानि

फै मानो इन के रूप ब्रह्मा ने मंगरि फिरि रोंम रोंम पर मन
चंद्रमा औ काम नेवछानरि करि दारि ॥ १० ॥ फोऊ कहत है
भैया तेज औ मनाप के पुंज हैं ताते नितए नहीं जान है । ए
धंस दीपक के लुअन मात्र गरासन रूप फनिगा नरंगो ॥ ११ ॥
जी कहत हैं आजु नयन भरि मान हुंते प्यार के अवलोकै ॥ १२ ॥

जनक बिलोकि बार बार रघुवर को । मुनिपद
नाथ आयसु अमीम पाइ एई वार्ते कहत गवन किये
को ॥ १ ॥ नोद न परत रात्रि प्रेम पन एक भांति
सकोवत दिरंघि हरिहर को । तुम्ह ते मुगम सब देव
को अब जमु हंस किये जोगवत जुग पर को ॥ २ ॥
संग कौसिक मुनाये कहि गुनगन आए दिपि दिनकर
दिनकर को । तुलसी तऊ सनेह को मुभाउ वाउ
चल दल को सो पात करै चित चर को ॥ ३ ॥ ६६ ॥

एई वार्ते कहत अर्थात् श्रीराम लक्ष्मण विषयक वार्ते कहत ।
राति में नींद नहीं परत जाते प्रेम औ प्रतिज्ञा एक भांति है । भाव
योग दूनों नहीं ताते सोचत हैं औ ब्रह्मा विष्णु शिव को सकोव
है देव ! तुम ते सब मुगम सुनत आए सो अब देखिवे को है अ
को उक्ति है कि श्री जनक महाराज अपने यस को हंस किए ताते
पर के योगवत हैं इहां दोऊ पर प्रेम औ पन है ॥ २ ॥
ऐसे महात्मा अर्थात् अनहोनी करनिदारे ते संग लेआए औ
के गुनगन मारीचादि वध औ अहल्या को पापान ते चैतन्य
कहि मुनाए औ आपो दिनकर कुल दिन कर को देखि आए ।
जाके देख ब्रह्मानंदो भूलि गयो सो गोसाईं जी कहत हैं ताहू पर
को सुभाव मानो वायु है सो पीपर के पात के समान चि
चल करत है ॥ ३ ॥ ६९ ॥

राग केदारा । रंगभूमि भोरे हो जाइकै । राम
लोगलटि है लोचन लाभ अघाड़कै ॥ १ ॥ भ

र घर पुर बाहर इहै चरचा रही छाड़कै । मगन मनोरथ
 ०६ नारि नर प्रेम विवम उठै गाड़कै ॥ २ ॥ सोचत विधि
 ति समुक्ति परस्पर कहत वचन विलपाड़कै । कुअर
 कशोर कठोर सगासन असमंजस भयो आड़कै ॥ ३ ॥
 मुक्त संभारि मनाइ पितर मुर सोस ईस पट नाड़कै ।
 घुघर कर धनुभंग चहत सब अपनो सो हितु चितु लाड़कै ।
 ॥ ४ ॥ लित फिरत कनसुई सगुन सुभ वृक्षत गनक बुलाइ-
 कै । मुनि अनुकूल मुदित मन मानहु धरत धीरजहि धाड़कै
 ॥ ५ ॥ कौसिक कथा एक एकनि सो कहत प्रभाव जनाइ
 कै । सौय राम संयोग जानियत रच्यौ विरंचि बनाइकै ॥ ६ ॥
 एक सगाहि सुवाहु भयन वर बाहु उछाह बठाइकै ।
 सानुज राज समाज विराजिहै राम पिनाकु चठाइकै ॥ ७ ॥
 बडौ सभा बडौ लाहु बडौ जसु बडौ बडाई पाइकै । को
 सोहिहै और को लायक रघुनायकहि बिहाइकै ॥ ८ ॥
 गवनिहै गंवहि गवाइ गरब गृह नृपकुल बलहि जलाइ-
 कै । भली भांति साहेब तुलसी के चलिहै व्याहि बजाइकै
 ॥ ९ ॥ ७० ॥

रंग इ० सु० ॥ १ ॥ मनोरथ जनित आनंद में नारि नर मगन हैं ।
 प्रेम के विशेष धस हैं ताते गाय उठे ॥ २ ॥ सोचत इ० सु० ॥ ३ ॥
 अपनो सो हितु चितु लायक अपने हित समान चित्त लगायक ॥ ४ ॥
 कनसुई कानाफुसुकी अर्थात् सलाह की बातें सुनत फिरत औ
 ज्योतिपी बोलाय के सुभ सगुन वृक्षत अनुकूल सगुन मुनि मुदित होत
 हैं मानो सगुन नहीं सुनत हैं धीरज को धाड़ के धरत हैं ॥ ५ ॥ प्रभाव
 जनाय के कौशिक की कथा एक एकनि सो कहत । भाव जो नहीं
 होनिहार ताके करनिहारे विश्वामित्र जी हैं ताते सीताराम जू को संयोग

चिरंजि ने पनाग के रत्नों पर जानियत है ॥ ६ ॥ एक उज्ज्वल रत्न
के सुपाद के मर्मादेशों को रत्नाग की भेद बाहू है ताको सगीरे
करन है कि पिनाक चक्षुष के अनुन गहिन श्रीगमगत ममान में दोन
है ॥ ७ ॥ यदी १० सु० ॥ ८ ॥ नृपन के कूल कई ममूर लनाई है
गर्ग पल को गंगाग गर्वाह में भर्मान् यदाने में शूर को मर्ति
॥ ९॥७० ॥

राग टोड़ो—भार फूल घीनवे को गए फुलवाइ है।
सौमनि टैपार उपधात पोत पट कटि दोना वाम करि
सलोने में सवाई है ॥ १ ॥ रूप के अगार भूप के कुमार सुत
मार गुरु के प्रान अधार अंग सैयकाई है। नीच ज्यो टाव
करे रूप राधे अनुमते कौमिक से कोहो बस किये दुहु भाई
है ॥ २ ॥ सपिन सहित तैहि औसर विधि संजोग गिरिजा
पूजिबे को जानको जू आई है। निरध लपन राम जाने रि-
पति काम मोहि मानो मदन मोहनो मूडनाई है ॥ ३ ॥
राघो जू शो जानको सोचन मिलिबे को मोद कहिबे को
जोग न में वाते सौ बनाई है। स्वामी सोय सपिन्ह लपन
तुलसीको तैसो तैसो मनभयो जाको जैसीसे सगाई है ॥ ४ ॥

भोरही फूल घीनिबे को फुलवारी में गये हैं शिरन पर दोपी
औ पीत यज्ञोपवीत है और पीत पट कटि में है इहां देहली दिपक न्या
करि के पीत को दूनो के संग करना औ वाम हाथन में दोना है
सवाई सलोने भए हैं। सवाई होवे को यह भाव कि अंग आवरण रति
है वा कदापि कोऊ आए अपने रूप से दवाय न लेय ताते सवाई भ
वा कुछ मदन महीप का भी रंग आय पड़ा है ताते वा विदेह महारा
की वाटिका की छवीली फूली कलीन ते वाम अंग भूषित है ता
सवाई सलोने भए हैं सो जब कलिन ते एतना भए तब आगे न
जानते कि केतना होंहिगे वा दोना लेने से एक मुद्रा विचित्र कई

ताने मचाई कहे एक तो रूप के गृह हैं भाव रूप मात्र के आधारभूत हैं ताहू पर भूय के कुमार हैं अर्थात् काहू साधारण के नहीं ताहू पर मुकुमार हैं औ गुरु के प्राण आधार हैं तथापि संग में सेवकाई करत हैं कैसे करन सो लिखत हैं नीच जैसे टडल करे तस करत आं रूप राखे काम करत हैं । कागिक ऐमे क्रोधो को दोऊ भाइ बस किए हैं ॥२॥ श्रीलखनलाल श्रीराम जू को निरखे जाने कि यह राजकुमार नहीं हैं बसंत औ काम हैं ताने मोहि गई मानो देखि न मोही काम ने मूढ पर मोहनी नाई है ताने मोही ॥३॥ श्रीराघव जू औ श्रीजानकी जू के नजरि मिलवे को जो आनंद सो कहिबे योग्य नहीं है । हम ने धनाई बातें ऐसी कही हैं रघुनाथ जी को आं जानकी जू को सखिन को औ लखनलाल जू को आं तुलसी कां जाकी जैसी सगाई है ताको तैसो मन होत भयो इहां आनंद में भूलि गोसाईं जू अपने को प्रत्यक्ष सम कहे ॥ १॥७१ ॥

पूजि पारवतो भजे भाय पाय परि कै । सजल सुलोचन सिधिल तन पुलकित आवे न वचन मन रह्यो प्रेम भरि कै ॥ १ ॥ अंतरजामिनि भवभामिनि स्वामिनि सोही कही चही वात मातु अंत तौ हो जरि वै । मूरति कृपाल मंजु माल दै बोलत भई पूजो मनकामना भावतो बरु धरि कै ॥२॥ राम कामतरु पाइ वलि ज्यों बोडी बनाइ माग कोपि पोषि फूलि फूलि फरि कै । रह्योगी कहोगो तब सांची कही अंवा सिय गहे पांय है उठाय माथे हाथ धरि कै ॥ ३ ॥ मुदित असीस सुनि सोम न ड पुनि पुनि विदा भई देवी सो जननि डर डरि कै । हरपी सहेलो भयो भावतो गावतो गोत गौनी भवन तुलसी के प्रभु को छियो हरि कै ॥४॥७२॥

पूजि इ० सु० ॥ १ ॥ अंत तो हों लरिके कहिबे को यह भाव कि अंतर्जामिनी सो कुछ न कहा चाहिए क्योंकि सब जानत ही हैं पर

कहिबे को जो चाहत हौ सो लरिवा हौ सो कृपाला जो मूरति
 सुंदर माला दै करिकै बोलति भई कि मन भावतो वर वरि के तुम
 मनकामना पूजि जाउ श्रीरघुनाथरूप कल्पवृक्ष पाइके फैली । बनी
 समान बनाय करि कै माग कोपि ते तुष्ट पुष्ट है फैलि फूलि फि
 जय रहोगी तब कहोगी कि अंवा ने सांची कही यह सुनि जानी
 चरन गहे तब है कहै भाव यह क्या करनी हौ औ मागे हाथ प
 उठाय लिण् ॥ ३॥४॥७२ ॥

रंगभूमि आये दसरथ के किसोर हैं । पियन मो देख
 चले हैं पुर नर नारि वारे दूटे अंध पंगु कारत निरो
 हैं ॥ १ ॥ नील पीत नीरज कनक सरकरा धन दामि
 वरन तन रूप के निचोर हैं । सज्ज मलोग राम भद्र
 ललित नाम छँसे सुने तेसई कुपेर सिरमोर हैं ॥ २ ॥ श
 सरोज चारु जंघा जानु उरु काटि कंधर बिसाल बाहु रा
 परजोर हैं । नीके कै नियंग कसे कर कमलनि लगे ब
 विमिषामन मनोहर कठोर हैं ॥ ३ ॥ काननि कानक
 उपयोत अनुकूल विषर टुकुल धिलमत पाछि छोर हैं ।
 जिय नयन विधु यदन टिपारे मिर नय मिय अंगनि ठोर
 ठोर ठोर हैं ॥ ४ ॥ मभा सरवर लोक कोकनद का
 प्रमुदित मग देपि दिनमनि भोर हैं । अमुष अमो
 भोज महिषास भय कटुक अमृक कटु मुमुद अक्षोर हैं ॥
 भाई मो कहत बात कौनिकादि मनुभात सोल मनयो
 मोलत दार मोर हैं । मममुष मयदि विमोक्त मयदि
 लदा मो देवत जेम मुलगा को पार हैं ॥ ५ ॥ ७३ ॥

दूर दूर नर नारि नयन मो देखन जते है औ पारे दूर अंतर
 निरोध करन है नर नर मोर हो भी है अयो । अयो । अयो । अयो ।

ने निरोग कर्य है । उन्नर सुन्दर राजकिशोर शिगमौर की बात
 सुनिये ॥१॥ इयाय कमल और मस्कत मणि और मेघ के वर्ण सम तन
 और गम जू को है और पान कमल और कनक और दामिनी के वर्ण सम
 तन और लक्ष्मण जू को है और रूप को निचोर है अर्थात् उत्तमांग है
 और नरन हो दोऊ भाई मर्त्योने हैं अर्थात् बनावट ने नहीं और नामों
 सुंदर हैं जैसे सुने रहे नेमते दोऊ भैया कृष्ण के शिगमौर हैं ॥२॥
 सुंदर चरण कमल और जंघा और ठेढ़न और उरू और कटि और उन्नत
 शंख हैं और बाहु बड़े जोरवर हैं । शंका । बाहन की जारावरी कैसे
 जाने । उन्नर । सुबाहु भादि को यह सुनिवे नें । जंघा उरू में पुनरुक्ति
 शंका नहीं करना क्योंकि जंघा नाम ठेढ़न के नीचे के भाग का है और
 ठेढ़न के ऊपर के भाग के उरू नाम हैं, जाको आज कालि लोग जंघा
 कहत हैं । पर गोमाई जी शास्त्र रीति ने लिखे । जंघातु प्रसृतानां रूप-
 वांष्टीवदधियाम् । मरुथितीवेषुमानुगन्गन्मंभिः पुंभि वङ्गणः । इत्यमरः
 जंघाप्रसृतौ द्वेजंघायाः जानु उरुपर्यभष्टीवन्तीणि जानुनः मरुथि उरुद्वेऊरोः ॥
 भली भांति तरफस कैसे हैं और फरकमलानि में घान धनुष हैं ते देखिबे
 में तो मनोहर पर कठोर हैं ॥ ३ ॥ कानन में पुष्पाकार सोने के कुंडल
 हैं और अनुकूल यज्ञोपवीत है अर्थात् जिस शरीर को चाहिए और पीत रंग
 को बस है नामें आछे किनारे जांभत हैं अर्थात् मोती मणि आदि करि
 के, कमल सम तयन और रंद सम मुख हैं, टोपी सिरन में है, नख ते
 शिखा पर्यंत अंगन में ठार ठार ठगोरी अर्थात् जहां जाइ मन तहई
 लोभाई ॥ ४ ॥ सभा जो सोई श्रेष्ठ तड़ाग और लोग सब जो हैं सोई
 कमल और चक्रवाक के समूह हैं, ते भोर के दिनमणि रघुनाथ के
 देखि प्रसूदित भए, मृद मन मँले आशावाले जे महिपाल हैं ते कछु उल्लू
 अर्थात् घुघुआ कछु कुमुद कोई कछुक चकोर भए । कोऊ अस कहत हैं
 महिपाल जे मृद ते लटक और जे नहीं सहनेवाले ते कुमुद और जे मन
 मँले ते चकोर भए ॥ ५ ॥ यद्यपि धोल घन सम गंभीर हैं पर विश्वा-
 मित्र ते सकुचात हैं ताते भाई ते धीरे धीरे बात कहत हैं सन्मुख सब के
 हैं और सब के भली भांति देखत हैं और कृपा से हंसि के तुलसी के
 ओर हेरत हैं ॥ ६ ॥ ७३ ॥

एई राम लपन जी मुनिसंग आए हैं । चौतनी चोलना
काछे सपि सोहैं आगे पाछे आछेहु तें आछे आछे आछे भाव
भायें हैं ॥ १ ॥ सांवरे गोरे सरीर महा बाहु महाबोर कटि तुल
तीर धरे धनुष सुहाए हैं । देषत कोमल कल अतुल विपुल
वल कौसिक कोदंड कला कलित सिपाये हैं ॥ २ ॥ इन्हो
ताडिका मारी गौतम की तीय तारी भारी भारी भूरि भट
रन बिचलाये हैं । रिपि मय रपवारे दसरथ के दुलारे रग
भूमि पगुधारे जनकु दुलाये हैं ॥ ३ ॥ इन्ह के विमल गुन
गनत पुलकित तन सतानंद कौसिक नरेसहि सुनाये हैं ।
प्रभु पद मन दिये सो समाज चित किए हुलसि हुलसि
हिये तुलसिहु गाये हैं ॥ ४ ॥ ७४ ॥

जे राम लपन मुनि संग आए हैं ते एई हैं, हे सखी टोपी
कुरुता पहिरे हैं औ आगे पाछे शोभत हैं अर्थात् आगे राम जी पछे
लक्ष्मण जी । सुंदर हूं ते सुंदर सुंदर हैं औ भला भाव जो कोई पद
है ताहू को भाए है वा भले यह भैया है ताते हम सब के भाए है वा
सुंदर हू ते जो सुंदर ताहू ते सुंदर सुंदर भैया है ताते भाए है वा भले
भाव है जेहि को अर्थात् विश्वामित्र जी तिन के भाए भए हैं ॥ १ ॥
देखत में सुंदर कोमल हैं पर बड़े बलवान नहीं तुलत हैं वा बहुत बल
हैं अतएव अतुल हैं औ विश्वामित्र जी ने सुंदर धनुर्विद्या की कला इन
को सिखाए है ॥ २ ॥ जनक जू के बोलाए ते रंगभूमि में पग पंग
हैं इन के विमल गुन गन को पुलकित तन ते सतानंद औ विश्वामित्र
जू नरेश को सुनाए हैं ॥ ४ ॥ ७४ ॥

रागकान्हरा—मोय स्वयंवर माई दोउ भाई आए देषत
॥ १ ॥ चली प्रमदा प्रमुदित मन प्रेम पुलकित तन मनहु मग
मंजुल पेपन ॥ १ ॥ निरपि मनोहरताई मय पाइ कहे पद
एक सो भूरि भाग हम धन्य आनिए दिन एपन । तुमने

सहज सनेह सुरंग सब सो समाज चित्त चित्तसार लागी
लेपन ॥ २ ॥ ७५ ॥

प्रमदा स्त्री पेखन कई देखन ॥ १ ॥ भूरि बहुत, खन कई क्षण,
गोसाईं जी कहत हैं सो सब समाज नारिन को अपने सहज सनेह रूपी
सुंदर रंग से अपने चित्त रूपी चित्तसार में लिखने लगीं ॥ २ ॥ ७५ ॥

राग गौरी — राम लपन जब दृष्टि परेरी । अवलोकत
सब लोक जनकपुर मनो विधि विविध विदेह करेरी ॥ १ ॥
धनुष जग्य कमनीय अवनि तलकौतुक ही भए आय परेरी ।
छवि सुरसभा मनहु मनसिज के कलित कल्पतरु रूप
करेरी ॥ २ ॥ सकल काम वरपत भुष निरपत करपत चित
हित हरष भरेरी । तुलसी सबै सराहत भूपहिं भले पैत
पामे सुठर ठरेरी ॥ ३ ॥ ७६ ॥

री सखी जब ते राम लपन दृष्टि परे तब ते जनकपुर के लोग
देखत हैं अर्थात् एकटक देखत हैं । मानो विधाता ने अनेकन विदेह
किए हैं । भाव विदेह महाराज के डाह ते, इहां विदेह कहिये ते सब को
देहाध्यास रहित जनाए ॥ १ ॥ धनुष यज्ञ के सुंदर जो भूमि तल है
तामें कौतुकही भाय के खड़े भए हैं । मानो धनुष यज्ञ की सुंदर भूमि
नहीं है छवियुक्त सुरसभा जो सुधर्मा सो है औ श्रीराम लपन नहीं
हैं काम के शोभित कल्पवृक्ष हैं औ राम लपन का जो रूप है सो रूप
नहीं है तेहि कल्पवृक्ष को फल है । इहां दुइ कल्पवृक्ष जानना ॥ २ ॥ मुख
निरखत मात्र में सकल कामना को वरपत हैं इहां कल्पवृक्ष ने अधिक
जनाए क्योंकि कल्पवृक्ष छाया के नीचे गए फल देत है औ ए देवत
मात्र औ हर्ष भरे जेहि तन के चित्त तेहि को कर्षत हैं वा यद्यपि चित्त
चोरावत हैं तथापि हित मानि हर्ष भरे वा चित्त को तो चोरावन हैं
पर हित ते हर्ष भरत हैं । गोसाईं जी कहत हैं कि जनक महाराज के
सब सराहत हैं कि भले दाव के पास सुंदर परे हैं । भाव जो पन किए
ताको भलो फल पाए ॥ ३ ॥ ७६ ॥

नकु सुमुपि चितु लाइ चितौरी । राजकुअर मूरति
रचिवे की रुचि रुचि विरंचि अमु कियो है कितौरी ॥ १ ॥
नप सिष सुंदरता अवलोकत कह्यौ न परत रुप होत तितौरी ।
सांवर रूप रुधा भगिवे कह्यु नयन कमल कल कलस
रितौरी ॥ २ ॥ मेरे जान इन्हहि बोलिवे कारन चतुर जनक
ठयो ठाठ इतौरी । तुलसौ प्रभु भंजिहै संभुधनु भूरि भाग
सिय मातु पितौरी ॥ ३ ॥ ७७ ॥

अरी सुमुखि तनक चित लगाय के देखु । ब्रह्मा ने राजकुअर
की मूरति रचिवे की रुचि ते केतनो अम कियो है । नख ते सिख लो
सुंदरताई के अवलोकत जेतना सुख होत है तेतना कहि नहि परत ।
सांवर रूप जो कोई अमृत है ताको भरिवे को सुंदर नयन कमल रूप
कलश को खाली करो । इहां और ओर न देखनो खाली करना है ॥२॥
मेरे जान चतुर जनक ने इन्हें बोलिवे कारन इतो ठाठ ठयो है । तुलसी
के प्रभु संभुधनु नोरिहैं । भूरिभाग जानकी जू के माता आँ पिता के हैं
॥ ३॥७७ ॥

राग सारंग । जब ते राम लपन चितयेरी । रहै एक-
टक नर नारि जनकपुर लागत पलक कल्प बितयेरी ॥१॥
प्रेम दिवस मागत महिस सो देपत ही रहिये नितएरी ।
कौ ए सदा बसहु इन्ह नयननि कौ नयन लाहु जितयेरी ॥२॥
कोउ समुझाय कहै किन भूपाहिं बडे भाग आए इतयेरी ।
कुलिस कठोर कहां संकरधनु मृदु मूरति किमोर कितए
री ॥ ३ ॥ विरचत इन्हहिं विरंचि भुवन सब सुंदरता योजत
रितए री । तुलसिदास ते धन्य जनम जन मन क्रम बच
जिन्ह के हित ए री ॥ ४॥७८ ॥

जब ते ३० सुगम ॥ ४॥ ७८ ॥ टिप्पणी—नर नारियों को पलक
गाने का समय एक कल्प के समान मान्य होता है अर्थात् वे लोग पलक

गिरने भर के लिये भी राम लपन का दर्जन नहीं छोड़ना चाहते ॥१॥
 मेम के विशेष वस्त्र होकर मेहम मे मांगते हैं कि ये यहीं रहें वा जहां
 जायें वहां मेरे नेत्र भी जायें ॥ २ ॥ ब्रह्मा ने इन की सुन्दरता बनते
 समय भुवन भर की सुन्दरता लिये अर्थात् खाली कर दिये । तुलसी
 दास जी कहते हैं कि जिन के मन वच कर्म से ये दिन हैं उन के जन्म
 धन्य हैं ॥ ४ ॥ ७४ ॥

तुनु मपि भूपति भलोइ कियो री । जहि प्रसाद अव-
 धसु कुचर दोउ नगर लोग अवलोकि जियोरी ॥ १ ॥ मानि
 प्रतीति कहें मेर ते कत मंदहवस कारत हियो री । तौलैं
 है यह संभुसरामन श्री रघुवर जौलैं न लियोरी ॥ २ ॥
 जहि विरंचि रचि सोय संवारी अरु रामहि ऐसी रूप दियो
 री । तुलसिदास तेहि चतुर विधाता निजकर यह संयोग
 सियोरी ॥ ३॥७६ ॥

मुन इ० मु० ॥ ७९ ॥ टिप्पणी—तुलसीदास जी कहते हैं कि जिस
 ब्रह्मा ने सीता को संवारा और राम को ऐसा रूप दिया है उसी चतुर
 विधाता ने यह संयोग (दोनों का मेल वा विवाह) भी सियो काई सीया
 अर्थात् रचा है ॥ ३॥७६ ॥

अनुकूल नृपहि सुलपानिहैं । नीलकांठ कारुन्यसिन्धु
 हर दोनबंधु दिनदानिहैं ॥ १ ॥ जो पहिलेहि पिनाक
 लनक को गए सौंपि लिय जानिहैं । वहुरि बिलोचन लोचन
 के फल सबहि सुलभ किये आनिहैं ॥ २ ॥ सुनियत भव
 भाव ते राम हैं मिय भावतो भवानि हैं । प्रपित प्रीति
 प्रतीति पयजपनु रहे काज ठटु ठानिहैं ॥ ३ ॥ भये विलोकि
 विदेह नेहवस वालक विनु पहिचानिहैं । होत हने होने
 विरवनि दल मुमति कहति अनुमानिहैं ॥ ४ ॥ देपिअत

कारयुक्त यद्यपि नहीं बोलत हैं ॥ ५ ॥ भानि हैं तोरि हैं ॥ ६ ॥ सकल
सुमंगल के खानि हैं ताते नारि नर व्याह उछाह देखिहैं ॥ ७ ॥ ८० ॥

राग केदारा—रामहि नीकै कै निरपि सुनयनी । मन-
सहु अगम समुझि यह अवसर कत सकुचत पियवयनी ॥ १ ॥
बड़े भाग मयभूमि प्रगट भई सोय सुमंगल अयनी । जा-
कारन लोचन गोचर भइ मूरति सब सुख दयनी ॥ २ ॥ कुल-
गुरु तिय के वचन मधुर सुनि जनक जुवति मति पयनी ।
तुलसी सिधिल देह सुधिवुधि करि सहज सनेह विषयनी
॥ ३ ॥ ८१ ॥

श्री सतानन्द की पत्नी सुनैना जू से कहति हैं कि श्रीराम को
नीके निरखहु हे पिकवैनी मनो ते अगम अर्थात् श्रीराम हैं अस समुझि
के फिर कत सकुचति हौ ॥ १ ॥ सोय सुमंगल को यह बड़े भाग्य ते
यह भूमि में प्रगट होती भई जा कारण ते सब सुख देनिहारी मूरति
चैनन की विपै भई । श्रीमद्रामायणे विश्वामित्रं प्रति जनकवाक्यम् । “अथ
मे कृतः क्षेत्रं लांगलादुत्थिता ततः । क्षेत्रं शोधयता लब्धा नाम्नासीते-
ति विद्युता” अपेति वृत्तान्तरारम्भे क्षेत्रं यागभूमिम् मम कृतः यदि
कर्षति अपिचयनार्थमिति शेषः क्रुपयेण कर्षतीत्यादिशास्त्रात् लाङ्गला-
दुत्थिता आविर्भूता यज्ञक्षेत्रं शोधयता सीताः लाङ्गलपद्धतेर्मया लब्धा ततो
नाम्ना सीतेति प्रसिद्धा । पाठे च । “अथ लोकेश्वरी लक्ष्मीर्जनकस्य पुरे-
स्वतः शुभक्षेत्रे ह्योत्खाते तारेचोत्तरफाल्गुने अयोनिजा पद्मकरा बाला-
केशशिसभिभा सीतामुखे समुत्पन्ना बालभावेन सुन्दरी । सीतामुखोद्भवान्
सीता इत्यस्या नाम चाकरोत् ।” भविष्येच । “मर्वर्तुनिर्करक्षेत्रे कर्ता तु बुद्धि-
माकरे । मासि शुष्यतमे विष माधवे माधवमिये ॥ नवम्पां शृङ्गपक्षे च वामरे
मङ्गले शुभे । सार्षपक्षे च मध्यान्दे जानकीजनबालये ॥ आविर्भूता म्वयं
देवी योगेषु गतिरुत्तमा” ॥ २ ॥ श्री जनकजू की रानी सुनैना जू भनि की
घोपी हैं सो कुलगुरु तिय के मधुर वचन सुनि के सहज सनेह विषयनी
सुधि करि जो देह के ओर ते सिधिल भई रही सो वेदि की सुधि

नेत्र ॥ १ ॥ दुधन दुष्ट, जनकपुर रूप आकाश में प्रभु को धुजस रूप
विपद्य चंद अब उगा चाहत है ॥ २ ॥ ८३ ॥

रागटोडी । राजा रंगभूमि आजु बैठे जाइ जाइकै ।

आपने आपने घल आपने आपने साज आपनी आपनी वर
धानिक बनाइकै ॥ १ ॥ कौसिकसहित राम लपन ललित
नाम लरिका ललाम लोने पठए बुलाइकै । दरस लालसा
वस लोग चले भाय भले बिकसत सुप निकसत धाड़ धाड़कै
॥ २ ॥ सानुज सानंद हिए आगे छै जनक लिये रचना रुचिर
मय सादर देपाइकै । दिये दिव्य आसन सुपास सावकास
अति आछेआछे वोछे वोछे बिछौना बिछाइकै ॥ ३ ॥ भूपति-
किसोर दुहु ओर घीघ मुनिराज देपिवे को दाउ देपो देपिवो
बिछाइकै । उदय सयल सोहै सुंदर कुषर जोहै मानौ भानु
भोर भूरि किरनि छपाइकै ॥ ४ ॥ कौतुक कीलाइल निसाम
गान पुर नभ वरपत सुमन सुविमान रहे छाड़ कै । हित
अनहित रत विरत विलोकि बाल प्रेम मोद मगन जनमफल
पाइकै ॥ ५ ॥ राजा की रजाइ पाइ सचिव सहेली धाड़
सतानंद ल्याए सिय सिबिका चढाइकै । रूप दीपिका
निहारि मृग मृगो नर नारि बियके विलोचन निमेषि विस-
राइकै ॥ ६ ॥ हानि लाहु अनय उछाहु बाहुबल कछि बंदी
बोले विरद अकस उपजाइकै । दोष दीप के महीप आये
सुनि पैजपनु को जै पुरुषारथ को औसर भोआइकै ॥ ७ ॥
आनाकानो कठईसी मुहाचाहो होनलागी देपि दसा
कहत बिदेह विलपाइकै । घरनि सिधारिए सुधारिए आगिलै
फाल पूजि पूजि धनु कीजै विजय वजाइकै ॥ ८ ॥ जनक

भूमि के हरिषा उपरदृषा भूमि धरनि के विधि विरचै प्रभाव
जाको जग जई है । विहंसि हिय हरषि हटके लपन राम
सोहत सखोच सील नेह नारि नई है ॥ ३ ॥ सहमी सभा
सकल जनक भए बिकल राम लपि कौसिक असीस अज्ञा
दई है । तुलसी सुभाय गुरु पाय लागि रघुराज कटिपराज
कौ रजाइ माये मानि लई है ॥ ४ ॥ ८५ ॥

लछिमन जी की उक्ति है भूगति विदेह ने जो भई है सो कही ताते
ठीक है आंक एक ही कहैं निश्चय करि हाकिं कहैं ललकारि कै ॥ १ ॥
प्रतिष्ठा की मर्यादा और भांति ते मुनि गई है । अर्थात् जो तोरे सो
वरी कदापि यह नहीं होता तो भूमि के हरिआ औ भूमिधरन के
उल्लेख आ को जीतनिहार जेहि को प्रभाव जगत में विधि विरचै हैं तेहि
उतरे चांप को प्रभु के प्रताप ते बड़ाई के अपने बल को देखाय देते
पर याको फल पापमई है । भाव बढ़े के रहते छोटे या मंथम विवाह
होना अनुचित है अर्थात् छोटा बड़ा दोऊ देव पितर के काम लायक
नहीं रहत तथाच स्मृतिः “दाराग्नि होत्रसंयोगं कुरुतेयो अग्ने स्थिते ।
परिवेता सविशेषः परिवित्तिस्तु पूर्वजः ॥” यह कहनो अनुचित रहा पर
मेरो कहनो अनुचित नहीं है क्योंकि लरिकाई बस कहत हैं ॥२॥ हृदय
में हरषि के मुमुकाय के श्री राम जू लखन को घरजे वर संकोच शीछ
औ नेह ते श्री लखन लाल की नारि कहैं गर्दन नई भई सोही ॥३॥ ८५

सोचत जनक पोष पेच परि गई है । जोरि कर कमल
निहोरि कहे कौसिक सों पायसु भो राम को सो मेरे
दुचितई है ॥ १ ॥ वान जातुधानपति भूप दीप सातह के
लोफप विलोफत पिनाक भूमि लई है । जोतिलिंग कथा
सुनी जाको चंत पाये विनु पाये विधि हरि चारि सोई हाल
भई है ॥ २ ॥ पापुही विचारिये निहारिये सभा की गति
पदमरजाद मानो हेतुषाद छई है । इन्ह को जितौहें मन

सो जितोई मन आदि आप के भरोसा के बल सोंहै, कैधों कोऊ देवता
हैं छलते मनुष्य घने हैं, कैधों अपने कुल के प्रभाव से अर्थात् सूर्यवंशी
हैं तेहिते तेजयुक्त हैं, कैधों लरिकाई अर्थात् कुछ आगे पीछे को विचार
नहीं है कन्या सुंदर, कीर्ति औ विश्व की विजय बटोरिवे कों, कैधों
विधाता ने इनही को निर्माण कियो है ॥ ४ ॥ हे नाथ हम को अपने
प्रतिष्ठा करने को मोह नहीं है और को को कहै सीता हू की विशेष
चिन्ता नहीं है । कदापि विश्वामित्र जू पूछें कि क्यों नहीं है तापर कहत हैं
सोई सोई कादिहैं जोई जोई जेहिने बोया है । भाव जीव कर्मवस दुख मुख
भागी है पर नीकी नीकी जो रघुनाथ की निकाई है सो बनी रहै । यह बात
की विशेष चिन्ता है, सो आप के हाथ हैं, आप कैसे हैं कि करनी नई
है । भाव आजु लो ब्रह्मा छोडि सृष्टि कोऊ न करि सके सो आप किए
तो यह कौन बड़ी बात है वा आप अनहोनी करनिहार हैं ॥ ५ ॥
विश्वामित्र जू ने आप की बात साधु है साधु है अस कहि के राजा
को सराहे फिर कहे कि हे महाराज आप के जिय को जानी आप ने
भला ठहराय राखा है । भाव रघुनाथ की निकाईए में सब की भलाई
है । यह श्री जनक श्री विश्वामित्र को सम्वाद सुनि लपन हर्षे औ बिल-
खाने भए जो लोग रहे सो हर्षाने । गोसाईं जी कहत हैं कि यह आश्चर्य
नहीं है जाको जई राजा राम हैं सोई मुदित होत हैं, भाव और के
रोअतै रोअत जन्म बीतत है ॥ ६ ॥ ८६ ॥

सुजन सराही जो जनक बात कही है । रामही सुझानी
जानि मुनि मन मानी सुनि नीच महीपावली दहन विनु
दही है ॥ १ ॥ कहैं गाधिनंदन मुदित रघुनंदन सों नृप
गति अगह गिरा न जाति गही है । देखे सुने भूपति अनेक
भूठे भूठे नाम साचे तिरहुति नाथ सायो देत मही है ॥ २ ॥
रागउ विराग भोग जोग जोगवत मनु जोगो जागवलिक प्रसाद
सिद्धि लही है । ताते न तरनि तें न सीरे सुधाकरह तें
सहज समाधि निरुपाधि निरवही है ॥ ३ ॥ ऐसेउ अगाध

सोभा अधिकानी तन मुषन की सुषमा सुपद सरसई है ॥३॥
 रावरो भरोसो बलु कौहै बोज किये छल कौधों कुल के प्रभाव
 कौधो लरिकई है। कन्या कल कीरति विजय विप्र की बटोरि
 कौधों करतार इन्ह ही को निरमई है ॥४॥ पन की न मोर
 न विसेष चिंता सीता हू की लुनि है पै सोई सोई छोई
 छेड़ि बई है । रहै रघुनाथ की निकार्ई नीकी नीकी नाथ
 हाथ सो तिहारे करतूति जाकी नई है ॥ ५ ॥ कहि साध
 साधु गाधिसुधन सराहे राउ महाराज जानि जिय ठीक
 भली दई है । हरये लखन हरयाने विखयाने लोग तुलसी
 मुदित जाकी राजाराम जई है ॥ ६ ॥ ८६ ॥

सोचत ६० । जनक जू सोचत हैं कि कठिन पेच परि गई है। भव
 यह प्रतिज्ञा जो किया सां भला नहीं किया। जनक महाराज हस्तकमल
 जोरि कै निहोरा करि विश्वामित्र जू सो कहत हैं कि आप ने जो रघु
 नाथ को आज्ञा दिया तामें हम को दुचितार्ई है, अब दुचितार्ई का हो
 कहत हैं ॥१॥ पाणामुर रावण औ सातो दीप के राजा औ लोकपाल
 के देखत ही पिनाक ने भूमि को लई है अर्थात् भूमि को पकड़ि ल
 है। जोतिलिङ्ग को अंत नहीं है। यह कथा मुनि के अंत लेइये को ब्रह्मा
 ऊपर को गये औ विष्णु जू पाताल को गये पर तेहि लिंग को अंत
 पाये। ब्रह्मा विष्णु हारि फिरि आए सोई हाल इहां भई है, भाव पिना
 केतना भारी हैं याको अंत फोऊ नहीं पावत है। ब्रह्मा विष्णु हारि ग
 लिंग का अंत न पिया यह काशीखंड में लिखा है ॥ २ ॥ इस
 ही कहने पर नहीं आप भी विचारिए और सभा की दसा देखिए।
 कैसी हो रही है जैसे बंद के मर्जाद को नास्तिक बाद नासत है। भा
 तस पिनाक ने धीरन करि दिया है। अब श्रीराम का वर्णन करत
 कि श्रीराम के मन निर्मोह है औ मन में सोभा अधिकाय रही है औ
 मुर की सुन्द सोभा सरगाय रही है। इहां इन्ह के औ मुर नए जो
 पद धवन सुन्द हैं सो आदर में हैं या दोऊ मादन में लगाय लेना ॥३॥

पधीन निरवान को । विनु गुन की कठिन गांठ जड चेतन
 की छोरी अनायास साधु सोधक अपान को ॥ ३ ॥ सुनि
 रघुवीर को वचन रचना की रीति भए मिथिलेस मानो दीपक
 विहान को । मिय्यौ महामोह जी को क्यूँ पोच सोच सौ
 को जान्यो अवतार भयो पुरुष पुरान को ॥ ४ ॥ सभा नृप
 गुर नर नारि पुर नभ मुर सब चितवत सुप करुनानिधान
 को । एकहि एक कहत प्रगट एक प्रेमवस तुलसीस तोरिए
 सरासन ईसान को ॥ ५ ॥ ८८ ॥

श्रीरघुनाथ की उक्ति ऋषि ३० । हे रिपिराज आजु श्रीजनक
 समान राजा को है, काँह ते कि आप एहि भांति ते प्रीति सहित सरा-
 दियत है तो रागी औ विरागिन के मध्य में बड़भागी ऐसो आन को
 है ॥ १ ॥ भूमि भोग करत अर्थात् राज भोग तो करत हैं पर वाही में
 जोग सुख को अनुभवत हैं । इन की गति मननशील जे सुनि तिन हूँ
 के अगम है और को जाने । गुरु औ हर के पद में नेह है, जाको घर में
 रहि के विदेह है रहे हैं । निर्गुन औ सगुन रूप प्रभु के भजन में अस
 आन कौन सयान है ॥ २ ॥ कहनि रहनि सब एक भांति की है
 वैराग्य ज्ञान औ राजनीति सब वेद बुध संमत है इन को, औ मोक्ष के
 पथिक हैं अर्थात् स्वर्गादि के नहीं जो विनु गुन की कठिन गांठि जड़
 चेतन की है ताको घेपरिश्रम छोरि डारी है औ अपने स्वरूप को
 साधु कई भली भांति सोधक हैं ॥ ३ ॥ दीपक विहान को कहिये कां
 यह भाव कि अपनी बड़ाई सुनि सकुचे ॥ ४ ॥ नृप जनक महाराज
 गुरु विश्वामित्र जू औ पुर के नर नारि ॥ ५ ॥ ८८ ॥

राग मारू—सुनो भैया भूप सकल दै कान । वज्ररेप
 गजदसन जनकपन वेदविदित जग जान ॥ १ ॥ घोर कठोर
 पुरारिसरासन नाम प्रसिद्ध पिनाकु । जो दसकंठ दियो
 बावों जेहि हरगिरि कियो मनाकु ॥ २ ॥ भूमि भाल भाजत

बोध राखरे सनेह वस विकल विलोकियत दुचितई सही है।
कामधेनु कृपा हुलसानौ तुलसोस उर पन सिसु हेरि मर-
जादा बांधी रह्यो है ॥ ४॥ ८७ ॥

जो श्री जनक जू की कही बात है ताको सुजनों ने सराही औ
मुनि की मय मानी भई बात है अस जानि श्रीराम को सोहात भई पर
सो बात सुनि के नीच जां महिषावली है सो विनु अग्नि के जरि जात
भई ॥ १ ॥ गाधिनंदन रघुनंदन सो हर्षित कहत हैं कि मिथिलेश की
गति गहिवे जोग नहीं है ताते बातहू नहीं गही जात है। नाम मात्र के
झूठे झूठे अनेक भूपति देखे पर सांचे भूपति तिरहुतिनाथ ही हैं या
पात की साक्षी पृथ्वी देति है, भाव कन्या उपजाय कै ॥ २ ॥ प्रीति
औ बैराग्य भोग औ जोग सब महाराज के मन को जोगवत हैं भाव
जेहि के ओर तनिक दृष्टि करत सो शीघ्र हाजिर है जात है। जोगी
जाबलिक के प्रसाद ते यह सिद्धता को लही है। ताते सूर्य ते तप्त नहीं
होत हैं औ और को को कहै चन्द्रमो ते शतिल नहीं होत हैं, उपाधि
रहित स्वाभाविक समाधि को निर्वाह करत हैं। वायु आदि वस करि
जो समाधि सो उपाधि सहित ॥ ३ ॥ हे श्रीराम जू आप के सनेह के
बस ऐसेऊ अगाध बोध वाले जनक महाराज को विकल विलोकियत
है ताते अस जानि परत है कि इन के मन में निश्चै दुचितई है, यह मुनि
के प्रतिहारूपी बछरा को देखि कै कृपारूपी कामधेनु रघुनाथ के उर
में हुलसानी पर विश्वामित्र जू की आज्ञा रूप मर्जादा में बांधी है ताते
ठहर गई ॥ ४॥ ८७ ॥

रिपिराज राजा आजु जनकसमान को । आपु एहि
भांति प्रीति सहित सराहियत रागो औ विरागो बडभागी
ऐसो पान को ॥ १ ॥ भूमि भोग करत अनुभवत जोग सुख
मुनिमन अगम अलख गति जान को । गुर हर पद नेह
नेह यसि भो विदेह अगुन सगुन प्रभु भजन सयान को ॥ २ ॥
कहनि रहनि एक विरति विवेक नोति वेद बुध संसत

रंक होय ॥ ३ ॥ महा महा बल वीर जो रहे सो अपनो सो किए
 अर्थात् जेनना प्राक्रम रहा तेनना किए पर चांप न टरेउ । महा महा बल
 वीरन को चांप अपनो सो कियो अर्थात् जड ॥४॥५॥ जहँ तहँ महीप
 मुरे कहँ जहां ते उठे रहे तहँ फेरि आइ बैठे ॥ ६ ॥ फुरे फरके ॥७॥८॥
 क्यों कहँ कैसे मृनाल कपलदण्ड, अनुग सेवक ॥ ९ ॥ १० ॥ अयन
 गृह, मृगपति सिंह ॥ ११ ॥ ८९ ॥

जबहि सब नृपति निरास भए । गुरुपद कमल बंदि
 रघुपति तब चांप समीप गये ॥ १ ॥ स्याम तामरस दाम
 वरन वपु उर भुज नयन विसाल । पीत वसन कटि कलित
 कांठ सुंदर मिंधुरमनिमाल ॥ २ ॥ कल कुंडल पल्लव प्रसून
 सिर चारु चौतनो लाल । कोटि मदन छबि सदन बदन
 विधु तिलक मनोहर भाल ॥ ३ ॥ रूप अनूप बिलोकत
 सादर पुरजन राजसमाज । लपन कछौ थिर होहि धरनि-
 धर धरनि धरनिधर आजु ॥ ४ ॥ कमठ कोल दिगदंति
 सकल अंग सजग करहु प्रभु काजु । चहत चपरि सिवचांप
 चढावन दसरथ को जुवराजु ॥ ५ ॥ गहि करतल मुनि
 पुलक सहित कौतुकहि उठाइ लियो । नृपगन मुपनि
 समेत नमित करि सजि मुष सबहि दियो ॥ ६ ॥ आकर्ष्यौ
 सिय मन समेत हरि हरण्यौ जनक हियो । भंज्यौ भृगुपति
 गर्व सहित तिहुलोक विमोह कियो ॥ ७ ॥ भयो कठिन
 कोदंड कोलाहल प्रलय पयोद समान । चौकें शिव विरंचि
 दिसिनायक रहे मूढ़ि कर कान ॥ सावधान छै चढे विमानन
 चने बजाइ निसान । उमगि चली आनंद नगर नभ
 जय धुनि मंगलगान ॥८॥ विप्रवचन सुनि सपौ मुखासिनि
 चली जानकिहि ल्याइ । कुचैर निरपि जयमाल मेलि उर

न चलत सो ज्यों विरंचि को आंकु । धनु तोरै सोइ वरै
 जानकी राउ होइ की रांकु ॥३॥ सुनि आसर्पि उठे अवनी-
 पति लगे वचन जनु तीर । टरै न चांप करै अपनी सो
 महा महा बल वीर ॥ ४ ॥ नमित सीस सोचाहि सलज्ज सब
 शोहत भए सरीर । बोले जनक विलोकि सीध तन दुषित
 सरोष अधीर ॥ ५ ॥ सप्त दौष नव पंड भूमि के भूपति वृंद
 जुरे । बडो लाभ कन्या कीरति को जहँ तहँ महिप सुरे ॥६॥
 डग्यो न धनु जनु वीर विगत महि किधौं कहुं सुभट दुरे ।
 रोषे लपन विकट भृकुटी करि भुज अरु अधर पुरे ॥ ७ ॥
 सुनहु भानु कुलकमल भानु जो अब अनुसासन पावौ । जो
 वापुरो पिनाकु मेलि गुन मंदर मेरु नवावौ ॥ ८ ॥ देखौ
 निज किंकर को कौतुक क्यों कोदंड चढावौ । लै धावौ
 भंजौ मृनाल ज्यों तौ प्रभु अनुग कहावौ ॥ ९ ॥ हरपे पुर नर
 नारि सखि नृप कुअर कहि वर वैन । मृदु मुसुकाइ राम
 वरज्यो प्रिय दंधु नयन दै सैन ॥ १० ॥ कौसिक कछौ उठहु
 रघुनंदन जगवदन बल चैन । तुलसि दास प्रभु चले मृगपति
 ज्यों निज भगतनि सुपदै ॥ ११ ॥ ८८ ॥

बंदी की उक्ति सुनो ६० । बज्र पर की रेखा जैसे नहीं मिटति है
 आँ हाथी के दाँत जैसे फेर भीतर नहीं जात तस जनक महाराज की
 प्रतिज्ञा है वेद में विदित है आँ सब जग जानत है कि पुरारि को सारा
 सन अति कठोर है, जाको पिनाक अस नाम प्रसिद्ध है । जो पिनाक को
 रावण पावें दिया अर्थात् सनमुख न भयो, जेहि रावण ने फैलास को
 लघु कियो अर्थात् देखा मम उठाव लियो ॥ १ ॥ २ ॥ मान पर भ्राजत
 जो विरंचि को अंक है गो जगे नहीं चलत तेम भूमि ने नहीं चलत
 है तेरि धनु को जो तोरै सो राजहमारे को पर, चाहे राजा होय चाहे

ए, उठे राम रघुकुल कल केहरि गुरु अनुसासन पाए

३ ॥ कौतुकही कोदंड पंडि प्रभु जय अरु जानकि पाई ।

लसिदास कीरतिरघुपति की मुनिन्ह तिह्र पुर गाई ॥ ४ ॥ ९१ ॥

जब इ० जब दोऊ चक्रवर्ती कुमार को देखे तब देखि करि जनक-
के नर नारि अपने निमेष (पलक) को रोके आँ मुदितमन भए १ ते
ऊ राजकुमार कैसे हैं किशोर अवस्था आँ मेघ आँ तडित सम तन
वरण हैं आँ नय ते सिप लों सब अंग लोभावनिहारे हैं के हितु कहें
ति करि सब जगत के छवि रूप धन ल के चित्त दै के द्रव्या ने
अपने हाथ ते संवारे हैं जिन को ॥ २ ॥ देखि के श्रीजनक महाराज को
स भयो अर्थात् काह को अस प्रण किया आँ श्रीजानकी जी को
तिसोच भयो आँ राजा सब सकुचाय के मिर नवाये भाव ए दोऊ
गाई तेजस्वी देखि परत हैं कदापि इन से धनु उठा तो हम लोगों के
ह में मसि लगी । तब गुरु अनुमामन पाए तें सुंदर जो रघुकुल है
तन में श्रेष्ठ जो श्रीराम सो उठे ॥ ३ ॥ ९१ ॥

राग टोडो । मुनि पद रेनु रघुनाथ साधे धरो है । राम-
नय निरपि लपन की रजाइ पाइ धराधर धरनि मुमायधान
करो है ॥ १ ॥ सुमिरि गनैस गुर गौरि हर भूमिगुर मोक्षत
सकोक्षत सकोचो यान परो है । दौनबंधु कृपासिंधु साह-
सिक मोक्षसिंधु सभा को मकोच कुलहू की लाज पगी है
॥ २ ॥ पैपि पुरुषारथ परपि पन प्रेम नम मीय होय की
विशेषि बडो परभरी है । दाहिनी दियो पिनाकु सहसि
भयो मनाकु महाब्याल बिकल विलोकि अनु खरी है ॥ ३ ॥
सुर हरपत यरपत फूल वार वार सिद्ध मुनि कहत सगुन
शुभ धरो है । रामबाहु बिटप विमल घोडो देपियत
जनकमनोरथ कलपधलि फली है ॥ ४ ॥ लघ्यो न चटावत
न तानत न तोरतहूं घोर धुनि मुनि सब को समाधि टरी

कुवरि रही सकुचाइ ॥ १० ॥ वरपहि सुमन असोसहि सुर
मुनि प्रेम न हृदय समाइ । सौय राम की सुंदरता पर तुल-
सिदास बलि जाइ ॥ ११॥८० ॥

जवाहिं इ० सु० ॥१॥ तामरस कमल दाम समूह कटि कलित कटि
में धारन किए सिंधुरमानि गजमुक्ता ॥ २ ॥ कल सुंदर चातनी टोपी,
कोटि मदन छवि सदन कोटि काम के छवि के गृह ॥ ३ ॥ धरनि-
धर शेष, धरनी पृथ्वी धरनिधर पर्वत ॥ ४ ॥ कच्छप शूकर भगवान
दिग्गज सकल अंग ते सजग होय के मंथु के काज करहु भाव कोई
अंग ते ढीला होहुगे तो न सम्हारि सकोगे चपरि उत्साह करि ॥ ५ ॥
गहि ई० आकर्षण इ० यह दूनों तुकन को भाव नाटक के अनुसार है ।
“उत्क्षिप्तं सह कौशिकस्य पुलकैः सार्द्धं मुखैर्नामितं भूपानां जनकस्य
संशयधिया सार्कं समास्फालितम् । वैदेहीमनसा समं च सहसाकृष्टं ततां
भार्गवमौदाहकृतिदुर्मदेन सहितं तद्भ्रमंशं धनुः” अस्यार्थः अथ धनुर्भगे
नानारसानुभावात् चित्ररसं दर्शयितुं पद्यमवतारयति उत्क्षिप्तमिति कौ-
शिके वत्सलरसोजातः अत्र हर्षः संचारी हर्षात्पुलकाः सात्विका इति
ज्ञानम् । भूपे भयानकरमः अत्र दैन्यं संचारी दैन्यादेवमुखनमनम् अत्र
भीषणा त्रिविधा तत्पभावेनैव रामे भीषणत्वं जनके करुणारसोजातः अत्र
ग्लानिः संचारी सा चापे जाता आध्यनुभावः संशयइति ज्ञानं वैदेही
मधुररसोजातः मनआकर्षणमेवात्रानुभावः रामे वीररसः अत्र स्पर्द्धा-
पनं सा परसुरामागतोतिज्ञानम् अत्र सर्वरसानामुद्दीपनविभावोरामएव
॥६॥७॥ कोलाहल महाशब्द, पयोद मेघ दिसिनायक दिक्पाल ॥ ८ ॥
निसान नगारा ॥ ९ ॥ विप्र सतानंद ॥ १० ॥ ११ ॥ ९० ॥

राग मलार—जय दोउ दशरथकुंभर १२ लोके । जनक-
नगर नर नारि मुदित मन निरवि नयन पल रोके ॥ १ ॥
वय किमोर घन सहित वरन तन नय मिय चंग लुभावे ।
दे चितु के हितु से सब छवि वितु विधि निज हाय सवारि
॥ २ ॥ संकट नृपहि मोष पति भीतहि भूप सकुचि मिर

करपरसत टूख्यो जनुहुतो पुरारि पढायो ॥ २ ॥ पहि-
 जयमाल जानकी जुवतिन्ह मंगल गायो । तुलसी सुमन
 पि हरषे सुर सुजस तिह पुर छायो ॥ ३ ॥ ८३ ॥

राम इ० सु० ॥१॥ हुतो पुरारि पढायो भाव श्रीशिव जी पढाय
 रहे कि श्रीराम के छुअत दृष्टि जाना ॥ २ ॥ ३ ॥ ९३ ॥

राग टोड़ी—जनक मुदितमन टूटत पिनाक के । बाजे
 वधावने सुहावने मंगल गान भयो सुष एकरस रानी
 जा रांक के ॥ १ ॥ दुंदुभी वजाइ गाइ हरषि बरषि फूल
 गन नाचे नाचे नायकह नाक के । तुलसी महीस देषि
 न रजनीस जैसे सूने परे सून से मनो मिटाये
 के ॥ २ ॥ ८४ ॥

जनक इ० रांक दरिद्र ॥ १ ॥ नाक के नायक इन्द्र, दिन में जैसे
 मा देखि परत हैं तैसे राजा सब देखि परे अब दूसरी उपमा कहत
 जैसे अंक के मिटाए सुन सूना परत है अर्थात् वे हिसाब है जात है
 भए ॥ २ ॥ ९४ ॥

लाज तो न साजि साज् राजा राड रोपे हैं । कहा
 चाप चढाए व्याह्र है वडे पाये बोलै पोलै सील असि
 सकत चोपे हैं ॥ १ ॥ जानि पुरजन तसे धीर है लपन
 से बल इन्ह के पिनाक नौके नापे जोपे हैं । कुलहि लजावे
 ल बालिस वजावे गाल कौधौ कूर काल वस तमकि
 वदोपे हैं ॥ २ ॥ कुअर चढाई भीहैं अब को विलोकै सोहैं
 हां तहां मे अचेत पेंट कीसे धोपे हैं । देषि नर नारि कहैं

राग पाइ जाए माय बाहु पीन पावरनि पीना पाय पोपे हैं
 ॥ ३ ॥ प्रमुदित मन लोक कोकनद कोकगन राम के प्रताप

हैं । प्रभु के चरित चारु तुलसी मुनत मुय एक ही दु
सब ही की हानि हरो हैं ॥ ५॥६२ ॥

विश्वामित्र जू के चरण की धूरी रघुनाथ ने मांघ पर धरी है ।
नाथ की रूप देखि कै श्री लछिमन जू आजा दिए । “दिसि ईक
कमठ अहि कोला । धरहु धरनि धरि धीर न डोला” ॥ सो आजा
कै धराधर जो कच्छपादि सो भूमि का थिर करी है भाव लघु का
सी हगमगाय उलटि न जाय ॥ १ ॥ अब जानकी जू की सार
कहत हैं कि गणेश गुरु गौरी हर भूमिसुर को सुमिरि कै सांचा
“कहं धनु कुलिसहु चाहि कठोरा । कहैं स्यामल मृदु गात किमो
विधि केहि भांति धरौं वर धीरा । सिरस सुमन कन बेधिय हीरा” ।
औ देवतन को संकोच देत हैं कि आप लोगन की सुख संकोची
है भाव संकोच में परि के जे न होनिहार ताहु के करनिहार हैं हे
बंधु कृपासिंधु हे साहसिक अर्थात् शीघ्र कार्य सिद्ध करैया औ हे का
के समुद्र हम को सभा को संकोच औ कुल हू की लाज परी है का
चित्त तो चाहत है कि विनु धनु तारे जयमाल डार देउ पर आहु
अस हमारे कुल में काहु कन्या ने नहीं किया है, यह जो सिय सिय
विशेष खरभरी है ताको औ राजन को पुरुषारथ देखि के औ
जनक जू को मेम को नेम औ प्रतिज्ञा की परीक्षा करि के श्रीराम
पिनाक को दहिना दियो अर्थात् मद्रक्षिण कियो डरि कै पिनाक
है जात भयो जैसे जरी को देखि कै सर्प विकल होय सिकुर जात । देत
हर्षत संत बार बार फूल बर्षत हैं औ सिद्ध सगुन औ मुनि सुभ
कहत हैं पुनि सिद्धादि कहत हैं कि श्रीरामबाहु रूप विशाल
श्रीजनक जू की मनोरथ रूपी कल्पलता जो फैली रही ताको
देखिअत है ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ एक ही सुंदर लाभ ने सब ही की
को हरन करी है ॥ ५ ॥ ६२ ॥

रागसारंग—राम कामरिपुचांप चढ़ायो । सुनि
पुलक आनंद नगर नभ निरपि निसान बजायो ॥ १ ॥ जी
पिनाक विनु नाक किये नृप सयहि विपाद बढायो । सी

जयमाल ३० । जलजकर करकमल जयमाला महुभा औ दूब की है । “एवं तयोक्ते तमवेक्ष्य किंचिद्विसंसिद्वाकमधूकमाला । ऋजुमणामक्रिययैव तन्वी प्रत्यादिदर्शनमभापमाणा” इति रघुवंशे ॥ १ ॥ लह लहे आनंदयुक्त ॥ २ ॥ ३ ॥ इहां श्रीरघुनाथ तमाल हैं मरालपाति जयमाल है ॥ ४ ॥ खुनुस खांसी खई है क्रोध रूप छईवाली खांसी रोग है ॥ ५ ॥ निज निज वेद के आशीर्वाद के मंत्र से आशीर्वाद दिण ॥ ६ ॥ ९६ ॥

राग केदारा । लेहु री लोचननि को लाहु । कुंअर सुंदर सौवरो सपि सुमुपि सादर चाहु ॥ १ ॥ पंडि हरकोदंड ठाठे जानु लंघित बाहु । रुचिर उर जयमाल राजति देत सुप सब काहु ॥ २ ॥ चितै चित दित सहित नप सिप अंग अंग निबाहु । मुकृत निज सियरामरूप विरंचि मतिहि सराहु ॥ ३ ॥ मुदित मन वर वदन सोभा उदित अधिक उछाहु । मनहु दूरि कलंक करि ससि समर सूखो राहु ॥ ४ ॥ मयन सुपसा अयन हरत सरोज सुंदर ताहु । वसत तुलसीदास उर पुर जानकी को नाहु ॥ ५ ॥ ९७ ॥

लेहु ३० । हे सखि हे सुमुखि आदर सहित चाहु कई देखु ॥ १ ॥ जानु लंघित बाहु आजानु बाहु ॥ २ ॥ नख ते सिख लों जो सब अंग अंग का निबाह है अर्थात् सब अंग जस चाही तस है तिन को मीत सहित चित है चितै के अपना मुकृत औ सियराम को रूप औ ब्रह्मा की बुद्धि की सराहना कर ॥ ३ ॥ हर्षित मन है औ उछाह करि श्रेष्ठ वदन की शोभा अधिक प्रकाशित है मानो शशि ने कलंक को दूरि करि समर में राहु को मारयो है इहां राहु पिनाक है ॥ ४ ॥ ५ ॥ ९७ ॥

राग सारंग । भूप के भाग की अधिकार्द । दूखो धनुष मनोरथ पूज्यो विधि सब बात बनाई ॥ १ ॥ तव ते दिन दिन उदो जनक को जब ते जानकि साई । अथ यह व्याह सुफल

रवि सोच सर सोपे हैं । तब के दंप्रैआ तोपे तबके लोभ
भले अब के सुनैआ साधु तुलसीहू तोपे हैं ॥ ४ ॥ ८५ ॥

लाज इ० । लाज तो नहीं है पर राजा जे राठ हैं ते युद्ध के ह
साजि के कोषयुक्त भए हैं । आपुस में कहत हैं चांप चढ़ायें ते
भयो यह विवाह बड़े खाए ते होइगो अस बोले मिआन से क
तरवार खींचि लिए औ सांग लिए चमकि रहे हैं अर्थात् राजा सर
वाल वालिस मूर्खों ते मूर्ख तमकि त्रिदोखे हैं त्रिदोष के बस अक
करि रहे हैं ॥ २ ॥ ३ ॥ रघुनाथ के प्रताप रूपी सूर्य ने सोच ह
सर को सोखि लिए ताते लोक रूप कमल औ चक्रवाक गन हों ॥ १०५ ॥

जयमाल जानकी जलजकर लई है । सुमन सुम
सगुन की बनाई मंजु मानहु मदन माली आपु निरसई
॥ १ ॥ राज रूप लपि गुर भूसुर सुचासिनिन्दि समय क्षम
की ठवनि भकी ठई है । चली गान करत निसान
गइगई लइलहे जोयन सनेह सरसई है ॥ २ ॥ इनो
दुंदुभी हरषि वरपत फूल सुफल मनोरथ भो सुष सुचितई
परजन परिजन रानी राठ प्रमुदित मनसो अनूप राम
रंग रई है ॥ ३ ॥ सतानंद सिय सुनि पाय परि पहिराई सा
सिय मियजिय सोइतसो भई है । मानस ते निकसि बिसा
सुतमाल पर मानहु मराल पांति बैठी बनि गई है ॥ ४ ॥
हितन की लाह की उछाह की विनाद मोद सोभा
अयधि नहीं अय अधिकई है । याते विपरीति अनहित
को जानि लीवी गति कहै प्रगट पुनस सापी पई है ॥ ५ ॥
निज निज बंद की सप्रेम लोग छेम मई मुदित असोस
पिटुपनिदई है । छवि तेहि काल की कृपास सीता दूला
सुलसत छिए तुलसी के नित नई है ॥ ६ ॥ ८६ ॥

राम लपन घर करि मुनिमपरपवारी । सो तुलसी प्रिय-
मोहि लागि है ज्यों सुभाय सुत चारौ ॥ ४ ॥ १०० ॥

कृपि इ० । वशिष्ठ जू औ मंत्री सब विचार में विचच्छन रहे पर
अवरेव को काहू ने समुझि के न मुपारी ॥ १ ॥ सुरारी राक्षस ॥ २ ॥
कातारि विहल ॥ ३ ॥ ४ ॥ १०० ॥

जब ते लै मुनि संग सिधाये । राम लपन के समाचार
सपि तब ते ककुभनपाये ॥ १ ॥ विनु पानही गवन फल-भोजन
भूमि सयन तरुछाहीं । सर सरिता जल पान सिमुन के
साथ सुसेवा नाहीं ॥ २ ॥ कौसिक परमकृपाल परमहिता
समरथ सुपद सुचाली । बालक सुठि सुकुमार सकोची
समुक्ति सोच मोहि आली ॥ ३ ॥ बचन सप्रेम सुमित्रा की
मुनि सब सनेह बस रानी । तुलसी आइ भरत तेहि औसर
कहौ सुमंगल यानी ॥ ४ ॥ १ ॥

जयते इ० सु० ॥ १ ॥ २ ॥ सकोची कहिवे को यह भाव किं संकोच ते
कहु न कहेंगे ॥ ३ ॥ ४ ॥ १०१ ॥

सानुज भरत भवन उठि धाए । पितुसमीप सब समा-
चार मुनि सुदित मातु पहि आए ॥ १ ॥ सजल नयन तन
पुलक अधर फरकत लपि प्रीति सुझाई । कौसल्या लिए
लाइ हृदय बलि कहौ कहु है सुधि पाई ॥ २ ॥ सतागंद
उपरोहित अपने तिरहुतिनाथ पठाए । येम कुसल रघुवीर
लपन को ललित पत्रिका ल्याए ॥ दलि ताडका मारि
निसिचर मप राधि विप्रतिय तारी । दै विद्या लै गए
जनकपुर हैं गुरु संग मुपारी ॥ ४ ॥ करि पिनाकुपन सुता
खयंवर सजि नृप कटक बटोखौ । राजसभा रघुवर मृनाल

भयो जीवन विभुजन विदित वडाई ॥ २ ॥ बार बार ऐह
पहुनाई राम लपन दोउ भाई । एहि आनंद मगन पुरवा-
सिन्ह देहदसा विसराई ॥ ३ ॥ सादर सकल विलोक्त,
रामहिं काम कोटि छवि छाई । एह सुप समउ समान एक
सुप क्यों तुलसी कहै गाई ॥ ४ ॥ ६८ ॥

भूप ३० । सुगम ॥ ९८ ॥ टिप्पणी—उदो कहैं उदय वृद्धि, जा
कहैं जन्मी ॥ २ ॥ पुरवासी श्रीगुनाथ बार २ पहुनाई में जनकपुर आये
और हम लोग दर्शन करेंगे इस आनंद में देह की सुधि भूले हैं ॥ ३ ॥

राग सोरठ—मेरे बालक कैसे धीं मग निवहहिंगे । भूष
पियास सौत स्रम सकुचनि क्यों कौसिकाहिं कहहिंगे ॥ १ ॥
को भोरही जवाटि अन्हवेहैं काटि कलेज दैहै । को भूपन
पहिराव निछावरि करि लोचनसुप लैहै ॥ २ ॥ नयन निमेषनि
क्यों जोगवै नित पितु परिजन महतारी । ते पठए रिपिसाय
निसाचर मारन मषरपवारी ॥ ३ ॥ सुंदर सुठि सुकुमार सुको-
मल काकपच्छर दोऊ । तुलसी निरपि हरपि उर लैहैं
विधि ह्वै है दिन सोऊ ॥ ४ ॥ ६९ ॥

माता की उक्ति मेरे ३० । सकुचनि संकोच ते ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ काक-
पक्ष जुलुफ ॥ ४ ॥ ९९ ॥

रिपि नृप सोस ठगौरी सो डारी । कुलगुरु सचिव
निपुन नेवनि अवरेवन समुझि सुधारी ॥ १ ॥ सिरिसुमन
सुकुमार कुषर दोउ सूर सरोप सरारी । पठए विनहि सहाय
पयादेहि केलियान धनु धारी ॥ २ ॥ अति सनेह कातरि
माता कहै लपि सपि बचन दुपारो । वादि वीर जननी
जीवन जग छवजाति गति भारी ॥ ३ ॥ जो कहिहै फिरे

भयों जीवन. विभुजन विदित वडाई ॥ २ ॥ बार बार ऐह
पहुनाई राम लपन दोउ भाई । एहि आनंद भगन पुरखे-
सिन्ह देहदसा विसराई ॥ ३ ॥ सादर सकल विलोकोत,
रामहिं काम कोटि छवि छाई । एह सुप समउ समाज एक
सुप क्यों तुलसी कहै गाई ॥ ४ ॥ ६८ ॥

भूप ३० । सुगम ॥ ९८ ॥ टिप्पणी—उदो कहैं उदय द्विदि, जाँ
कहैं जन्मी ॥ २ ॥ पुरवासी श्रीरघुनाथ वार२ पहुनाई में जनकपुर आये
और हम लोग दर्शन करेंगे इस आनंद में देह की सुधि भूले हैं ॥ ३ ॥

राग सौरठ—मेरे बालक कैसे धों मग निवहहिं। भूप
पियास सोत स्रम सकुचनि क्यों कौसिकाई कहहिं ॥ १ ॥
को भोरही जवटि बन्धवैहैं काठि कलज देहै । को भूपन
पछिराइ निछावरि करि लोचनसुप लैहै ॥ २ ॥ नयन निमेषति
ज्यों जोगवै नित पितु परिलन महतारी । ते पठए रिपिसाप
निसाचर मारन मपरपवारी ॥ ३ ॥ सुंदर सुठि सुकुमार सुको-
मल काकपच्छर दोऊ । तुलसी निरपि हरपि डर लैहैं
विधि छै है दिन सोऊ ॥ ४ ॥ ६९ ॥

माता की उक्ति मेरे ३० । सकुचनि संकोच ते ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ काक-
पक्ष जुलफ ॥ ४ ॥ ९९ ॥

रिपि नृप सोस ठगौरी सो डारी । कुलगुरु सचिव
निपुन नेवनि भवरेव न समुक्ति सुधारी ॥ १ ॥ सिरिसमुन
सुकुमार कुपर दोउ सूर सरोप सरारी । पठए विनदि सहाय
पयादेहि केलिमान धनु धारी ॥ २ ॥ अति सनेह कातरि
माता कहै लपि मपि वचन दुपारी । वादि-वीर जननी
जीवन जग छत्रजाति गति भारी ॥ ३ ॥ जो कहिहै फिरे

राग केदारा । मन में मंजु मनोरथ होरी । सो हर गौरि
 साद एक ते कौसिक कृपा चौगुनो भो री ॥ १ ॥ मन परि-
 ताप चापश्चिंता निसि सोच सकोच तिमिर नहिं धोरी ।
 वि कुल रवि अवलोकि सभा सर हितचित वारिण बन
 कसो री ॥ २ ॥ कुंभर कुंभरि सब मंगल मूरति नृप दोउ
 रम धुरंधर धोरी । राज समाज भूरिभागी जिन्ह लोचन
 लह्यौ झूक ठोरी ॥ ३ ॥ व्याह उछाह राम सीता को
 मुक्त सकेलि विरंचि रचोरी । तुलसिदास जानै सोई यह
 भुज जाके उर बसति मनोहर जोरी ॥ ४ ॥ १०४ ॥

मन ३० । मिथिला के सखिन की उक्ति है । री सखी जो
 मन में एक मनोरथ रखो अर्थात् श्री जानकी जी को विवाह को सो
 हर गौरी के मसाद औ कौसिक की कृपा ते चौगुनो भयो । भाव चारो
 राज कुमारिन को व्याह देखिवे में आयो ॥ १ ॥ प्रतिज्ञा करिवे को
 जो परिताप औ चाप की गरुआई की जो चिंता सोई रात्रि रही औ
 तेहि करि जो सोच औ संकोच सोई तेहि राति की यनी अंधिआरी
 रही तेहि करि हितनि के चितरूपी कमल सभारूपी तड़ाग में संप्रदित
 भए रहे ते रविकुल रवि जो श्रीराम तिन को देखि कै प्रफुल्लित भए
 ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ १०४ ॥

राजत राम जानकी जोरी । ब्याम सरोज जलद सुंदर
 वर दुलहिनि तडितवरन तन गोरी ॥ १ ॥ व्याह समय सोछति
 वितानतर उपमा कहुं न लहति मति मोरी । मनहु मदन
 मंजुल मंडप महं छवि सिंगार सोभा सोउ धोरी ॥ २ ॥ मंगल-
 समय दोउ अंग मनोहर यथित चुनरी पीत पिछोरो । जानक
 कलस कहुं दित भांवरी निरधि रूप सारद भद्र भोरो ॥ ३ ॥
 मुदित जनक रनिवास रहसवस चतुर नारि चितवहि तन

ज्यौं सम्भुसरासन तोखौ ॥ ५ ॥ यों कहि सिधिल सने
 बंधु दोउ अंबु अंक भरि लौन्हे । वार वार मुष चूँचि चाह
 मनि बसत निक्कावरि कोन्हे ॥ ६ ॥ सुनत सुहावनि चाह
 अयध घर घर आनंद वधाई । तुलसिदास रनिवास रहस
 वस सषी सुमंगल गाई ॥ ७ ॥ १०२ ॥

सानुज ई० पद सुगम ॥ १०२ ॥

राग कान्हरा । राम लपन सुधि आई धाँसै अयध
 बधाई । कलित लगन लिपि पत्रिका उपरोहित की कर
 जनक जनेस पठाई ॥ १ ॥ कन्या भूप विदेह की रूप की
 अधिकाई । तासु खयंवर सुनि सवै आए देस देस की नृप चतुर्ग
 यनाई ॥ २ ॥ पन पिनाक पवि सेरु ते गरुता कठिनाई । मोक-
 याल सहिपाल बान बान इत दसमुष सके न चाँप जठाई
 ॥ ३ ॥ तेहि समाज रघुराज के मृगराल जगाई । भंजि सग-
 सन संभु जग जय कल कीरति तिय तियमनि सिय पाई
 ॥ ४ ॥ पुर घर घर आनंद महा सुनि चाह सुहाई । मातु
 मुदित मंगल सजै कहै मुनिप्रसाद भए सकल सुमंगल
 माई ॥ ५ ॥ गुरुआयमु भंडप रच्यौ सब साज सजाई ।
 तुलसिदास दसरथ बरात सजि पूजि गनेसहि चले निसान
 यजाई ॥ ६ ॥ १०३ ॥

राग ई० । जनेस राजा ॥ १ ॥ २ ॥ प्रतिष्ठा किया भया जो
 पिनाक है सो मरु ते अधिक गुरु है औ बस ते अधिक कठिन है बान
 पालाघुर ॥ ३ ॥ तेहि समाज में रघुराज के मृगराल जो श्रीराम निन
 को तगावन भए अपाव उत्तार बदावन भए “धर पिरीन मरी है
 जानी” इत्यादि बचन ते किन्हे ने संभु को गगमन मोरि के जगन में
 जप भाई पाई ॥ ४ ॥ इहाँ जाह को भने बलिनि है ॥ ५ ॥ इहाँ
 गनेस के पूजन है संत बनाए ॥ ६ ॥ १०३ ॥

की जो विनिआ सो रति काम ने पाई । शिला जो वालि तेहि के
रति काम पाई "उच्छः कणश आदानं कशाद्यर्जनंशीलम्" इति
कोशे । ४।१०६ ॥

जैसे ललित लपन लाल लोने । तैसिचै ललित उर्मिला
पर लपत सुलोचन कोने ॥ १ ॥ सुपमा सारु सिंगारु
करि वानक रचे है तेहि सोने । रूप प्रेम परमिति न
कहि बियकिरही है मतिमौने ॥ २ ॥ सोभासोल सनेह
अवनी समउ केलि गृह गोने । देपि तियन की नयन सुफल
तुलसिदास हुं के होने ॥ ३ ॥ १०७ ॥

जैसे ३० ॥ १ ॥ परम सोभा को सारांश औ शृंगार को सोना
के तेहि सोना ते लपनलाल औ उर्मिला जू को बनाए । भाव
॥ के सारांश ते लपनलाल को औ शृंगार के सारांश ते उर्मिला
को रूप औ प्रेम के अवधि हैं ताते कही नहीं परति है । विशेष थकि
ति मौन है रही है श्री उर्मिला जू को श्याम वरण है ताते शृंगार
सारांश कहे "हिरण्यवर्णा सीता स्यान्मण्डवी पाटलप्रभा उर्मिला
वर्णाभा लुतिकीर्तिः समप्रभा" इति नारदपञ्चरात्रे "पाटलः श्वेतरक्त-
तोवर्णः" ॥ २ ॥ कोलगृह कोहवर जावे को समै को शोभा शील
सुंदर सनेह जो है ताको देखि के तियन के नैन सुफल भए तुल-
सिदास को अब होनिहार है ॥ ३ ॥ १०७ ॥

राग विलावल—जानकीवर सुंदर माई । इंद्र नीलमनि
स सुभग अंग अंग मनोजनि बहु छवि छाई ॥ १ ॥ अरुन
न अंगुली मनोहर नय दुतिवंत कलुक अरुनाई । अंज
नि पर मनहु भौम दम बैठे अचल सुसदसि वनाई ॥ २ ॥
जानु उर चारु जडित मनि नूपुर पद कल सुपर
छाई । पीत पराग भरे अलिगन जनु जुगल जलज लपि
लोभाई ॥ ३ ॥ किंकिनि कानक कंज अवली मृदु मरकत

तोरी । गान निसान वेद धुनि सुनि सुर वरपत सुन
 कहे कोरी ॥ ४ ॥ नयनन यो फल पाइ प्रेमवस सब
 ईस निहारी । तुलसी जेहि आनंद मगन मन को
 वरनै सुप सोरी ॥ ५ ॥ १०५ ॥

राज ६० ॥ १ ॥ व्याह के सम में दूल्हा दुलहिन संग में
 हैं तिन की उपमा हमारी मति कत नही पावत है । माने
 सुंदर मंदप के तरे छवि रूप दुलहिन औ शृंगार रूप दूल्हा है ।
 कहते नहीं वनत हैं क्योंकि इन की शोभा थोड़ी है अर्थात् माने
 सम नहीं ॥ २ ॥ दुलहिन दूल्हा को सब अंग मंगल में औ
 पीत पट को चूनरी के संग ग्रंथिबंधन भयो है ॥ ३ ॥ रास
 ॥ ४ ॥ री सखी जेहि आनंद में मन छवि गयो ताको निहा है
 ॥ ५ ॥ १०५ ॥

दूल्हा राम सिया दुलही री । घन दामिनि वा
 हरन मन सुंदरता नप सिप निवही री ॥ १ ॥ व्याह
 वसन विभूषित सपि अवलो लखि ठगि सि रहौरी ।
 जनम लाहु लोचनफल है इतनोइ लख्यो आजु मही
 सुपमा सुरभि सिंगार कीर दुहि मयन अमियमय दि
 दहौरी । मयि मापन सियराम संवारे सकल भुवन छवि
 महीरी ॥ २ ॥ तुलसिदास जोरी देपत सुप-सोभा ॥ ३ ॥
 जाति कहौरी । रूपरासि विरचौ विरंचि म
 रति काम लहौरी ॥ ४ ॥ १०६ ॥

धाना ६८ ॥ दूल्हा ६० ॥ १ ॥ २ ॥ सुखमा
 को जगावन है काम रूप अहीर ने अष्ट
 जानी" इत्यादि व काव्यो ताको श्री
 जय आदि गान ॥ गुण पाठा है अर्थात्
 गनेश के पूजने हेतु मंदप रासि माने

डर ने ऊपर न गई । नीचे मुख
 सुंदरताई चहुं दिशि छाव रही
 नेऊँ औ मोनिन की माला जो
 मेघ बिजुरी के बीचि इन्द्र धनुष है
 नली आई है । इहां मेघ श्रीराम हैं औ
 अनु यमोपवीत है, मोनी की माला बक-
 , छोड़ी औ ओठ सुंदर है औ दांनन
 न कहिबे योग्य नहीं है । मानो कमल के
 ग में बिजुरी औ मृग की सुंदरताई लिए
 नदिना को लिए बंधे हैं । लाल रंग की
 सुंदर नामा सुंदर लोचन टेढ़ी भौंह औ
 र पाई है, मानो नेत्र नहीं है मृग कमल है,
 रन के समूह है, ने भ्रमरगण बहु हृदय में
 कमल को घेरि रहे हैं । भाव नान बदन नहीं
 एक रूप पंगवा है ॥८॥ लाल चंचल हाई पति-
 मिश्रण की मरजादा मिराई अर्धांग पहरत ने
 ८ ।

। भुजंगि पर जननी वारि पंक्ति छाई ।
 न कर कमलनि संभुसरासन भाई । १ ।
 । हु मरुत बल प्रवल ताडका सारी । मुनि-
 लयन की विधि बडि करहर तारी । २ ।
 नयननि लावति वरीं कुनिदधु उधारी । करी
 जीति सकल नृप धरी है दिदेवकुमारी । ३ ।
 । ति भृगुरति अति नृपति निज कर दहदहारी ।
 सारंग वारि रिय करि है दहृत अनुदहारी । ४ ।
 । गि आभंद दिशोवति दधन सारंग दहदहारी ।
 स आरती उतावति केसरमल करदहारी । ५ । १०८१

सिपरि-मध्य जनु जाई । गर्ई न उपर समीत नमित भू
 यिकसि चणूं दिसि रहो जोनाई ॥ ४ ॥ नाभि गभौर उर
 रेपा बर उर भृगु चरनचिन्ह सुपदाई । भुज प्रलंब भूत
 अनेक जुत वसन पोत सोभा अधिकारी ॥ ५ ॥ जजोपरै
 विचित्र हेममय मुक्ता माल उरसि मोहि भाई । कंटु तडि
 विच जनु सुर पति धनु निकट बलाक पांति चलि पाई ॥
 कंधु कंठ चिबुकाधर सुंदर क्यौं क्यौं दसनन की रुचिराई ।
 प्रदुम कोस महं वसे वच्च मानो निज संग तडित चरन रुचि
 लाई ॥ ७ ॥ नासिका चाम ललित लोचनभू कुटिल कचनि
 अनुपम छवि पाई । रहि घेरि राजीव उमय मानो चंचरी
 ककु हृदय डेराई ॥ ८ ॥ भाल तिलक कंचन किरीट नि
 कुंडल लोण कपोलनि भाई । निरपहिं नारि निकर बिरो
 पुर निमि नृप की सरनाद मिटाई ॥ ९ ॥ सारद सेस सं
 निसि वासर चिंतत रूप न हृदय समारई । तुलसिदास स
 क्यौं करि बरने यह छवि निगम नेति कहि गाई ॥ १० ॥ १० ॥

जानकी ई० । सखी प्रति सखी की उक्ति अरी माई जानकी का
 सुंदर हैं, मरकत मणि सम स्वाम है औ सुंदर सब अंग अंगाने
 अनेक कामन की छवि छाये रही है ॥ १ ॥ लाल चरण है अंगुरी म
 हरनिहारी है, नख दुतिवंत जे है ते कलुरु अरुनाई लिए हैं । मा
 कमल दलनि के ऊपर सुंदर अचल सभा बनाइके दश मंगल के तार
 बैठे हैं ॥ २ ॥ जानु पुष्ट हैं औ सुंदर जंघा हैं औ चरण में मनि न
 जड़ित सुंदर सोने के नूपुर हैं सो सुंदर शब्द करत हैं सो नूपुर न
 हैं पुष्पन के पीत धूरी नें भरे भंवर के समूह हैं मानो युगल चरण हा
 युगल कमल को देखि के लोभाय के रहि गए हैं ॥ ३ ॥ सोनन की
 किकिनी नहीं है कमल कलिन की पांति है । सो मरकत सिखर के म
 में मानो उत्पन्न भई है । इहां मरकत सिखर श्री रघुनाथ हैं, मध्यभा

कटिदेश है ते किंकिनी रूप कली सब डर ते ऊपर न गई । नीचे मुख
करि विकसी तिन के विकसने की सुंदरताई चहुं दिशि छाये रही
॥४॥५॥ उर में विचित्र सुवर्ण मय जनेऊ औ मोतिन की माला जो
है सो हम को भाई, मानो स्याम मेघ विजुरी के बीचि इन्द्र धनुष है
तेहि के निकट बकुलन की पांति चली आई है । इहां मेघ श्रीराम हैं औ
पीत वसन विजुरी है, सुरपाति धनु यज्ञोपवीत है, मोती की माला बक-
पांति है ॥ ६ ॥ शंखसम कंठ है, ठोड़ी औ ओठ सुंदर है औ दांतन
की रुचिराई कैसे कै कहां अर्थात् कहिये योग्य नहीं है । मानो कमल के
कोश में हीरागण अपने संग में विजुरी औ सूर्य की सुंदरताई लिए
बसे हैं वा सुंदर ललाई रूप तड़िता को लिए बसे हैं । लाल रंग की
विजुरी भी लिखी है ॥ ७ ॥ सुंदर नासा सुंदर लोचन टेढ़ी भौंह औ
जुलुफन ने उपमा रहित छवि पाई है, मानों नेत्र नहीं हैं युग कमल हैं,
भौंह औ जुलुफ नहीं हैं भौरन के समूह हैं, ते भ्रमरगण कछु हृदय में
ढेराइके युगल नेत्र रूप कमल कों घेरि रहे हैं । भाव ताते बैठत नहीं
हैं । इहां ढरावनिहारी पलक रूप पंखा है ॥८॥ लोल चंचल झाँई परि-
छाही, निकर समूह, निमिकुल की मरजादा मिटाई अर्थात् एकटक ते
निरखीं ॥ ९॥१०॥१०८ ।

राग कान्हरा । भुजनि पर जननी वारि फेरि डारी ।
क्यों तोखी कोमल कर कमलनि संभुसरासन भारी ॥ १ ॥
क्यों मारीच सुबाहु महा बल प्रबल ताडका मारी । मुनि-
प्रसाद मेरे राम लपन की विधि बडि करवर टारी ॥ २ ॥
चरन रेनु लै नयननि लावति क्यों मुनिब्रधू उधारी । कहो
धौं तात क्यों जीति सकल नृप वरी है विदेहकुमारी ॥ ३ ॥
दुसह रोप मूरति भृगुवति अति नृपति निकर पयकारो ।
क्यों सौंप्पी सारंग हारि हिय करिहै बहुत मनुहारी ॥ ४ ॥
उमगि उमगि आनंद विलोकति वधुन सहित सुतचारी ।
तुषसिदाम

मगन महतारी ॥५॥१०६॥

भुजन इ० हाथ चहुं ओर भुजन पर फिरायके जननी ने न
छावरि करी ॥ १ ॥ जब रघुनाथ सकोच बस उत्तर न दिए तब अ
ही समाधान करति हैं कि मुनि के प्रसाद तें मेरे राम लखन
विधाता ने अनेक अल्पायु टारी ॥ २ ॥ चरणरेणु को नयन
लगाइये को यह भाव कि विरह करि नेत्र संतप्त रहे तिन को शी
करति हैं। अब फेरि अधिक प्रेम करि पूछति हैं कि कैसे अहत्या
तारी ॥ ३ ॥ खयकारी सयकारी, मनुहारी मनावन ॥ ४ ॥

मुदित मन आरती करै माता। कनक वसन मनि बा
वारि वर पुलक प्रफुल्लित गाता ॥ १ ॥ पालागन दुलहिनि
सिखावति सरिस सामु सत साता। देखि असीस ते वरि
कोटि लगि अचल होउ अहिवाता ॥ २ ॥ राम सीय ह
देपि जुवाति जन करहिं परस्पर वाता। अब जान्यौ सचि
सुनौ सपि कोविद बडो विधाता ॥ ३ ॥ मंगल गान निस
नगर नभ आनंद कछौ न जाता। चिरजीवहु अवधिस सु
सब तुलसिदाम सुप्रदाता ॥ ४ ॥ ११० ॥

इति श्री रामगीतावल्यां बालकाण्डः सम्पूर्णः ॥

मुदित इ० सु० ॥ १ ॥ श्री कौशल्या जू दुलहिनिन को अपने स
सातौ सै सामुन को पैलगी करिवे को सिखावति हैं ॥ २ ॥ वि
यदा पण्डित है कहिवे को यह भाव कि समान जोड़ी मिलाय दि
॥ ३ ॥ नगर औ आकाश में मंगल गान होत है औ नगरे धात
दोऊ ठौर को आनन्द कहा नहीं जात है, सब असीस देत हैं कि
पेश के सय भुजन तुलसीदास के सुखदाता चिरंजीवहु ॥ ४ ॥ ११० ॥

दो० । मंगल श्री सरजू सरित, मंगल विपिन प्रमोद । मंगल स
राम जू, जो मोदहु को मोद ॥ १ ॥ युगल चन्द परिकर युगल, च
रेखु सिर नाथ । हरिहर सम गतिमंदहं, दीका लई बनाय ॥ २ ॥
श्रीरामगीतावलीप्रकाशिकाटीकायां श्री सीतारामकृपापात्र श्रीसी
रामीय हरिहरप्रसाद कृता बालकाण्डः समाप्तः । श्रीसीतारामाभ्यां नमः

श्री सीतारामाभ्यां नमः ।

सटीक गीतावली--अयोध्या काण्ड ।

मङ्गलाचरण—दोहा ।

जिन के अंगप्रसंग ते , भूषित भूषण होत ।
होत मुगंध मुगंधयुत , पोतो मोती होत ॥
सोभाह सोभा लहत , जिन के अंग प्रसंग ।
विधि हरिहर वानी रमा , उमा होहिं लखि दंग ॥
तिन्हसियसियवल्लभचरन , बार बार मिर नाथ ।
चरनरेनु परिकर जुगल , नयनन माझ लगाय ॥
अवध कांड टोका रचत , हरिहर मति अनुहारि ।
विगरी सुमति सुधारि हैं , बालक अज्ञ विचारि ॥

—०—

मूल ।

राग सोरठ—नृप कर जोरि कछौ गुरु पाहीं । तुम्हरी
कृपा असोस नाथ मेरी सदै महिस निवाहीं ॥१॥ राम होहिं
जुवराज जिअत मेरे यह लालच मनमाहीं । वहुरि मोहि
जियवे मरिवे की चित चिंता कहु नाहीं ॥२॥ महाराज
भलो काज विचार्यौ वेगि बिलंब न कीजै । विधि दाहि ।

होइ तो सब मिलि जनमलाहु लुटि लौजै ॥ १ ॥ १
 नगर आनंद बधावन कैकैइ विलपानी । तुलसी दास
 माया बस कठिन कुटिलता ठानौ ॥ ४ ॥ १ ॥

टीका ।

वृष ३० । निवाही कहैं पूर्ण किए ॥ १ ॥ २ ॥ विधि दाहिने हाँ
 तो या कथन ते मनोरथ के लाभ में संदेह जनाए ॥ ३ ॥ ४ ॥ १ ॥

राग गौरी — सुनहु राम मेरे प्रान पियारे । वारो स
 वचन श्रुतिसम्मत जाते हैं विकुरत चरन तिहारे ॥ १ ॥ बि

प्रयास सब साधन को फल प्रभु पाये सो तौ नहीं सभारे ।
 हरि तजि धर्मसौल भयौ चाहत नृपति नारि बस सरब

हारे ॥ २ ॥ रुचिर कांच मनि देपि मूढ ज्यों करतल ते चिंता
 मनि डारे । मुनि लोचन चकोर ससि राघव सिव जीवनधर

सोउ न विचारे ॥ ३ ॥ जद्यपि नाथ तात मायाबस मुद-
 निधान सुत तुम्हहि विसारे । तदपि हमहिं त्यागहु अनि

रघुपति दीनदंभु दयाल मेरे वारे ॥ ४ ॥ अतिसय प्रीति विनीत
 वचन मुनि प्रभु कोमल चित चलन न पारे । तुलसिदास श्री

रहौ मातु हित को सुर भूमि विप्र भय टारे ॥ ५ ॥ २ ॥

श्री कौशल्या जी की उक्ति है सुनहु ३० । श्रुतिसम्मत जो सब
 पवन है नाको पागे कई फूटि देउ कोरे ने कि जेहि सत्य वचन ही
 तुम्हारे चरण ते हम बिद्वान हैं ॥ १ ॥ मय साधन को फल रूप में
 मनु भाग नाको पाए पर नहीं मन्त्रादि मन्त्र ॥ २ ॥ ३ ॥ तान साध-
 यन तुम्हारी मायावन ॥ ४ ॥ ॥ अथन न पारे चले के इच्छा नहि
 पर देरि विचारो गो अगिजे वृक्ष में ग्यष्ट है ॥ ५ ॥ २ ॥

रहि अविद्ये मंदर ग्युमायक । श्री सुत तात वचन दा-

जन रत जननीउ तात मानिघे पायक ॥ १ ॥ वेद विदित
यह धानि तुम्हारी रघुपति मटा मना मुपदायक । रापहु
निद्र मरजाद निगम की हैं बलिजाउं धरहु धनु सायक ॥ २ ॥
मोक कृप पुर परिहि मरिहि नृप मुनि मंदेम रघुनाथ सिधा-
यक । यह दूषन बिधि तोहि होत अब राम चरन वियोग
उपजायक ॥ ३ ॥ मातु वचन मुनि श्रवत नयन जल कहु सुभाउ
जनु नरतन पायक । तुलमिटाम मुरकाज न माथ्यौ तो तो
दोष छोड़ मरि पायक ॥ ४ ॥ ३ ॥

रहि १० । रहि चलिऐ फटं रहि जाइए ॥ १ ॥ रघुपति सदा संतन
के सुखदाना हैं यह धानि तुम्हारी वेद में प्रमिद्ध है वेद मिद्ध जो अपनी
मर्जाद है ताको रागद्व भाव अज्ञोप्या धामी सब संत हैं निन को दुख
मनि देहु । मैं बलिजाउं धनुष धान को धरि देहु । भाव चलन के साज
सब उतारि टारहु ॥ २ ॥ अब श्याकुलता ते बिधाता प्रति कहति हैं
कि रघुनाथ के जाइये घाला मंदेम मुनि के सोक रूपी कूप में अपोप्या
धासी परंगे औ महाराज मरंगे श्री रामचरण वियोग उपजावनि हारा
जो यह दूषन से तुम्ह कट होत है ॥ ३ ॥ पायक कहैं पाए कै, आयक
कहैं आए कै ॥ ३ ॥ ४ ॥ टि०—पाठांतर होइ के स्थान मोहि ।

सोरठ—राम हैं कौन जतन घर रहिहैं । बार बार भरि
अंक गोद लै ललन कौन सो कहिहैं ॥ १ ॥ झुहि आंगन
बिहरत मेरे वारे तुम जो सङ्ग सिसु लीन्हें । वैसे प्राण रहत
सुमिरत सुत बहु विनोद तुम कौन्हें ॥ २ ॥ जिन्ह श्रवणनि
कल वचन तिहारें मुनि मुनि हैं अनुरागी । तिन्ह श्रवणन्ह
वनगवन सुनति हैं मोते कवन अभागी ॥ ३ ॥ जुग सम
निमिष जाहि रघुनंदन वदन कमल विनु देये । जौं तन रहे
वरप वीते बलि कहा प्रीति झुहि लेये ॥ ४ ॥ तुलसीदास ॥

वम थो हरि देपि विकल महतारौ । गद्गद कंठ नयन
फिरि फिरि आवन कहैउ मुरारी ॥ ५ ॥ ४ ॥

राम ६० । हे राम मैं कवने जतन ते घर में रहोगी ॥ १ ॥ २ ॥
इहां वरप पद ते चौदह वरप लेना ॥४॥ फिरि कहैं पारंपार ॥५॥

राग बिलावल—रहहु भवन हमरे कहे कामिनि । साद
सामु चरन सेवहु नित जो तुम्हरे अति हित रह स्वामिनि
॥ १ ॥ राजकुमारि कठिन कंठक मग क्यों चलिही मरुद
गजगामिनि । दुमह वात वरपा हिम आभय कौसी मरि
अगनित दिन जामिनि ॥ २ ॥ छैं पुनि पितु अन्ना प्रमान
करि छैं वैगि मुनहु दूतिटामिनि । तुलसिदाम प्रभु शिख
यचन मुनि सहि न सकी मुरछित भइ भामिनि ॥३॥५॥

श्री जानकी नू पनि रघुनाथ जी की उक्ति है । रहहु ६० । पूर्व में
स्वामिनी हैं यह कहिये को यह भाव कि तुम को अन्यत्र जाना
चाहिये ॥१॥ जामिनि गानि ॥२॥३॥५॥

रूपानिधान मुजान प्रानपति सद्ग विपिन छैं पार्ष्णीगौ ।
रुह ते कोटि गुनित सुषमारग चलत माय ससु पार्ष्णीगौ ॥१॥
याके चरन कमल पार्ष्णीगौ अम भय वात डोलार्ष्णीगौ । म
नकोरनि मुख सयंक लवि सादर पाम करार्ष्णीगौ ॥२॥
जिठि माय साधियो मा कहें तो मरु प्रान पठार्ष्णीगौ । तुलसि
दाग प्रभु बिनु प्रीयत रहि क्यों फिरि बदन देवार्ष्णीगौ ॥३॥

श्री जानकी नू की उक्ति है कृपा ६० । गण गुण ॥ १ ॥ मा
नेन की । अनेन को दूरारि गुण का अन्त है छवि का शिख
काद मरि का दार्ष्णीगौ ॥ २ ॥ ३ ॥ ५ ॥

कहो दुमह विनु रुह की कोन जानु । विपिन को
मरुद रुह को को दे विप वरिष्यो राम ॥ १ ॥ ५ ॥

कल विमल दुकूल मनोहर कंद मूल फल अमिय नाजु ।
 प्रभुपद कमल बिलोकिहैं छिनु छिनु इहि ते अधिक कहा
 सुप समाजु ॥२॥ हौं रहौं भवन भोग लोलुप है पति कानन
 कियो सुनि को साजु । तुलसिदास ऐसे विरहवचन सुनि
 कठिन हियो विहस्यो न आजु ॥ ३ ॥ ७ ॥

कहो ६० ॥ १ ॥ अमिय नाजु अमृत सम अन्न ॥ २ ॥ ऐसे विरह
 वचन अर्थात् तुम सुकुमारि हो बन योग्य नहीं यह वचन सुनि के मेरो
 हृदय कठिन है सो न फट्यो ॥ ३ ॥ ७ ॥

प्रिय निठुर वचन कहे कारण कवन । जानत हो सब
 के मन की गति मृदुचित परम कृपालु रवन ॥१॥ प्राननाथ
 सुंदर मुजान मनि दीनबंधु जन आरति दवन । तुलसिदाम
 प्रभु पद सरोज तजि रहि हौं कहा करौंगी भवन ॥१॥८॥

मिय ६० । रवन स्वामी ॥१॥ मुजान मनि मुजानन में श्रेष्ठ ॥२॥
 टि०—आरति दवन दुख हरनेवाले ।

मैं तुम से सतिभाय कही है । वृक्षाति और भांति करा
 भासिनि कानन कठिन कलस सही है ॥ १ ॥ जौं चलि है
 तौ चली चलिये वन सुनि सिय मन अवलंब लही है । वृद्धत
 विरह वारि निधि मानहु नाह वचन मिमि बांह गही है ॥२॥
 प्राननाथ के साथ चली उठि अवध सोक सरि उमगि बही
 है । तुलसी सुनि न कबहु काहू कहुं तनु परिहरि परिछांइ
 रही है ॥ ३ ॥ ८ ॥

श्री रघुनाथ की उक्ति है, मैं ६० । हे भासिनी हम तुम से जम है
 वस करी है, ताको तुम आं भांति काहे वृक्षनि हो, वन में सांजे
 कठिन कलस है ॥ १ ॥ मानो विरह रूप समुद्र में वृद्धन में
 ने वचन के पढ़ने से बांह गहि लही है

पृथक् परिछांही को रहते काहू ने नहीं सुनी है । भाव तब जानकी
कैसे रहैं ॥ ३॥९ ॥

जबहिं रघुपति सङ्ग सीय चलो । विकल वियोग सो
पुरतिय कहै अति अन्याउ अली ॥ १ ॥ कोउ कहै मनिय
तजत कांच लगि करत न भूप भली । कोउ कहै कु
कुवेलि वैकैड दुप विपफलनि फली ॥ २ ॥ एक कहै र
जोग जानकी विधि बड विपस बनी । तुलसी कुलिसहु की
कठोरता तेहि दिन दलकि दली ॥ ३॥१० ॥

जब १० । हे सखी अति अन्याव है ॥ १ ॥ इहां कांच स्थानी
सत्य वचन हैं; कुवेलि विपलता ॥ २ ॥ क्या जानकी जू बन जाने
जोग्य हैं अर्थात् नहीं पर विधाता अति कठिन बलवान है । गोसाईं जी
कहत हैं कि तेहि दिन और को को कहै कुलिसहु की कठोरता दर्शाने
के फटि गई ॥ ३॥१० ॥

ठाठे हैं कपन कमल कर जोरे । लर धकधकी न का
काहु सकुचनि प्रभु परिहरत सवन चिन तोरे ॥ १ ॥ कप
सिन्धु भवलोकि बंधु तन प्रान कपान बीर सी शीरे । ता
विए मागिए मातु सो बनिहै बात उपाइ न शीरे ॥ २ ॥
जाइ चरन गहि आयमु जाँच्यो जननि कहत बहु भाँति
निहोरे । मिय रघुवर सेवा मुचि छोड़ी तौ जानिही सौ
सुत मोरे ॥ कोजहु इहै विचार निरंतर राम समीप मुहूत
नहिं थोरे । तुलसी मुनि मिय चने चकित चित उद्यो
मानो मिथग अधिक भय मोरे ॥ ४॥११ ॥

ठाठे १० । गोसाईं ने बहुत करन नाही है हृदय में प्रकटही है
काहे ने कि प्रभु या काट में गह को तोरे कृप मय त्याग करन है ॥ १ ॥
जान रूप जो लखान है माँको बीर के लखान छोरे मयान्द दलकी

गोले बंधु के तन को देखि के कृपा सिंधु बोले कि हे तात ! माता सो विदा मागिए और उपाय से न बनिई अर्थात् वे माता के कहे हम न ले चल्य ॥ २ ॥ सुनि छलरहित ॥३॥ एही विचार निरंतर करेहु कि घारे मुकुन से रघुनाथ के निकट प्राप्ति नहीं होत है । यह सिखावन सुनि के चकित चित ते चलत भए । मानो अधिक के गाफिल भए से पच्छी बदेउ ॥ ४ ॥ ११ ॥

राग सौरठ—मोको विधु वदन विलोकन दीजे । राम लपन मेरो यहै भेट वलिजाउं मोहि मिलि लौजे ॥ १ ॥ सुनि पितु वचन चरन गहे रघुपति भूप अंक भरि लौन्हे । अजहुं अवनि बिहरति दरार मिस सो अवसर सुधि कोन्हे । पुनि सिरनाइ गवन कियो प्रभु मुरझित भयो भूप न जाग्यौ । करमचोर नृप अधिक मारि मानो रामरतन लै भाग्यौ ॥ ३ ॥ तुलसी रविकुल रवि रथ चढि चले तकि दिसि दपिन सुहाई । लोग नलिन भए मलिन अवधसर विरह विषम हिम आई ॥ ४ ॥ ११ ॥

श्री राम मति श्री चक्रवर्ती महाराज की उक्ति है मोको इ० ॥१॥२ कर्म रूप चार ने महाराज रूप अधिक को मारि के मानो राम रूप रत्न को छूटि के लै भाग्यो ॥ ३ ॥ गोसाई जी कहत हैं कि सूर्य कुल के सूर्य जो श्रीराम सो रथ पर चढ़ि के सुंदर दक्षिण दिसा के ओर चलत भए । सूर्य दक्षिणायन में हिम रितु आवति है सो इहां फठिन विरह रूप हिम रितु आई । ताते अजोध्या रूप सर में, लोग रूप कमल मलीन होत भए ॥ ४ ॥ १२ ॥

राग बिलावल—कहो सो विपिन है धौं केतिक दूरि । जहां गवन कियो कुंवर कोसलपति वृक्षति सिध प्रिय पतिहि विमूरि ॥ १ ॥ प्रान नाथ परदेस पयादेहि तजि तन तूरि । करों

पृथक् परिछाही को रहते काहू ने नहीं सुनी है । भाव तब जानकी
कैसे रहें ॥ ३१९ ॥

अवहिं रघुपति सङ्ग सीय चञ्चो । विकल वियोग सोन
पुरतिय कहै अति अन्याउ अली ॥ १ ॥ कोउ कहै मनिय
तजत कांच लगी करत न भूप भली । कोउ कहै कु
कुवेलि वैकेई दुप विषफलनि फली ॥ २ ॥ एक कहै
जोग जानकौ बिधि बड विषम बनी । तुलसी कुलिसड
कठोरता तेहि दिन दलकि दली ॥ ३१२० ॥

जब ३० । हे सखी अति अन्याव है ॥ १ ॥ इहां कांच त्यागी
सत्य वचन है; कुवेलि विपलता ॥ २ ॥ क्या जानकी जू बन न
जोग्य हैं अर्थात् नहीं पर विधाता अति कठिन बलवान है । गोसाईं मं
कहत हैं कि तेहि दिन और को को कहै कुलिसडु की कठोरता दर्शा
के फटि गई ॥ ३१२० ॥

ठाटै हैं लपन कमल कर जोरे । उर धकधकी न कात
काहु सकुचनि प्रभु परिहरत सवन चिन तोरे ॥ १ ॥ कुरा
सिन्धु भवलोकि बंधु तन प्राण कृपान वीर सी शोर । तात
बिद्या मागिए मातु सो बनिहै यात उपाइ न और ॥ २ ॥
जाइ चरन गहि आयसु जाँच्यो जननि कहत बड भाँति
निहोर । मिय रघुवर सीया सुनि छैही तौ जानिही स
मुत मोरे ॥ कोऊहु कहै विचार निरंतर राम समीप मुह
नहिं मोरे । तुलसी मुनि मिय चले चकित चित उछै
मानो बिहग बधिक भय मोरे ॥ ४॥११ ॥

दाहे ३० । मंदोप ने कद करन नारी है इतब मे बहली है ।
दाहे ने हि नह पा काय मे मय को मोरे
दान मन जो माकार दे मायो बह

मरकत कनक वरन मृदुगात ॥ १ ॥ अंसनि चाप
 टे मुनिपट जटामुकुट विच नूतन पात । फेरत
 रोजनि सायक चोरत चितहि सहज मुसकात ॥ २ ॥
 र सुकुमारि सुभग मुठि राजति विनु भूपन नवसात ।
 नरपि ग्राम वनितनि के नलिन नयन धिगसित मानो
 ॥ अंग अंग अंगनित अनंग छवि उपमा कहत
 तकुचात । सिय समेत नित तुलसिदास चित वसत
 पयिक दोउ भात ॥ ४ ॥ १५ ॥

मुख औ कमल सम नेत्र औ कोमल अंग हैं । मरकत धरण
 त कनक धरण श्रीलछिमन जी हैं ॥ १ ॥ अंसनि चाप, कान्दन
 नेपट बल्कलादि ॥ २ ॥ सुभगमुठि अति सुंदरि भूपन नवसात
 गर परम शोभा देखि कै ग्रामयुवतिन के नेत्र कमल विकसे
 हाल में कमल विकसत । इहां सुखमा मूर्य हैं ॥ ३ ॥ ४ ॥ १५ ॥

पि टैपि री पयिक परम सुन्दर दोऊ । मरकत
 वरन काम कोटि कांति हरन चरन कमल कोमल
 कुंभर कोऊ ॥ १ ॥ कर सर धनु कटि निषंग मुनि-
 सुभग अंग संग चंद्रवदनि बधू सुंदरि सुठि सोऊ ।
 वैप किए सोभा सब लूटि लिए चित के चोर वय
 तेचन भरि जोऊ ॥ २ ॥ दिनकर कुल मनि निहारि
 ग्राम नारि परसपर कहैं सपि अनुराग ताग पोऊ ।
 ध्यान सुधन जानि भानि लाभ सधन कृपिन ज्यों
 हिय सुगेह गोऊ ॥ ३ ॥ १६ ॥

धुन की उक्ति है देखि ६० । कलधौत स्वर्ण ॥ १ ॥ जोऊ
 मस्पर कहति हैं कि हे सखी इन दोऊ कुंभर रूप मणिन
 रूप ताग में पोहु यह ध्यान को सुंदर धन जानि कै अति

चरन सरोरुद्ध धूरि ॥ २ ॥ तुलसिदास प्रभु प्रिया वचन सुनि
नौरज नयननीर आए पुनि । कानन कहां अवधि सुनु सुंदरि
रघुपति फिरि चितये हितभूरि ॥ ३ ॥ १३ ॥

श्रीराम प्रति श्रीजानकी जी की उक्ति है कहां ३० । श्रीजानकी
जू भिय पति जो श्रीराम निन सो विमूरि कहैं बिलखाय के वृत्ति है
हे कोशलपतिकुंवर जहां को गमन कियां हौ सो बन धौं केतिक गी
है हम ते कहां ॥ १ ॥ हे प्राणनाथ सब सुख को नृनवत तोरि के तन
औ परदेस को पयादे चले अमित भए होहुंग ताते तरुतर विलस
कीजिए मैं बयारि करौं औ चरण कमल की धूरि झारौं । भाव जान भन
वतरि जाय ॥ २ ॥ प्रिया के यह वचन सुनि के प्रभु के नैन कमल में
जल भरि आए । कहत भए कि हे सुंदरि सुनो अवही बन कहां है अन
काहि के अति हित से फेर देखत भए ॥ ३ ॥ १३ ॥

फिरि फिरि राम सीयतन हेरत । त्रुपित जानि जल
लेन लपन गए भुज उठाय ऊंचे चटि टेरत ॥ १ ॥ अवनि
कुरंग बिहग द्रुम डारनि रूप निहारत पलक न प्रेरत । सगन
न डरत निरपि कर कमलनि सुभग सरासन साथक फेरत
॥ २ ॥ अवलोकित मग लोग चहुं दिसि मनहुं चकोर चंद्रमहि
घेरत । ते जन भूरिभाग भूतल पर तुलसी राम पधिकपद
ले रत ॥ ३ ॥ १४ ॥

फिरि ३० । श्रीगम जू ऊंचे पर चढ़ि के भुजा उठाय लपन लाव
को टेरत हैं औ श्रीजानकी जू के ओर फिरि फिरि देखत हैं ॥ १ ॥
भूमि ते हरिन औ वृक्षन के दारन ते पक्षी रूप को एक टक देखत हैं ।
यद्यपि श्रीराम जू फर कमलनि से छंदर धनुष धान फेरत हैं तथापि
ऐसे मगन हैं कि देखि दरत नहीं हैं ॥ २ ॥ जैसे चन्द्रमा को चकोर
घेरत हैं नैसे मग लोग चहुं ओर ते देखत हैं अर्थात् पलक रांकि ॥ ३ ॥

नृपतिकुंभर राजत मग जात । सुंदर वदन सरोरुद्ध

लोचन मरकत कनक वरन मृदुगात ॥ १ ॥ अंसनि चाप
तून कटि मुनिपट जटामुकुट विच नूतन पात । फेरत
पानि सरोजनि सायक चोरत चितहि सहज मुसकात ॥ २ ॥
संग नारि सुकुमारि सुभग सुठि राजति विनु भूपन नवसात ।
मुपमा निरपि ग्राम वनितनि के नखिन नयन विगसित मानो
प्रात ॥ ३ ॥ अंग अंग अगनित अनंग कृवि उपमा कहत
सुकवि सकुचात । सिय समेत नित तुलसिदास चित बसत
किशोर पथिका दोउ भात ॥ ४ ॥ १५ ॥

सुंदर मुख औ कमल सम नेत्र औ कोमल अंग हैं । मरकत वरण
श्रीराम औ कनक वरण श्रीलछ्मिन जी हैं ॥ १ ॥ अंसनि चाप, कान्हन
पर धनु मुनिपट बल्कलादि ॥ २ ॥ सुभगसुठि अनि सुंदरि भूपन नवसात
सोरह मृंगार परम शोभा देखि के ग्रामयुवतिन के नेत्र कमल विकसे
जैसे प्रातःकाल में कमल विकसत । इहां मुखमा सूर्य है ॥ ३ ॥ ४ ॥ १५ ॥

तूं देखि देखि री पथिक परम सुन्दर दोऊ । मरकत
कलधौत वरन काम कोटि कांति हरन चरन कमल कोमल
अति राजकुंजर कोऊ ॥ १ ॥ कर सर धनु कटि निपंग मुनि-
पट सोहैं सुभग अंग संग चंद्रवदनि बधू सुंदरि सुठि सोऊ ।
तापस वर वेष किए सोभा सब लूटि लिए चित के चोर बय
किसोर लोचन भरि जोऊ ॥ २ ॥ दिनकर कुल मनि निहारि
प्रेम मगन ग्राम नारि परसपर कहैं सपि अनुराग ताग पोऊ ।
तुलसी यह ध्यान सुधन जानि मानि लाभ सघन कृपिन ज्यों
सनेह सो हिय सुगह गोऊ ॥ ३ ॥ १६ ॥

ग्राम बधुन की लक्ति है देखि इ० । कलधौत स्वर्ण ॥ १ ॥ जोऊ
देखु ॥ २ ॥ परस्पर कहति हैं कि हे सखी इन दोऊ कुंजर रूप मणिन
को अनुराग रूप ताग में पाहु यह ध्यान को सुंदर धन जानि के अनि

लाभ मानि कै हृदय रूप सुंदर गृह में सनेह पूर्वक छपाव जैसे शीत धन छपावत है ॥ ३ ॥ १६ ॥

कुंवर साविरो री सजनी सुंदर सब अंग । रोम रोम हरि निहारि आलिवारि फेरि डारि कोटि भानुसुधन सरदसो कोटिचनंग ॥ १ ॥ वामअंस लसतचाप मौलि मंजु लटकलान सुचिसर कर मुनिपट कटितट कसे निपंग । आयत उर बाज नैन सुष सुषमा को लहै न उपमा अवलोकि लोक गिरा मति गति भंग ॥ २ ॥ यौ कहि भई मगन बाल विधकौ सुनि युवति जाल चितवत चले जात संग मधुप भृग बिहंग । वरनो किं तिन्ह की दसहि निगम अगम प्रेमरसहि तुलसो मन बदन रंगे सचिर रूप रंग ॥ ३ ॥ १७ ॥

कुंवर १० । री सजनी यह साविरो कुंवर सब अंग ते सुंदर हैं । आली इन की रोम रोम की छवि देखि कै कोटिन अभनी कुमार औ सरद पूनों के चंद्र औ कोटिन काम कों फेरि कै नेवछावरि करि हा ॥ १ ॥ वाम कांधे में धनु औ माथे में पवित्र जटन कै समूह औ हा में बाण सोभत है । बलकल पहिरे हैं औ कटिदेश में तरकस कसे छाती बाहु औ नयन बिसाल हैं औ मुख की परम शोभा को कोटि नहीं पायत है । लोक में उपमा खोजि कै सारदा की मति औ गति नाई है "मति भारती पंगु भई जो निहारि विचारि फिरी उपमान पंगु ॥ यह कहनिहारी वाला अस कहि प्रेम में दूखि जात भई कै कहनि और सप युवती सुनि थकिन होत भई औ भ्रमर इन चितवत संग में चले जात हैं । मन रूप बसन कों सुंदर रूप रंग है । तिन्ह की दसा कैसे वरनों कोहे ते कि वेदन को भी अगम प्रेम ॥ ३ ॥ १७ ॥

राग कल्याण । हेतु कोउ परम सुंदर सपि घटोही ।
चरन चरन बारिज वरन भूपसुत रूपनिधि

नरपि हों मोहो ॥ १ ॥ अमन मरकत स्याम सील सुपमा
 तम गौर तन सुभग मोभा मुमुक्षि जोही । जुगल बिच नारि
 सुकुमारि मुठि मुंदरी डंदिग डन्दु छरि मध्य जनु सोही ॥ २ ॥
 तरनि वरधनु तीर रुचिर कटि तूनौर धीर सुर सुपद मर्दन
 प्रथनिटोही । अंबुजायत नैन वदन छवि बहु मयन चारु
 चितवनि चतुर लेत चित पोही ॥ ३ ॥ वचन प्रिय मुनि
 सवन राम करुनाभवन चितै सब अधिक हितसहित ककु
 पोही । दाम तुलसी नैहविवस विमरी टेह जान नहिं आपु
 तेहि काल धौं कोही ॥ ४ ॥ १८ ॥

देखु १० लाल कमल के रंग कांमल चरण तें जे भूमि में चलत
 हैं ते रूपनिधि भूपसुतन्द को देखि मैं मोहि गई । १ ॥ हे सुमुखि
 निर्मल मरकत सम स्याम आं शील परम शोभा के धाम एक कुंवर
 आं गौर तन सुंदर शोभा वालो दूसरो कुंवर कों देखु आं दोनों कुंवरन
 के बीच अति सुंदर सुकुमारि नारि हैं मानों चंद्रमा आं विष्णु के मध्य
 में लक्ष्मी शोभी ॥ २ ॥ तूनीर तरकस अवनिद्रोही राक्षसादि अंबु-
 जायत नयन कमलवत् विस्तृत नेत्र, लेत पोही गूथि लेत ॥ ३ ॥ सब
 कों चितए पर अधिक हित सहित ओहि कहनिहारि कों कोही कहैं
 कवन हौं ॥ ४ ॥ १८ ॥

राग कैदारा । सपि नीके कै निरपि कीउ मुठि सुंदर
 बटोही । मधुर मूरति मन मोहन जोहन जोग वदन सोभा-
 सदन देपि हों मोही ॥ १ ॥ सांवरे गोरे किशोर सुर मुनि
 चितचोर लभय अंतर एक नारि सोही । मनहु वारिद
 विधु बीच ललित अति राजति तडित निज सहज विहोही
 ॥ २ ॥ उर धीरज धरि जनम मुफल करि मुनहि सुमुपि
 जिनि विकल होही । को जानै कौन सुकृत लछौ है लोयन

लाहु ताही तें वारहि वार कहतिहों तोही ॥ ३ ॥ सखी
सुसीप दर्द प्रेम मगनभई सुगति विसरि गई आपनी ओही।
तुलसी रही है ठाढी पाहन गढीसी काढी न जाने कहाँ
आई कौन को कोही ॥ ५ ॥ १८ ॥

सखी ३० । हे सखी भली भांति करि देखु कोऊ अति सुंदर
बटाही है । इन मनमोहन पथिकन की सोहावनि मूरति देखिबे योग्य
है । सोभा के सदन इन के मुख हैं जाके देखि के मैं मोहि गई हों ॥ १ ॥
दोजन के बीच एक नारि सोहि रही है मानों मेघ औ चन्द्रमा के बीच
में अपनो चंचल सुभाव त्यागि कै अति सुंदर विजुरी सोहि रही है ॥ २ ॥
हे सुमुखि सुनु विकल मति होंदि धीरज धरि के अपना जन्म मुक्त
करु जो कौने सुकृतन से नेत्रन ने यह लाभ पायो है । ताते में बारी
बार तोसो कहति हों ॥ ३ ॥ पाहन सी गढ़ि काढ़ी गढ़ी भई पापर
की मूरति सी कौन की कोही केहि की हो औ कौन हो । ४ ॥ १९ ॥

भाई मन के मोहन जोहन जोग जोही । थोरिहि बयस
गोरे सांवरे सखीने लोने लोयन ललित विधु बदन बटाही ॥
सिरनि जटा मुकुट मंजुल सुमनजुत तैसियै लसति नव
पल्लव जोही । किये मुनिवेष बौर धरे धनु तून तोर सोंई
मग कोहैं लपि परे न मोही ॥ २ ॥ सोभा कों सांचो संवारि
रूप जातरूप ठारि नारि विरची विरंचि संग सो सोही ।
राजत रुचिर तन सुंदर स्रम के कन चाहे चकचोधी लागै
का कहैं तोही ॥ ३ ॥ सनेह सियिल सुनि वचन सकल
सिय चितई अधिकहित सहित ओही । तुलसी मानहु प्रभु
कृपा की मूरति फिरि हरि कै हरपि हिय लियो है पोही
॥ ४ ॥ २० ॥
भाई ३० । हेभाई देखिबे योग्य मन के मोहन बटाही को मैं देखी ।

ते बटोही कैसे हैं कि जिन्ह की अवस्था थोड़ी है, एक सलोने गोरे हैं,
एक लोने सांवरे हैं, सुंदर आंखें हैं, चन्द्रसम मुखें हैं ॥१॥ नव पल्लव
खोही नए पवनजुत ढोंगी, को हैं कान हैं ॥ २ ॥ ब्रह्मा ने शोभा को
सांचा बनाइकै तामे रूप रूपी सोना को ढारि कै नारि बनाई सो
नारि संग में सोहि रही है, चाहै कहें देखे ॥ ३ ॥ वह जो सनेह ते
शिथिल है ताकी सब बातें श्रीजानकीजू मुनि के अधिक प्रीति-
सहित बाको देखत भई । मानो जानकीजू न देखीं प्रभु की कृपा की
मूरति ने फिरि के देखि हरपि के चित्त को गुंथि लई । ४ ॥ २० ॥

सपि सरद विमल बिधु बदन बधूटी । ऐसी ललना
सलोनी न भई न है न होनी रतै रची बिधि जो छोलत
छवि छूटी ॥१॥ सांवरे गोरे पथिक बीच सोइति अधिक तिहुं
तिभुजन सोभा मानहु लूटो । तुलसी निरपि सिय प्रेमवस
कहैं तिय लोचन सिमुन्ह देहु अमिय घूटी ॥२॥२१ ॥

सखी ६० । हे सखी निर्मल सरद के चन्द सप या बधूटी को मुख
है ऐसी सलोनी ललना न भई है न कहें है न होनिहार है, पिधाता ने
याके सुधारन में जो छवि छूटि परी ताते रति को बनाई ॥ १ ॥ तिहुं
कहैं तीनों जने लोचन सिमुन्ह देहु अमिय घूटी, लोचन रूप बालकन के
पथिक रूप रूपी अमृत को घांटी देहु ॥ २ ॥ २१ ॥

सोहैं सांवरो पथिक पाछे ललना लोनी । दामिनि बरन
गोरी लपि सपि तिन तोरी बोती है वय किमोरो जीवन
होनी ॥ १ ॥ नीके कै निकाई दपि जनम सुफल लपि
जग मी भूरि भागिनि नभ न छीनो । तुलसी स्वामी
स्वामिनि जोहि मोही है भामिनि सोभा सुधा पियं करि
अपियां दोनी ॥ १॥२२ ॥

सोहैं ६० सु० ॥१॥ नभ न छोनी न आकाश न पृथ्वी में, अग्निभां
दोनी आंखिन को दोना बनाय ॥ २ ॥ २२ ॥

पथिक गोरे सांवरे सुठि लोने । संग सुतिय जाके तन
ते लहौ हैं दुति खर्न सरोरुह सोने ॥ १ ॥ वय किसो
सरि पार मनोहर वयस सिरोमनि होने । सोभा सुधा पावि
अंचवहु करि नयन मंजु मृदु दोने ॥ २ ॥ हेरत हृदय हात
नहिं फेरत चारु विलोचन कोने । तुलसी प्रभु किधौ प्रभु
प्रेम पटे प्रगट कपट विनु टोने ॥ ३ ॥ २३ ॥

पथिक ३० ॥ १ ॥ किशोर अवस्था रूप नदी से पार है के मनो-
हर युवा अवस्था होनिहार है ॥ २ ॥ सुंदर नयनन सो तिरछे देखनी
मन को हरिलेत हैं फेर फेरत नहीं । गोसाईं जी कहत हैं कि प्रभु कैशों
प्रभु के प्रेम ने विना कपट के टोना प्रगट पड़े हैं । भाव टोना कपट करि
छिपाय के किया जान है । इहां साधुहे मनहरे ताते प्रगट कहे ॥ ३ ॥ २३ ॥

मनोहरता को मानो ऐन । स्यामल गौर किसोर पथिक
दोड सुसुपि निरपि भरि नैन ॥ १ ॥ बीच बधू विधुवर्दान
विराजति उपमा कहुं कोउ हैन ॥ २ ॥ मानहुं रति रितुना
सहित सुनिवेष बनायौ है मैन ॥ ३ ॥ किधौ सिंगार सुपमा
सुप्रेम मिलि चले जग चित वित लैन । अद्भुत चर्च किधौ
पठई है विधि मग लोगनि सुप दैन ॥ ४ ॥ सुनि सुचि सरत
सनेह मुहावने ग्राम बधुन कौ वैन । तुलसी प्रभु तरु तरु
विलंब किये प्रेम कनौडे कैन ॥ ५ ॥ २४ ॥

मनो ३० सु० ॥ १ ॥ हैं नही है ॥ २ ॥ कैधौ शृंगार रस औ पार
शोभा औ प्रेम मिलि के जगत के चित रूपी धन को लेइवे कोचले हैं ।
शृंगार श्रीराम जू मुखमा श्रीजानकी जू प्रेम श्रीलछिमन जू हैं । कैधौ
विधाता ने मगलोगन के मुख देखे हेतु अद्भुत इन्ह तीनों मूर्ति
करि पठए हैं वा विचित्र वेदार्थ ॥ ३ ॥ प्रेम करि के कनौडा कौ
नही भए भाव सप के भए ॥ ४ ॥ २४ ॥

वय किसोर गोरे सांवरे धनु वान धरे हैं । सब अंग सहज मुहावने राजिव जीते नैयननि वदननि विधु निदरे हैं ॥ १ ॥ तून मुमुनिपट कटि कसे जटा मुकुट करे हैं । मंजु मधुर मृदु मृगति पानछौ न पायन कैसे धौं पथ विचरे हैं ॥ २ ॥ उभय बीच यनिता बनी लखि मोहि परे हैं । मदन सप्रिया सप्रिय सपा मुनि वेपु बनाए लिये मन जात हरे हैं ॥ ३ ॥ सुनि जहं तहं देपन चले अनुराग भरे हैं । राम पधिक छवि निरपि कै तुलसी मगलोगनि धामकाम बिसरे हैं ॥ ४ ॥ २५ ॥

पय ३० । राजीव कमल, निदरे हैं निरादर किए हैं ॥ १ ॥ सुंदर मनोहरमूर्ति कोमल ताह में पनही पगन में नहीं ॥ २ ॥ दोउन के बीच में यनिता बनी है अस हमें को लखि परत हैं कि रतिसहित वसंत सहित काम मुनिवेष बनाये सब के मन हरे लिए जात हैं ॥ ३ ॥ ४ ॥ २५ ॥
कैसे पितु मातु कैसे ते प्रिय परिजन हैं । जगजलधि ललांमं लोने लोने गोरे श्याम जिन्ह पठये ऐसे बालकन बन हैं ॥ १ ॥ रूप के न पारावार भूप के कुमार मुनिवेष देपत लोनाई लघु लागत मदन हैं । सुपमा की मूरति सी साथ निसिनाथमुपौ नय सिष अंग सब सोभा के सदन हैं ॥ २ ॥ पंकज करनि चांप तीर तरकस कटि सरदसरोजह तें सुंदर चरन हैं । सीता राम लपन निहारि ग्राम नारि कहै हरि हरि हरि हेली हिय के हरन हैं ॥ ३ ॥ प्रानहुं के प्रान से मुजीवन के जीवन से प्रेमहू के प्रेम रंक कपिन के धन हैं । तुलसी के लोचन चकोरनि के चंद्रमा से पाछे मन मोर चित चातक के घन हैं ॥ ४ ॥ २६ ॥

कैसे ३० । जगत रूप समुद्र के रज ॥ १ ॥ इहां पारावार अवधि

के अर्थ में है अर्थात् रूप की सीमा नहीं है । निसिनायमुखी चन्दमुखी
 ॥ २ ॥ सरदसरान सरद के कमल, हेरि हेरि हेरि हेरी कई हेरती
 देसु देसु देसु इश भनि हर्ष में वीप्सा । ३ ॥ रंक कपिन के दृष्टि हीं
 के, मन रूप मोर औ भित रूप चातक के आछे कई नवीन सनल में
 हैं ॥ ४१२६ ॥

राग भैरव । टेपि है पथिक गोरे सांबर सुभग हैं । सुति
 सलोनी संग सोहत सुमग हैं ॥ १ ॥ सोभा सिन्धु सभव ।
 नौके नौके नग हैं । मातु पितु भागवत गए परी फग हैं । रूप की
 ॥ २ ॥ पायन पनघौ न मृदु पंकज से प्रग हैं । सुनिवेष धरे धनु
 मोहनी मेलि मोहे प्रग जग हैं ॥ ३ ॥ सुनिवेष धरे धनु
 सायक सुलग हैं । तुलसी हिये लसत लोने लोने डग हैं
 ॥ ४॥२७ ॥

देखि इ० सु० ॥१॥ शोभा समुद्र से उत्पन्न आछे आछे मणि हैं ।
 माता पिता के भागवत फाँदा में परि गए हैं ॥ २ ॥ पायन चरन
 में मेलि डारि, अग जग स्थावर जंगम ॥ ३ ॥ सुलग हैं सुंदर लागत
 हैं । डग फाल जाको कोक देश में डेग कहत हैं ॥ ४॥२७ ॥

पथिक पयादे जात पंकज से पाय हैं । मारग कठि
 कुस काँटक निकाय हैं ॥ १ ॥ सपि भूषे प्यासी पै चलत धित
 चाय हैं । इन्ह के सुकृत सुर संकर सहाय हैं ॥ २ ॥ रूप
 सोभा प्रेम कौसी कमनौय काय हैं । सुनिवेष किये किर्षी
 ब्रह्म जीव नाय हैं ॥ ३ ॥ वीर वरिचार धीर धनुधर राय हैं ।
 दसचारि पुरपाल आलि उरगाय हैं ॥ ४ ॥ भग लोग
 देपत करत हाय हाय हैं । वन इन को तो वाम विधि के
 वधन हैं ॥ ५ ॥ धन्य ते जे मीन से अवधि अबु आय हैं ।
 प्रभु सो जिन्हूँ के भले भाय हैं ॥ ६॥२८ ॥

पथिक ३० निकाय ममूह ॥ १ ॥ चाय आनन्द ॥ २ ॥ रूप
 श्रीराम जो सोभा श्रीजानकी जू प्रेम श्रीलछिमन जू माय माय ॥ ३ ॥
 आय राजा है, सखा चाँदहो भुवन के पालक उरगाय हैं परमेश्वर हैं ।
 ॥ ४ ॥ इन को जो बन तो विधाना बनाय के वाम हैं ॥ ५ ॥ आय है
 यह जो अवधि रूपी जल है नेहि में जे मान से है रहे हैं ते धन्य हैं
 श्री जिन्ह के मने भाव इन से हैं तेऊ धन्य ॥ ६ ॥ २८ ॥

राग असावरी । मजनी हैं कोउ राजकुमार । पंथ चलत
 मृदु पद कमलन दोउ सील रूप आगार ॥ १ ॥ आगे राजिव
 नैन स्याम तन सोभा अमित अपार । डारौं धारि अंग
 अंगनि पर कोटि कोटि सत मार ॥ २ ॥ पाछे गोर किसोर
 मनोहर लोचन बदन उदार । कटि तूनीर कसे कर सर धनु
 धले हरन छितिभार ॥ ३ ॥ जुगल बीच सुकुमारि नारि
 एक राजति विनहिं सिंगार । इंद्रनील हाटक मुकुतामनि
 जनु पहिरे महि हार ॥ ४ ॥ अवलोकहु भरि नयन बिकल
 जिनि होहु करहु सुविचार । पुनि कह यह सोभा कहैं
 लोचन देख गेह संसार ॥ ५ ॥ सुनि प्रिय बचन चितै हित
 कै रघुनाथ कृपा सुप सार । तुलसिदास प्रभु हरे सबन्हि के
 मन तन रहि न संभार ॥ ६ ॥ २९ ॥

सजनी ३० सु० ॥ १ ॥ २ ॥ उदार कहैं सुंदर ॥ ३ ॥ इहां परकत
 मानि श्रीराम, सोना श्रीलछिमन जी, मोती श्रीजानकी जी हैं ॥ ४ ॥ ५ ॥
 ॥ ६ ॥ २९ ॥ टि०—इंद्रनील=परकत मनि, हाटक=सोना । मुकुतामनि मोती ।
 राग टोडी । देपु गी सयी पथिक नथ सिप नीके हैं ।
 नीले पीने कमल से कोमल कतेवरनि तापसहूं वेप किये
 काम कोटि फीके हैं ॥ १ ॥ सुकृत सनेह सील सुपमा सुप
 सकेलि विरचे विरंचि किधौं अमिय अमोके हैं । रूप की सी

दामिनी सुभामिनी सोष्टति संग उमहुं रमा ते चाहे
 थंग तोके हैं ॥ २ ॥ वनपट कसी कटि तून तीर धनु
 धीर वीर पालक कृपाल सब ही के हैं । पानघौ
 सरोजनि चलत मग कानन पठाए पितु मातु कैसे
 हैं ॥ ३ ॥ आली अवलोकि लेहु नयननि को फल एह
 के सुलाभ सुप जीवन से जीके हैं । धन्य नर नारि
 निहारि विनु गाहकहूं आपने २ मन मोल विनु बीरे
 ॥ ४ ॥ विबुध वरपि फूल हरषि हिये कहत
 भगन सनेह सियपीके हैं । जोगी जन भगम दरस
 पावैरनि मुदित वचन सुनि सुरप सचौ के हैं ॥ ५ ॥ श्री
 के सुवालक से लालत सुजन मुनि मग चारु चरित हर
 राम सी के हैं । जोग न विराग जाग तप न तौरय त्याग
 अनुराग भाग घुले तुलसी के हैं ॥ ६ ॥ ३० ॥

देखि ३० सु० । रूप की सी दामिन दामिन की ऐसी रूप है ॥
 वनपट बल्कलादि ॥ ३ ॥ बीके हैं विकाए हैं ॥ ४ ॥ सियपीके सनेह
 ग्रामलोग भगन हैं और देवता हिय में हरपि फूल वरपि कहत हैं ॥
 जन को जो दरस अगम सो पावैरन पायो । यह देवतन के नेरन
 मुनि के इन्द्र औ इन्द्रानी मुदित भए ॥ ५ ॥ मग के सुन्दर की
 श्रीराम श्रीजानकी जी के हैं तेई प्रीति के सुन्दर नरन
 हैं । पालक को जैसे पिता माता दुलारत तैसे इहाँ सुंदर जन हैं
 औ इन्हीं चरित्रन के अनुराग ते जोगादि विना सुंदरी
 घुले हैं ॥ ६ ॥ ३० ॥

रोति चक्षिबे को चाहि प्रीति पहिचानि के । आन
 आपनी कहें प्रेम परवस यहें मंजु मृदु वचन सनेह सु
 ॥ १ ॥ भावरे कुंवर के चरन के बराह चिह्न हैं

रग धरति कंहाधौं जिय जानि कै । जुगल कमल पद अंक
जोगवत जात गोरे गात कुंअर सहिमा महा मानि कै ॥ २ ॥
उन की कहनि नीकी रहनि लपन सीको तिन की गहनि
जे पधिक उर आनि कै । लोचन सजल तन पुलक भगन मन
होत भूरि भागी लसु तुलसी बयानि कै ॥ ३ ॥ ३१ ॥

रीति ३० । श्री जानकी राम लपन की चलिबे की रीति चाहि कहै
देखि कै औ मीनि पहिचानि कै जे नर नारि प्रेम ते परवस हैं ते सुंदर
कोमल बचनन को स्नेह रूपी अमृत में सानि कै आपनी आपनी उक्ति
कहत हैं ॥ १ ॥ २ ॥ उन की कहनि नीकी है औ लपन सी की रहनि
नीकी है औ जे पधिक श्रीराम आदि के उर में आनि कै लोचन
सजल तन पुलक भगन मन होत तिन्ह की गहनि नीकी है औ तुलसीब
यस बखानि कै बह भागी है ॥ ३ ॥ ३१ ॥

राग कैदारा—जेहि जेहि भग सिय राम लपनु गए तहैं
तहैं नर नारि विनु छर छरिगे । निरपि निकाई अधिकारि
बिंयकित भई बच वपु नैन सर सोभा सुधा भरिगे ॥ १ ॥
जीते विनु बए विनु निफल निराये विनु मुक्त मुपेत मुप
सालि फूलि फरिगे । मुनिहुं मनोरथ को अगम अलभ्य लाभ
सुगम सो राम लख लोगनि को करिगे ॥ २ ॥ लालचो कौडी
के कूर पारस परे हैं पाले जानत न को हैं कहा कोवी सो
विमरिगे । बुधि न विचार न विगार न सुधार मुधि देह गेह
नेह नाते मन ते निसरिगे ॥ ३ ॥ वरपि सुमन मुर हरपि
हरपि कहें अनायास भवनिधि नीच नोकि तरिगे । सो मनह
समउ मुमिरि तुलमिह के से भलोभांति भजे पैत भलि पाम
परिगे ॥ ४ ॥ ३२ ॥

जेदि ३० । जेदि जेदि राह से श्रीजानकी राम लपन गये वत

तहाँ नर नारि घटोने छरि गये, अधिक सुंदरई देखि कै । वचन सरी
 विशेष थकित भए आँ नैन रूपी तड़ाग में सोभा रूपी मिष्ट जल भरि
 गए वा सुधा अमृत ॥ १ ॥ विना जोते विना बोए निकल कहैं अंजु
 निराए बिना अर्थात् सोहे विना सुकृत रूप सुंदर स्वत में सुख हा
 धान फूलि के फरि गयो इहाँ जोतना आदि कर्म उपासना ज्ञान है
 जो लाभ मुनिद्रु के मनोरथ को अगम आँ अलभ्य है सो लाभ भीताप
 छोटे लोगन को भी सुगम करि गए ॥ २ ॥ जे कूर काँड़ी के लालची
 रहे तिन के पारस सम श्रीरामादि पथिक पाले परे हैं ताते अध्यास-
 रहित भए नहीं जानत हैं कि हम कौन हैं औ कहा करनो है सो
 बिसरि गए न बुद्धि है न विचार है न विगार सुधार की सुधि है देह
 गेह नेह नाता सब मन ते निकल गये ॥ ३ ॥ समय समय पैत दात
 ॥ ४ ॥ ३२ ॥

बोले राज देन को रजायसु भो कानन कीं आनन प्रसन्न
 मन मोद बडो काजु भो । मातु पितु बंधु हित आपनो पर
 हित मोकीं वीसह के ईस अनकूल आजु भो ॥ १ ॥ असनु
 अजीरन को समुझि तिलक तज्यौ विपिन गवनु भले भूषे कौ
 सु नाजु भो । धरमधुरीन धीर वीर रघुवीर जू को कोटि
 राज सरिस भरत जू को राजु भो ॥ २ ॥ ऐसी बातें कहत
 मुनत मग लोगन की चली जात भात दोउ मुनि को सो साजु
 भो । ध्याइवे कीं गाइवे कीं सिद्धवे सुमिरिवे कीं तुलसी को
 सुपद समाजु भो ॥ ३ ॥ ३३ ॥
 ३० । राज देखे के लिए तो बोलाए औ आज्ञा दिए कानन
 को मुख प्रसन्न औ मन में आनन्द बडो काज बन जावो
 होत भयो औ अस गुनत भए कि माता कैकेई को औ पिता को
 को हमारे बन जावे में हित है औ अपना तो परमाहित है ।
 बीसो विधे आजु ईश्वर अनुकूल भो ।
 कि पितु वचन पालिबे ते वे
 दिवे को यह
 भयो वा

पाना आदि को दिन भौ वन में मुनि आदि के दर्शन ने आपन
नाने वा नोटि हेतु अवतार लिप् मो कार्य वन जावे ते होयगो
न पम्पटिन ॥ १ ॥ अर्जरन पर को भोजन सम राजनिलक को
मुनि के त्याग दियो औ निपट भूखे को अनान प्राप्ति होना सम वन-
न भयो भाव जेमे अन्न मिलिबे ते भूखा प्रसन्न होन तस प्रसन्न भए ।
म्ये कर्पा घोड़ा को धरानिहार धीर धीर जो रघुवीर जू तिन को
पने एक राजको को फट फोटि राज सम भरत जू को राज पाइवो
यो ॥ २ ॥ मुनि के समान साजु भयो ई जेहि दोऊ भाइन को ते
गलेगन की ऐमी बानें जेने कदत मुनन चले जात ई ध्याइवे आदि
तुलसी को सब भांति ते सुखदाता यह पथ को समाज
यो ॥ ३ ॥ ३३ ॥

सिरिस सुमन सुकुमारि सुपमा की सीव सीय राम बडे
सकोच संग लई है । भाई के प्रान समान प्रिया के प्रान के
गान जानि दानि प्रीति रीति कृपा सीलमई है ॥ १ ॥ आलवाल
पवध सुकाम तरु काम बेलि दूर करि कै कई विपति बलि
वई है । आपु पति पुत गुरजन प्रिय परिजन प्रजाह्न को
कुटिल दुसह दसा दई है ॥ २ ॥ पंकज से पगनि पानछौ
न परुष पंथ कैसे निवहे हैं निवहैगे गति नई है । एही
सोच संकट मगन मग नर नारि सब को सुमति राम राग
रंग रई है ॥ ३ ॥ एक कहै वाम विधि दाहिनी हम को
भयो उत कीन्ही पीठि इत को सुडौठि भई है । तुलसी
सहित वन बासो मुनि हमरिथौ अनायास अधिक अघाह
वनि गई है ॥ ४ ॥ ३४ ॥

सिरस ३० । भाई जो श्रीलपनलाल तिन के प्रान समान औ
मिया जो श्रीजानकी जू तिन के प्रान के प्रान औ कृपा सील मई जो
श्रीराम सो सिरिस के फूल सम सुकुमारि औ परम सोभा की मर्यादा

जो श्री जानकी जूतिन की वानि कहें सुभाव औ प्रीति रीति जानि
कैं वदे ही संकोच से संग में लई है ॥ १ ॥ थाल्हा रूप श्री अवतार
तेहि में सुंदर कल्पवृक्ष औ कल्पलता के समान श्रीराम जानकी हैं तिन
कों कैफेई ने दूरि करि कै विपति की बंधरि धोई है । तेहि विपति वारि करि
कुटिल कैफेई ने अपने को औ महाराज आदि को दुसह दसा देति धोई ॥ २ ॥
एक तो कमल से कोमल चरन हैं ताहु पर जूतों नाहीं औ राह कसो
है तेहि में कैसे निबहे हैं औ कैसे निबहेंगे यह नई गति है । भाव आन
लों अस नहीं देखा एही सोच औ संकट में मंग के नर नारि होई
औ सब की सुंदर मति श्री राम की प्रीति रूपी रंग में रंगी है ॥ ३ ॥
पुर नर नारि कहत हैं कि बनवासी मुनि सहित हम सब के अंत
यास अधिक अघाय के बनि गई है ॥ ४ ॥ ३४ ॥

राग गौरी । नीके कै मै न बिलोकन पाए । सपि एहि
मग जुग पथिक मनोहर वधु विधुवदनि समेत सिधाए ॥ १ ॥
नयन सरोज किमोर बयस वर सौस जटा रचि मुकुट बनाए
कटि मुनिवसन तून धनुसर कर स्यामल गौर सुभाय सुभाए
॥ २ ॥ सुंदर वदन विसाल बाहु छर तनु छवि कोटि मनो
लजाए । चितवत मोहि लगी चौंधी सी जानी न कौन क
ते धौं आए ॥ ३ ॥ मनु गयो संग सोचवंस लोचन सोच
वारि कितो समुभाए । तुलसिदास लालसा हरम की सो
वै जिहि आनि देयाए ॥ ४ ॥ ३५ ॥

नीके ३० ॥ ३५ ॥ टि०—विधुवदनी चन्द्रमुखी । सिधाए गये ॥
जग कमल । जटा ॥ रचि के मुकुट बनाए हैं । मुनिवसन बलकलारि
मनोज कामदेव ॥ २ ॥ ३ ॥

पुनि न फिरि दोउ वीर बटाऊ । स्यामल गौर स
सुंदर सपि वारक बहुरि बिलोकिये काऊ ॥ कर कमल
सर सुभग सरासन कटि मुनि वसन निषंग सुभाए । सु

लंब सब अंग मनोहर धन्य सो जनक जननि जेहि जाए
१ ॥ सरद विमल विधु वदन जटा सिर मंजुल अरुन सरो-
ह लोचन । तुलसिदास मारग हैं राजत कोटि मदन मद-
लोचन ॥ २॥३६ ॥

पुनि ३० सु० ॥ ३६ ॥

राग केदारा । आलो याह तो बूझे न पधिया कहां धी
सधैहैं । कहां ते जाए हैं कोहैं कहां नाम ख्याम गोरे काज
कुसल फिरि एहि मग ऐहैं ॥ १ ॥ उठत वयस मसि-
भोजत सलोने मुठि सोभा दिपवैया विनु वितहि विकैहैं ।
हयै हरि हरि सेत लोनी ललना समेत लोयननि लाहू देत
हां जहं जैहैं ॥ २ ॥ राम लपन सिय पधिया को कथा पृथुल
म विद्यको कहति सुमुपि सधै हैं । तुलसी तिन सारिस
उ भूरि भाग जीउ सुनि को सुचित तेहि समै समै हैं
॥ ३ ॥

आली ३० सु० ॥ १ ॥ उठत वयस चढ़ती अवस्था, मसिभोजत रस-
दान ॥ २ ॥ पृथुल विस्तृत, तेहि समै समै हैं वनपात के समै की
था में समाहिने ॥ ३ ॥ ३७ ॥

बहुत दिन यौत सुधि कछु न लखी । गए जे पधिया
गोरे सांवरे सलोने सिय संग नारि सुकुमारि रही ॥ १ ॥
आनि पहिचानि विनु आपु ते पापनेहु ते प्रानहु ते
यारे प्रियतम उपही । सुधा के सनेहू के सार ले संवारे
पधि जैसे भावत हैं भांति जात न पाही ॥ २ ॥ दूरि
वेलोकिवे कदहुं कहत तन पुदल नयन ललधार बही ।
तुलसी प्रभु मुमिरि चामजुवती सिधिल विनु प्रदान परी
सही ॥ ३ ॥ ३८ ॥

षट्पद १० सु० ॥ १ ॥ विना ज्ञान पहिचान के उपही कई पाये
हैं पर अपने शरीर ते औ पुत्रादिहु ते औ मान हुं ते मियतम पा
हैं ॥ २ ॥ ३ ॥ ३८ ॥

राग गौरी । आली री पथिक जे एहि पद्य परीं सिधाए
ते तो राम लपन अवध ते आए ॥ १ ॥ संग सिय सब रंग
सहज सुहाए । रति काम रिपुपात कोटिक लजाए ॥ २ ॥
राजा दसरथ रानी कोसिला जाए । कैकेई कुचालि करि
कानन पठाए ॥ ३ ॥ वचन कुभामिनि के भूपहि क्यों भाए ।
हाय हाय राय वास विधि भरमाए ॥ ४ ॥ कुलगुरु सचि
काहु न समुभाए । काचमनि लै अमोल मानिक गंभाए
॥ ५ ॥ भाग मगलोगनि के देपन जिन पाए । तुलसी
सहित जिन्ह गुनगन गाए ॥ ६ ॥ ३९ ॥

आली १० । इहां काच मणि सत्य है ॥ ६ ॥ ३९ ॥

सपि जब ते सीतासमेत देखे दोउ भाई । तब ते परैन
कल काहु न सुहाई १ नय सिय नीके नीके निरपि निकाई ।
तनसुधि गई मन अनत न जाई ॥ २ ॥ हेरनि विहसदि
हिये लिये हैं चुराई । पावन प्रेमविषस भई हैं पराई ॥ ३ ॥
कैसे पितु मातु प्रिय परिजन भाई । जीवत जीव की जीवन
वनहि पठाई ॥ ४ ॥ समउ सुचित करि हित अधिकारी ।
प्रीति ग्रामवधुन्ह की तुलसीछूं गाई ॥ ५ ॥ ४० ॥

सखी १० । समी सुचित करि हित अधिकारी । अधिक हित ते सो
समे सुंदर चित्त में करि के ग्रामवधुन की प्रीति तुलसीउ ने
गाई ॥ ५ ॥ ४० ॥

राग केदारा । जब ते सिधाए एहि भारग लपन राम
ज्ञानकोसहित तब ते न सुधि लही है । अवध गए थीं

फिरि कैधी चढ़े विंध्य गिरि कैधी कहूं रहै सो कहु न साहु
 कही है ॥ १ ॥ एक कहैं चित्रकूट निकट नदी के तीर परन-
 कुटोर करि बसे वात सही है । सुनियत भरत मनाइवे को
 भावत हैं होइगी पैं सोइ जो विधाता चित्त चही है ॥ २ ॥
 सत्यसंध धरमधुरीन रघुनाथ जू को आपनी निवाहिबे नृप-
 की निरवही है । दसचारि वरप विहार बन पदचार
 करिवे पुनीत सैल सर सरि मही है ॥ ३ ॥ मुनि सुर मुजन
 समाज के सुधारि काज बिगारि बिगारि जहां जहां जाकी
 रही है । पुर प्रांउ धारिहैं उधारिहैं तुलसीहू से जन जिन्ह
 जानि कै गरीबी गाढे गही है ॥ ४॥४१ ॥

जबते ६० सु० ॥ १ ॥२॥ महाराज की तो निवाहि गई है पर श्री-
 रघुनाथ जू कां आपनी निवाहिबे को है, सर तलाव, सरि नदी ॥३॥४१॥
 राग सारंग । ए उपही कोउ कुंवर अहेरी । स्याम गौर
 धनु बान तून धर चित्रकूट अब आइ रहैरी ॥ १ ॥ इन्हहि
 बहुत आदरत महामुनि समाचार मेरे नाइ कहैरी । वनिता
 बंधु समेत बसत बन पितुहित कठिन कलैस सहैरी ॥ २ ॥
 वचन परसपर कहति किरातिनि पुलक गात जज नयन
 बहेरी । तुलसी प्रभुहि विलोकति एकटक छोचन जनु
 विनु पलक लहेरी ॥ ३॥४२ ॥

ए उपही ६० । महामुनि अत्रि बाल्मीक आदि ॥३॥४२॥ टि. उपही परदेसी ।
 चित्रकूट अति विचित्र सुंदर बन महि पवित्र पावनप्रय
 सरित सकल मल निकंदिनी । सानुज जहं वसंत राम लोक
 लोचनाभिराम वाम चंग वामा वर बिखवंदिनी ॥ १ ॥ रिपि-
 वर तहं छंद वास गावत कल कोकिलहास कोर्तन उनमाय

काय क्रोध कंदिनी । वर विधान करत गान वारत धन मान
 प्राण भरना भरत भिंग भिंग भिंग जल तरंगिनी ॥ ६ ॥
 वर विहार चरन चारु पांडर चंपक चनार करनहार वा
 पार-पुर पुरंदिनी । जो वन नवठारत ठार दुत्त मत्त ह
 मराल मंजु मंजु गुंजत हैं चलि चलिंगिनी ॥ ७ ॥ चित्त
 मुनिगन चकोर बैठे निज ठौर ठौर अक्षय अकलंक सर
 चंद चंदिनी । उदित सदा वन चकास मुदित बदत तुलसि
 दास जय जय रघुनंदन जय जनकनंदिनी ॥ ८ ॥ ४३ ॥
 कलंक रहित चंद श्रीरघुनाथ हैं औ चंदनी श्री जानकी हैं
 औ इहां आकाश वन है ॥ ९ ॥ ४३ ॥

फटिकासिला नटु बिसाल संकुल सुरतरु तमाल ललि
 लताजाल हरति छवि वितान की । मंदाकिनि तटनि तौर
 मंजुल नृग विहंग भीर धीर मुनिगिरा गंभीर सामगान
 की ॥ १ ॥ मधुकर पिक वरहि मुपर सुंदर गिरि निरम
 भर जलकन घन छांछ छन प्रभा भान की । सब रि
 रितुपति प्रभाउ संतत बहै विविध बाज जुनि विशा
 वाटिका नृप पंचवान की ॥ २ ॥ बिरचित तह परनसा
 अतिविचित्र लपनलाल निषसत जहं नित कृपाख रा
 जानकी । निज कर राजीवनयन पल्लव दल रचित स
 घास परसपर पियूष प्रेम पान की ॥ ३ ॥ सिय थंग वि
 धातुराग सुमननि भूपन विभाग तिलक करनि क्यों की
 कला निधान की । माधुरी विलास हास गावत जस त
 सिदास यसत प्रदय जोरी प्रिय परन प्राण की ॥ ४ ॥ ४४ ॥

कोमल औ विसाल फटिक सिन्हा है । इहां सीता राम के बैठवे ते सिला कोमल हूँ गई है । ताते मृदु कहें अयहीं ताई चिन्ह बना है औ तहां सधन कल्पवृक्ष औ तमाल हूँ औ सुंदर तिन्ह वृक्षन पर लतन के समूह हैं ते चंदवा आदि की छवि को हरति हैं । सो सिला मंदाकिनी नामा नदी के तीर में है । तहां सुंदर मृग औ पक्षिन की भीर है औ धीर जो मुनि हैं तिन की गम्भीर घानी सामवेद के गान की है । वा मृग विहंग धीर जो हैं सोई धीर मुनि हैं औ तिन की गिरा जो है सोई गम्भीरता साम गान की है ॥ १ ॥ भ्रमर औ कोइल औ मयूर शब्दायमान हैं औ सुंदर पर्वतन ते क्षरना क्षरत हैं सोई जल के बूंद हैं औ वृक्षादि के छांह हैं सो मंग हैं औ तिन्ह क्षरनन पर सूर्य की प्रभा जो पड़े है सो छनप्रभा कहें बिजुली है । इहां प्रभा शब्द को देहली-दीपक न्याय करि दूनो ओर लगावना औ सय ऋतु में वसंत ऋतु को प्रभाव है ताते निरंतर सीतल मंद सुगंध वायु बहत है मानो महाराज कामदेव के बिहार करने की याटिका है ॥ २॥३ ॥ धातुराग जो मन-सिला आदि तिन्ह ते श्रीजानकी जी के अंग में लिखे औ फूलनि करि विशेष भाग भूपनन को किए अर्थात् अनेक भूपन बनाए औ कला कारीगरी ताके निधान जो रघुनाथ तिन की तिलक कराने क्यों कहों भाव कहा नहीं जात है ॥ ४ ॥ ४४ ॥

राग केदारा—लोने लाल लपन सलोने राम लोनी सिय चारु चित्रकूटवैठि सुरतरु तर हैं । गोरे सांवरे सरीर पीत नील नीरज से प्रेम रूप सुपमा के मनसिजसर हैं ॥ १ ॥ लोने नय सिय निरुपम निरपिवे जोग बडे उर कंधर विसाल भुज धर हैं । लोने लोने लोचन जटनि के मुकुट लोने लोने बदननि जीते कोटि सुधाकर हैं ॥ २ ॥ लोने लोने धनुष विसिय कर कमलनि लोने मुनिपट कटि लोने सरधर हैं । प्रिया प्रिय वंदु को देपावत बिटप वेलि मंजु कुंज सिलातल दल फूल फर हैं ॥ ३ ॥ रिपिन्ह के पाग्रम सराहें मृगनाम

कहें लागी मधु सरित भरत निरभर हैं । नाचत वारी
नीकी गावत मधुप पिक बोलत विहंग नभ जन धलचर
हैं ॥ ४ ॥ प्रभुहिं विलोकि मुनिगन पुलकै कहत भूरिभाग
भए सब नीच नारि नर हैं । तुलसी सी सुप लाडु लूटत
किरात कोल जाको सिसिकत सुर विधि हरिहर हैं ॥ ५ ॥ ४५ ॥

प्रेम औ रूप औ सुखमा के शरीर जे गोरे सांवरे ते कामदेव के
तदाग के पीत नील कमल सम हैं ॥ १ ॥ कंधर कांधा सुशकर
चंद्रमा ॥ २ ॥ विशिष कहें वाण, सरघर कहें तरकस पहिले तुक में
तीनों मूर्ति को वरनन किए फिर दोऊ भाइन के अब केवल रघुनाथ
को मिया बंधु को देखावत लिखत हैं । ३ ॥ कृपिन के आश्रमन को
पखानत हैं औ मृगन के नाम कहत हैं अर्थात् यह सांवर है यह चीतर
है औ इहां मधु लगी है यह नदी है ए शरना शरि रहे हैं अच्छी भांति
ते मोर नाचत हैं भ्रमर गान करत हैं कोइल और नभचर जलचर
थलचर विहंग बोलत हैं अस श्रीरघुनाथ प्रिया औ अनुज सन कहत
हैं ॥ ४ ॥ सिसिकत कहें ललचत ॥ ५ ॥ ४५ ॥

राग सारंग । आइ रहे जब ते दोउ भाई । तब ते बिद-
कूट कानन छवि दिन दिन अधिक अधिक अधिक ॥ १ ॥
सीताराम लपन पद अंकित अवनि सोहावनि वरनि न जाई ।
संदाकिनि मज्जत अवलोकत विविध पाप त्रयताप नसाई ॥ २ ॥
छकटेउ हरित भये जल धल रुइ नित नूतन राजीव सोहाई ।
फूलत फूलत पल्लवत पलुइत विटप बेलि अभिमत सुपदाई
॥ ३ ॥ सरित सरनि सरसीरुइ संकुल सदन संवारि रमा
जनु णाई । कृजत विहंग मंजु गुंजत अलि जात पथिक जनु
लत घोलाई ॥ ४ ॥ विविध समीर नीर भर भरननि जहं तहं
रहे रिपि कुटो यनाई । सीतल सुभग सिलनि परतापस करत

जोग जप तप मनु लाई ॥५॥ भए सब साधु किरात किरा-
तिनि रामदरस मिटि गई कलुषाई । पग नृग मुदित एक
संग विहरत सहज विषम बड बैर बिछाई ॥ ६ ॥ काम कैलि
वाटिका विबुध बन लघु उपमा काय कहत लजाई । सकल
भुवन सोभा सकेलि मानो राम बिपिनि विधि आनि बसाई
॥ ७ ॥ बन मिसु सुनितिय सुनिबालक वरनत रघुवर
बिमल बडाई । पुलकि सिधिल तनु सजल बिलोचन प्रमु-
दित मन जीवनफल पाई ॥ ८ ॥ क्यों कहीं चित्रकूट गिरि
संपति सहिमा मोद मनोहरताई । तुलसी गछं बसि लपन
राम सिय आनंद अवधि अवध बिसराई ॥ ९॥४६ ॥

त्रिविध पाप कायिक वाचिक मानसिक त्रयताप दैहिक दैविक
भौतिक नसात हैं । महाभारते वनपर्वणि । ततो गिरिवरश्रेष्ठे चित्रकूट-
विशोपते । मंदाकिनीं समासाद्य सर्वपापप्रनाशिनाम् ॥ तत्राभिषेकं कुर्वा-
णः पितृदेवार्चने रतः । अभ्येधमवाप्नोति गतिश्च परमां व्रजेत् ॥२॥ जल
धल रुद्र, जल के वृक्ष धल के वृक्ष, राजीव कमल अभिमत मुखदाई बांछित
मुख देनिहारे भाव फलपवृक्ष समान ॥ ३ ॥ नदिन औ नन्दावन में
सपन कमल हैं मानो कमल नहीं हैं घर बनाइ के लक्ष्मी छाई हैं । पत्नी
घोलत हैं भँवर गुंजार करत हैं सो घोलत गुंजार नहीं करत हैं मानो
घले जात पथिक को घोलाय लेत हैं ॥४॥५॥ कलुषाई मलीनता ॥ ६ ॥
काम की बिहार वाटिका औ विबुध बन नंदन चैत्ररथादि ए छतु हैं
ताने उपमा कहत में काबि लगात हैं । बनमिगु बन के वरनन के व्याज
से ॥ ८ ॥ ९ ॥ ४६ ॥

राग गौरी । दीपत चित्रकूट धन मन अति होत हुलाम ।
सीताराम जपन प्रियतापस धृष्ट निशाम ॥१॥ मरित मुहावनि
पावनि पाप हरनि पय नाम । मिद साधु मुरनेवित्ते दैति
सकल नन काम ॥ २ ॥ बिटप दैलि नव किसलय कुमुदित

सधन मुजाति । कंद मूल जल थल रुह अगनित अन वन
 भांति ॥ ३ ॥ दंडुल मंजु वकुल कुल सुरतरु ताल तमाल ।
 कदलिकदंब सुचंपका पाटल पनस रसाल ॥ ४ ॥ भूरुह भूरि
 भरे जनु छवि अनुराग सुभाग । वन विलोकि लघु लागहि
 विपुल विबुध वन बाग ॥ ५ ॥ जाइ न बरनि राम वन
 चितवत चित हरि लेत । ललित लता द्रुम संकुल मनहुं
 मनोज निकेत ॥ ६ ॥ सरित सरनि सरसीरुह फूली नाना रंग ।
 गुंजत मंजु मधुप गन कूजत विविध बिहंग ॥ ७ ॥ लपन
 कहेउ रघुनंदन देषिय विपिन समाज । मानहुं चयन मयत-
 पुर आयउ प्रिय रितुराज ॥ ८ ॥ चित्रकूट पर राउर जानि
 अधिक अनुराग । सपासहित जनु रतिपति आयउ धेलन
 फाय ॥ ९ ॥ भिक्षि भांभ भरना डफ पनव मृदंग निसान ।
 भेरि उपंग भृंग रव ताल कीर कल गान ॥ १० ॥ हंस कपोत
 कबूतर बोलत चक्र चकोर । गावत मनहुं नारि नर सुदित
 नगर चहुं ओर ॥ ११ ॥ चित्र विचित्र विविधि मृग डोलत
 डोगर डांग । जनु पुर बौधिन्य विहरत छैल संवारे खांग
 ॥ १२ ॥ नटहि मोर पिक गावहिं सुस्वर राग वंधान ।
 त्रिन् तरुन तदनी जनु पैलहिं समय समान ॥ १३ ॥ भरि
 कर्गनि कहं जहं तहं डारहिं वारि । भरत परस-
 कनि मनहुं सुदित नर नारि ॥ १४ ॥ पीठ चढाइ
 कपि कूदत डारहिं डार । जनु मुष्ट लाइ गेरु मसि
 परनि असवार ॥ १५ ॥ लिए पराग सुमन रस डोलत
 सगीर । मनहुं परगला छिरयात भरत गुलान अवोर
 ॥ १६ ॥ काम कीतुकी एहि विधि प्रभुदित कीतुक कीन ।

अभि राम रतिनाथ हि जगदिन्द्रं बरु दीन्ह ॥ १७ ॥ दुप
 दुदाम मोर अनि मानहु मोरि रजाइ । भलेहि नाथ माथेहि
 रि चायमु चनेउ बजाइ ॥ १८ ॥ सुदित किरात किरा-
 तनि रघुवररूप निहारि । प्रभुगुन गावत नाचत चले
 जोहारि जोहारि ॥ १९ ॥ देखिं असोस प्रसंसहि मुनि सुर
 रूपहिं प्रभु । गवने भयन रापि डर मूरति मंगलमूल ॥ २० ॥
 चषकट पानन छवि को कवि बरनै पार । जहं सिय लपन
 नहित नित रघुवर कारहिं विहार ॥ २१ ॥ तुलसिदास
 वांचरि मिसि कहै रामगुनघाम । गावहिं सुनहिं नारि
 र पावहिं सब अभिराम ॥ २२ ॥ ४७ ॥

पय कहै पयमिनी ॥ २ ॥ नव किसलै नवीन पल्लव, जन बन
 मोनि अनेक भानि ॥ ३ ॥ घंजुल बेंत, बकुलकुल मौलसरिन के
 मूढ़, पाटल कहै पाँदर, पनस फटहर, रसाल आम ॥ ४ ॥ भूरुह वृक्ष
 ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ लपन कहत भए कि रघुनंदन विपिन को समाज
 देखिए मानो आनन्दयुक्त कामदेव के पुर में प्रिय ऋतुराज आयो ।
 अब दूसर उत्प्रेक्षा कहत हैं ॥ ८ ॥ ९ ॥ झिझी झींगुर, पनब ढोल, भेरी
 नगारा उपंग मुरचंग ॥ १० ॥ कपोत यद्यपि कवूतर का नाम है पर
 इस कुमरी जानना काहे ते कि कवूतर पृथक लिखा है चक चकवा ॥ ११
 ढोंगर ढांग पर्यंत के राह ॥ १२ ॥ नटहिं नाचहिं समै समान फागुन
 मास के अनुकूल ॥ १३ ॥ करिनिकर हंथिनी हाथी, घारि जल ॥ १४ ॥
 इस खर के स्थान में बाँदर हैं औ बचा जो पीठ पर चढ़े हैं सो सवार
 के स्थान, में हैं लाल मुँह वाले बचा मानो गेरु लगाए हैं काले
 मुख वाले बचा मानो मसी लगाए हैं ॥ १५ ॥ मलयाचल को जो
 दक्षिण वायु है सो फूलन को पराग औ रस लिएं डोलत है मानो रस
 नहीं है घोरा भया अरगजा है ताको छिरफत है औ पराग नहीं है
 गुलाल अवीर है तामें भरत है ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥

सधन सुजाति । कंद मूल जल धल रुह चगनित अन वन
 भांति ॥ ३ ॥ दंजुल मंजु वकुल कुल सुरतर ताल तमाल ।
 कदलिकदंब सुचंपक पाटल पनस रसाल ॥ ४ ॥ भूरुह भुरि
 भरे जनु छवि अनुराग सुभाग । वन विलोकि लघु लागहिं
 विपुल विबुध वन वाग ॥ ५ ॥ जादू न वरनि शम वन
 चितवत चित हरि लेत । ललित लता द्रुम संकुल मनहुं
 मनोज निकेत ॥ ६ ॥ सरित सरनि सरसीरुह फूले नाना रंग ।
 गुंजत मंजु मधुम गन कूजत विविध विहंग ॥ ७ ॥ लपन
 कहेउ रघुनंदन देपिय विपिन समाज । मानहुं चयन मयन-
 पुर आयउ प्रिय रितुराज ॥ ८ ॥ चित्रकूट पर राउर जानि
 अधिक अनुराग । सपासहित जनु रतिपति आयउ पिलन
 पाग ॥ ९ ॥ भिल्लि भांभ भरना डफ पनव मृदंग निसान ।
 मेरि उपंग भंग रव ताल कीर कल गान ॥ १० ॥ हंस कपोत
 कबूतर बोलत चक्र चकीर । गावत मनहुं नारि नर मुदित
 नगर चहुं ओर ॥ ११ ॥ चित्र विचित्र विविधि मृग डोलत
 डोगर डांग । जनु पुर बौधिन्ह विहरत छैल संवारे खांग
 ॥ १२ ॥ नटहि मोर पिक गावहिं सुस्वर राग बंधान ।
 निलज तरुन तरुनी जनु पेलहिं समय समान ॥ १३ ॥ भरि
 भरि स्रुंड करनि कहं जहं तहं डारहिं वारि । भरत परस-
 पर पिचकनि मनहुं मुदित नर नारि ॥ १४ ॥ पीठ चढाइ
 सिसुन्ह कपि क्रुद्धत डारहिं डार । जनु मुह लादू नेरु मसि
 भए परनि असवार ॥ १५ ॥ लिए पराग सुमन रस डोलत
 मलय समीर । मनहुं परगजा छिरकात भरत गुलान्न अवीर
 ॥ १६ ॥ काम कौतुकी एहि विधि प्रमुदित कौतुक कीन्ह ।

मानो मधु माधव दोउ अनिप धीर। वर विपुल विटप वानैत
 बोर ॥ मधुकर मुक्त कोकिल बंदि बृन्द । वरनहिं विसुन्द
 जम विविधि छंद ॥ ४ ॥ महि परत सुमन रस फल पराग ।
 जनु देत इतार नृप कर विभाग ॥ कलि सचिव सहित नय-
 निपुन मारि । कियो विश्व विवस चारिहूं प्रकार ॥ ५ ॥
 विरहिन पर नित नइ परइ मारि । डांढिषहि सिद्धि
 साधक प्रचारि ॥ तिन्ह को न काम सकै चापि छांह ।
 तुलसी जे बसहिं रघुवीर बांह ॥ ६ ॥ ४८ ॥

पसंत फल के आप से बनसमान भलो बन्यो मानो कामदेव
 पदारान आज भए हैं मानो फाग के बहाना ते प्रथम अनीत करि के
 हारी के बहाने शत्रुपुर को जारि करि जीति करि बाघु के बहाने पत्र
 रूपी मना को उजारि के फिरि सकल धन में नया नगर बसाए ॥ १ ॥ २ ॥
 सुंदर रंगवाली पर्यंत की शिला सिंदासन है औ कानन की जो छवि
 सो काम की परी रति है औ कुरंग हरिन निकटवर्ती जन हैं, श्वेत
 सुमन श्वेत छत्र है, लता मंदप है, चमर बाघु है, झरना नगारा है ॥ ३ ॥
 मानो चेत औ बसाख दोऊ धीर सेनापति हैं श्रेष्ठ जे अनेक बिटपैं ते
 तेहि सेना बानेबंद धीर हैं । भ्रमर सुआ कोइल ए भाट मन हैं । अनेक
 छन्द में बिष्टद यस को बरनत हैं ॥ ४ ॥ महि में फूल रस फल धूरि
 परत हैं सो मानो आन राजा विभाग पूर्वक कर देत हैं । कलिकाळ रूप
 सचिवसहित नीत में निपुन जो काम है सो विश्व को चारिउ प्रकार
 से अर्थात् शाम दाम भेद दंड करि विशेष बश किए ॥ ५ ॥ विरहिन के
 ऊपर नीति नई मारि परति है औ सिद्ध औ साधक प्रचारि करि विशेष
 डांढे जात हैं । काम तिन्ह की छांह को नहीं दवाय सकत है जे रघुवीर
 के बांह ते बसत हैं ॥ ६ ॥ ४९ ॥

राग मलार । सब दिन चित्रकूट नीकी लागत । वरपा-
 रितु प्रवेश विशेष गिरि देयत मन अनुरागत ॥ १ ॥ चहु दिसि
 वन संपन्न विहंग मृग बोलत सोभा पावत । जनु सुनरेस देस

॥ २१ ॥ चांचरि मिष्टु कहे होरी में चार गायो जात है तोहि के बारा
से ॥ २२ ॥ ४७ ॥

राग वसंत । आजु बन्यो है विपिनि देषी राम धीर ।
मानो खेलत फाग मुद मदन बौर ॥ १ ॥ बट वकुल कदंब पन
रसाल । कुसुमित तरुनिकर कुरवक तमाल ॥ मनो विविध
वेप धरे छेल जूथ । विच बीच लंता ललना बरूथ ॥ २ ॥
पनवानक निरभर अलि उपंग । बोलत पारावत मानो
डफ मृदंग ॥ गायक सुक कोकिल भिक्षि ताल । नाचत
वहु भांति बरहि सराल ॥ ३ ॥ मलयानिल सीतल सुरभि मंद ।
यह सहित सुमन रस रेनु बृंद ॥ मानो छिरकत फिरत
सबनि सुरंग । आजत उदार लीला अनंग ॥ ४ ॥ क्रीडत जीति
सुर नर असुर नाग । इठि सिद्ध मुनिन्ह के पंथ लाग ।
कह तुलसिदास तेहि छाडु मैन । जीहि राघ राम राजीव
नैन ॥ ५ ॥ ४८ ॥

निकर समूह, कुरवक कोरैया ॥ २ ॥ आनक कहैं नगारा । “आनक
पटहोभेर्या मृदंगे ध्वनदम्बुदे” इत्यभिधानात् । ढोल क्षरना ढोल औ नगारा
है भ्रमर उपंग है ॥ ३ ॥ रेनु परांग ॥ ४ ॥ क्रीडत जिते खेलवा
जीत लिए ॥ ५ ॥ ४८ ॥

रितुपति आयो भलीबन्यो बनसमाजु । मानो भए हैं मदन
महाराज आजु ॥ १ ॥ मानो प्रथम फाग मिस करि अनीति ।
होरी मिस अरिपुर जारि जीति ॥ मारुत मिस यव प्र
उजारि । नए नगर बसाए विपिनि भारि ॥ २ ॥ सि
सैलसिन्हा सुरंग । कानन छवि रति परिजन कुरंग ॥ ३ ॥
छत्र सुमन बघो वितान । चामर समीर निरभर निसान ॥ ४ ॥

मानो मधु माधव दीउ अनिय धीर। वर विपुल विटप वानैत
 बोर ॥ मधुकर मुक कोकिल बंदि बृंद । वरनहिं विसुंद
 जम दिविधि छंद ॥ ४ ॥ महि परत सुमन रस फल पराग ।
 जनु देत इतर नृप कर विभाग ॥ कलि सचिव सहित नय-
 निपुन मारि । कियो विप्र वीरस चारिहुं प्रकार ॥ ५ ॥
 बिरहिन पर नित नइ परइ मारि । डांठिभहि सिद्धि
 साधक प्रचारि ॥ तिन्ह को न काम सकै चापि छांइ ।
 तुलसी जे बसहिं रघुवीर बांइ ॥ ६ ॥ ४८ ॥

धरंत प्रभु के आए से बनसमाज भलो वन्यो मानो कामदेव
 महाराज आज भए ई मानो फाग के बहाना से प्रथम अनीत करि के
 हारी के बहाने शत्रुपुर को जारि करि जीति करि वायु के बहाने पत्र
 रूपी मजा को उजारिके फिरि सकल वन में नया नगर बसाए ॥ १ ॥ २ ॥
 सुंदर रंगवाली पर्वत की शिला सिंहासन है औ कानन की जो छवि
 सो काम की पत्नी रति है औ कुरंग हरिन निकटवर्ती जन हैं, श्वेत
 सुमन श्वेत छत्र है, लता मंडप हैं, चमर वायु है, झरना नगरा है ॥ ३ ॥
 मानो चक्र औ बैसाख दोऊ धीर सेनापति हैं श्रेष्ठ जे अनेक बिठपैं ते
 तेहि सेना वानेबंद धीर हैं । भ्रमर सुआ कोइल ए भाट गन हैं । अनेक
 छन्द में विगुह्य यस को बरनत हैं ॥ ४ ॥ महि में फूल रस फल धूरि
 परत हैं सो मानो आन राजा विभाग पूर्वक कर देत हैं । कालिकाळ रूप
 सचिवसहित नीत में निपुन जो काम है सो विश्व को चारिउ प्रकार
 से अर्थात् शाम दाम भेद दंड करि विशेष वश किए ॥ ५ ॥ बिरहिन के
 ऊपर नीति नई मारि परति है औ सिद्ध औ साधक प्रचारि करि विशेष
 डांटे जात हैं । काम तिन्ह की छांइ को नहीं दयाय सकत है जे रघुवीर
 के बांइ ते बसत हैं ॥ ६ ॥ ४९ ॥

राग मलार । सब दिन चित्रकूट नीको लागत । वरपा-
 रितु प्रवेश विशेष गिरि देपत मन अनुरागत ॥ १ ॥ चहु दिसि
 वन संपन्न विहंग मृग बोलत सीमा पावत । जनु सुनरेस देस

॥ २१ ॥ चांचरि मिसु कहे होरी में चार गायो जात है तेहि के बरान
से ॥ २२ ॥ ४७ ॥

राग वसंत । आजु बन्यो है विपिनि देखी राम धीर ।
मानो पेलत फाग मुद मदन बौर ॥ १ ॥ बट वकुल कंदव प्रनह
रसाल । कुसुमित तरुनिकर कुरवक तमाल ॥ मनो विपि
वेष धरे छैल लूथ । बिच बीच लता ललना बरुथ ॥ २ ॥
पनवानक निरभर अलि उपंग । बोलत पारावत मानो
छफ मृदंग ॥ गायक सुक कोकिल भिक्षि तील । नाचत
बहु भांति वरहि मराल ॥ ३ ॥ मलयानिल सीतल सुरभि मंद
यह सहित मुमन रस रेनु वृंद ॥ मानो छिरकत फिर
सबनि सुरंग । आजत उदार लीला अनंग ॥ ४ ॥ क्रीडत धीरे
सुर नर असुर नाग । इठि सिद्ध मुनिन्ह की पंथ लाग ।
कह तुलसिदास तेहि छाडु नैन । जीहि राख राम राजीव
नैन ॥ ५ ॥ ४८ ॥

निकर समूह, कुरवक कोरैया ॥ २ ॥ आजक कहें नगारा । "आनक
पंदहोभेयां मृदगे ध्वनदम्युदे" इत्यभिधानात् । ढोल झरना ढोल औ नगा
है अमर उपंग है ॥ ३ ॥ रेनु पराग ॥ ४ ॥ क्रीडत जिते खेलना
जीत लिए ॥ ५ ॥ ४८ ॥

रितुपतिपायो भलीबन्यो वनसमाजु । मानो भए हैं मदन
महाराज आजु ॥ १ ॥ मानो प्रथम फाग मिस करि अनोति ।
होरी मिस परिपुर लारि जीति ॥ मारुत मिस पत्र पत्र
छजारि । नए नगर बसाए विपिनि झारि ॥ २ ॥ सिंहासन
सैलसिद्धा सुरंग । कानन छवि रति परिजन कुरंग ॥ सिं
हच मुमन बघी बितान । चामर समीर निरभर निसान ॥ ३ ॥

[illegible]

धर्म प्रभु के आगे मे समगमान करो। अन्यो मानो कामदेव
 महाजन आज भए है मानो पाग के बराना मे मयम अनीत करि के
 शोभा के बराने झटपुट को जारि करि नीति करि वायु के बराने पत्र
 गयी मना को जनाधिके किरि मकल बन मे नया नगर बसाए ॥१॥२॥
 सुंदर रंगवाली परबत थी शिखा शिखामन है आ कानन की जो छवि
 सो काम की पत्नी बनि है आ कुरंग हरिन निकटवर्ती जन हैं, श्वेत
 सुमन श्वेत लप है, लता मंढप है, चमर वायु है, सरना नगरा है ॥३॥
 मानो पैल आ पैगाम्य दोऊ धीर सेनापति हैं भेष्ट जे अनेक बिर्षे ते
 मेदि सेना मानेबंद धीर है। भ्रमर सुआ कोइल ए भाट मन है। अनेक
 छन्द में बिभूद यस को परनत है ॥ ४ ॥ मदि में फूल रस फल धूरि
 परत है सो मानो आन राजा विभाग पूर्वक कर देत हैं। कालिकाळ रूप
 तबियमहित नीत में निपुन जो काम है सो विश्व को चारिउ मफार
 ते अर्थात् शाम दाम भेद दंड करि विशेष बस किए ॥ ५ ॥ विरहिन के
 ऊपर नीति नई मारि परति है आ सिद्ध आ साधक मचारि करि विशेष
 टांटे जात है। काम निन्द की छांह को नहीं दबाय सकत है जे रघुवीर
 के बांह में बसत है ॥ ६ ॥ ४९ ॥

राग मलार । सब दिन चित्रकूट नौको लागत । वरपा-
रितु प्रवेश विशेष गिरि देपत मन अनुरागत ॥१॥ बहु दिसि
वन संपन्न विहंग मृग बोलत सोभा पावत । अनु सुनरेस देस

पुर प्रमुदित प्रजा सकल सुख छावत ॥२॥ सोइत स्याम जलद
 मृदु घोरत धातु रंगमगे सुंगनि । मनहुं आदि शंभोज
 विराजत सेवित सुर मुनि भुंगनि ॥ ३ ॥ सिपर परसि घन
 घटहि मिलत वगपांति सो छवि कवि वरनी । आदिवरा
 विहरि वारिधि मानो उठ्यो है दसन धरि धरनी ॥ ४ ॥
 जलजुत विमल सिलनि झलकत नभ वन प्रतिविंब तरंग ।
 मानहुं जगरचना विचित्र विलसति विराट अंग अंग ॥ ५ ॥
 मंदाकिनिहि मिलत भरना भरि भरि भरि भरि भरि
 आछि । तुलसी सकल मुक्त सुख लागि सानो राम भगति है
 पाछि ॥ ६ ॥ ५० ॥

चहुं ओर वन पुष्पफलादि करि सम्पन्न है औ पसी मृग वीर
 में सोभा पावत हैं, मानो सुंदर नरेश ते देश औ पुर के प्रजा प्रमुदित
 है सकल सुख छावत हैं ॥ २ ॥ पर्वत के ऊपर श्याम मेघ शोभत हैं
 औ मृदु घोरत कहें मधुर धुनि ते गरजत हैं औ सिखरानि से घातु गेह
 मनसिलादि रंगमगे कहें बहि चले हैं, मानो परवत नहीं है आदि कपन
 है अर्थात् जाते ब्रह्मा उत्पन्न भए । इहां अत्यंत दीर्घ करि आदि कपन
 की उपमा दिए सो सुर मुनि रूप भुंगनि करि सेवित हैं । इहां भुंगन
 श्याम जलद जानना ॥ ३ ॥ भुंगनि को छुड़ के बकुलनि की पांति
 सघन जो घटा तिन को मिलत है । सो छवि कवि वरनी है, मानो आदि
 वराह समुद्र में विहार करि के दांत पर धरनी धरि के उठ्यो है । रा
 आदिवराह पर्वत है वर्षा को जल को नीचे लगा है सो समुद्र है, वग
 पांति दसन है, घटा धरनी है वा जो मेघ पर्वत ते मिलि रयो है सो
 आदिवाराह है ताके ऊपर से वगपांति जो ऊपर निकली है सो
 दसन है । दूसरी घटा जो ऊपर है सो भूमि है ॥ ४ ॥ निर्मल सिलनि
 में जलयुक्त आकाश वन औ तरंग को प्रतिविंब झलकत है मानो
 विराट के अंग अंगाने में जग की रचना विचित्र विशेष लसति है
 ॥ ५ ॥ ६ ॥ ५० ॥

राग मोरठ । चात्रु को भोर और सो मारि । सुन्यो न
 दार वेद घंटी धुनि गुनिगन गिरा मोहार्डे ॥ १ ॥ निज निज
 पति सुंदर मदननि ते रूप मोल छवि छार्डे । लेन असीस सीय
 पागे करि मो पै सुतवधू न आई ॥ २ ॥ वूझी हीं न विहंसि
 मेरे रघुवर कछा मुमिवा माता । तुलसी मनहुं महासुप
 मेरे देपि न मक्यो विधाता ॥ ३ ॥ ५१ ॥

अवध में श्री कौशल्या जी की उक्ति कहत हैं । निज निज पति
 अपने अपने पति के सुंदर छवि ते रूप मोल छवि ते छार्डे जे सुत-
 वधू हैं ते सीता के आगे करि असीस लेखे हेतु हमारे पास न आई
 ॥ २ ॥ ५१ ॥

जननी निरपति बाल धनुहिंया । बार बार उर नय-
 ननि लावति प्रभु जु कि ललित पनहिंया ॥ १ ॥ कबहुं प्रथम
 ज्यों जाइ जगावति कहि प्रिय वचन सकारे । उठहु तात
 बलि मातु बदन पर अनुज सपा सब द्वारे ॥ २ ॥ कबहुं
 कहति बड बार भई ज्यों जाहु भूप पै भैया । बंधु बोलि जेइये
 जो भावें गई नेछावरि मैया ॥ ३ ॥ कबहुं समुक्ति बनगमन
 राम को रहि चकि चित लियी सी । तुलसिदास यह समय
 कहि ते लागति प्रीति सिपी सी ॥ ४ ॥ ५१ ॥

प्रीति सिखी सी कहिये को यह भाव कि जो स्नेह सत्य हो तो
 कहत ही में शरीर छूटि जाता ॥ ४ ॥ ५२ ॥

मारि रो मोहि न कोउ समुझावै । राम गमन सांची
 किधौ सपनी मन परतीत न आवै ॥ १ ॥ लगे रहत मेरे नय-
 ननि आगे राम लयन अरु सीता । तदपि न मिटत दाह
 या उर की विधि जो भयो बिपरीता ॥ २ ॥ दुप न रहै रघु-
 पतिहिं विलोक्त तनु न रहै विनु देखे । ॥ ३ ॥

प्राण पयान मुनहु सपि अकम्पि परी एहि लेये ॥ ३ ॥
 कौसल्या के विरह बचन मुनि रोइ उठी सब रानी । तुन-
 सिदास रघुचोरविरह की घोर न जाति बघानी ॥ ४॥५३ ॥
 सु० ॥ ४ ॥ ५३ ॥

जय जय भवन विलोकति सूनो । तत्र तव विकल होति
 कौसल्या दिन दिन प्रति दुप दूनो ॥ १ ॥ सुमिरत बाल विनोद
 राम के सुंदर मुनिमनहारी । होति हृदय अतिसुल सनुभि
 पदपंकज अजिरविहारी ॥ २ ॥ को अब प्रात कलैज मागत
 कठि चलैगी माई । स्याम तामरस नयन श्रवत जल काहि
 लैउं डर लाई ॥ ३ ॥ जिधौ तौ विपति सहौं निसिवासर सौं
 तौ मन पछितायों । चलत विपिनि भरि नयन राम की
 बदन न देपन पायों ॥ ४ ॥ तुलसिदास यह विरह दसा
 अति दारुन विपति घनेरो । दूरि करै को भूरिक्खा बिनु
 सोकजनित रुज मेरो ॥ ५ ॥ ५४ ॥

... पदपंकज अजिरविहारी कहिये को यह भाव कि चरण कमल
 सम फोमल हैं औ आंगन से बाहर न निकले सो धन में कैसे निबधि-
 हैं ॥ ५॥५४ ॥ दि० यह शोक से उत्पन्न मेरे रोग को बिना भूरिक्खा-
 (रघुनाथ) के कौन दूर करेगा ?

मेरो यह अभिलाष विधाता । कब पुरवै सपि सानुकूल
 है हरि सेवक सुपदाता ॥ १ ॥ सीतासहित कुसल कोसलपुर
 आवत हैं सुत दोऊ । श्रवन रुधासम बचन सयी कब जाइ
 कहैगी कोऊ ॥ २ ॥ मुनि संदेस प्रेमपरिपूरन संभ्रम उठि
 धावोंगी । बदन बिछोकि रोकि लोचनजल हरयि दिये
 लावोंगी ॥ ३ ॥ जनकमुता कब सामु कहै मोहि राम

लपन कहैं मैया । बांह जोरि कब अजिर चलेंगे स्याम गौर
दोउ मैया ॥ ४ ॥ तुलसिदास एहि भांति मनोरथ करत
प्रीति अति बाढी । थकित भई उर आनि रामछवि मनहुं
चित्र लिपि काढी ॥ ५॥५५ ॥

सुगम ॥ ५ ॥ ५५ ॥

सुन्यौ जब फिरि सुमंत पुर आयो । कहिहै कहा प्रान-
पतिकी गति नृपति विकल उठि धायो ॥ १ ॥ पायें परत मंत्री
अति व्याकुल नृप उठाय उर लायो । दसरथ दसा देखि न
कह्यो कछु जो संदेस पठायो ॥ २ ॥ बूझि न सकत कुसल
प्रीतम को हृदय यहै पछितायौ । साचिहु सुतवियोग सुनिवे
कहुं धिग विधि मोहिं जिआयौ ॥ ३ ॥ तुलसिदास प्रभु
जानि निठुर हौं न्याय नाथ बिसरायो । हा रघुपति कहि
पखौ भवनि जनु जल ते मीन विलगायो ॥ ४॥५६ ॥

सुगम ॥ ४॥५६ ॥

सुएहु न मिटैगो मेरो मानसिक पछिताउ । नारि बस न
विचार कीन्हो काल सोचत राउ ॥ १ ॥ तिलक की बोले दियो
वन चौगुनो चित चाउ । हृदौ दारिम ज्यों न विहग्यो समुझि
सौल सुभाउ ॥ २ ॥ सोय रघुवर लपन बिनु भय भभरि भग्यो
न पाउ । मोहि बूझि परत न याते कवन कठिन कुपाउ
॥ ३ ॥ सुनि सुमंत की आनि सुंदर सुवन सहित जिआउ ।
दास तुलसी न तरु मो कहं मरन अमिय पिआउ ॥ ४॥५७ ॥

सुएहु इति० सु० ॥ १ ॥ दाटिय अनार ॥ २ ॥ भाग्यो न भाउ आर-
दाय न भाग्यो ॥ ३ ॥ हे सुमंत सुनो कि सुंदर पुत्र आनि कर हितमरित
जिआउ भाव पुत्र बिना जिआवना अदितसारित है । इहां महाराज अति
पीड़ित हैं ताते सुनु के स्थान में सुनि करे ॥ ४ ॥ ५७ ॥

अवध विलोकिहीं जीवत रामभद्रविहीन । कहा करि
भाइ सानुज भरत धरमधुरीन ॥१॥ राम सोक सनेह संकु
तनु विकल मन लीन ॥ टूटि तारागनन मग ज्यों होत कि
छिन छीन ॥ २ ॥ हृदय समुझि सनेह सादर प्रेम पाव
मोन । करी तुलसीदास दशरथ प्रीति परिमिति पीन ॥३॥

राम भद्र के बिना अवध देखि करि के हम जीवत हैं । अनुज स
धर्मधुरीन जो भरत सो आय करि के कहा करि है । भाव प्रप
आए होते तो अस शोक न भोगिवे को परत अर्थात् कैकई को न
देते क्योंकि धर्मधुरीन हैं । वा भरत धर्मधुरीन हैं यह अन्याय
जनित दुख को न सहि सकिहें ताते आइके कहा करिहें अर्थात्
जिन आवैं ॥ १ ॥ श्रीराम के शोक से तन विकल है औ सनेह ते पूर्ण
हैं ताते मनलीन भयो जात है । तारा टूट के आकाश के मग में जैसे
छिन छिन छीन होत जात है तस होत है ॥ २ ॥ नेह सहित आरा
सहित मीन के प्रेम को हृदय में पवित्र समुझि के गोसाईजी कहत हैं कि
दशरथ महाराज प्रीति की मर्यादा को पुष्ट करत भए । भाव जैसे जल
बिना मछरी शरीर त्यागत तस त्यागे ॥ ३॥५८ ॥

राग गौरी । करत राय मन मो अनुमान ॥१॥ सोक
विकल सुप वचन न आवै विहुरे कृपानिधान ॥ राज देन कह
बोली नारिवस मैं जो कछो बन जान । आयसु सिर धरि वसी
हरषि हिय कानन भवन समान ॥ २ ॥ ऐसे सुर की विल
अवधि लों जो राखौ यह प्रान । तो मिटि जाइ प्रीति की
परिमिति अजस सुनौ निज कान ॥ ३ ॥ राम गए अजहूँ
हीं जीवत समुझत हीं अकुलान । तुलसीदास तन तजि
रघुपति हित कियौ प्रेम परवान ॥ ४॥५९ ॥

करत इति श्रुगप ॥ ४॥ ५९ ॥

सोरठ । ऐसी तैं क्यों कटुवचन कछोरो । राम जाइ

तन कठोर तेरो कैमे धीं छद्द रछोरी ॥१॥ दिनकर वंस
 यता दसरथ मो राम लपन से भाई । जननी तू जननी तो
 कहा कहीं विधि केहि पोरि न लाई ॥ २ ॥ छों लहिछों
 सुप राजमातु हैं सुत मिर छव धरैगो । कुल कलंक मल-
 मूल मनोरथ तो विनु कौन करैगो ॥ ३ ॥ ऐहैं राम सुपौ
 अब तैहैं ईस अजस मेरो हरिहैं । तुलसीदास मोको बडो
 मोच तू जनम कवन विधि भरिहैं ॥ ४ ॥ ६० ॥

पशिए जू को फास्पीर दन भेजव औ भरत जू को आउव आदि
 गया छोड़ दिष्ट अब भरतजी की उक्ति कैकई प्रति लिखत हैं ॥ १ ॥
 दिनकर ऐसो वंश भयो औ दसरथ महाराज सम पिता औ श्रीराम
 लपन से भाई भए तहां हे जननी तू जननी भई तो कहा कहीं विधाता
 के कोहि को खोटाई नहीं लगाई है । वा हे जननी तूं अपने जननी सम
 भई यह कया बाल्मीकी रामायण में स्पष्ट है ॥ २ ॥ कुल को कलंक
 मूल को मूल अस मनोरथ तो विना कौन करैगो कि पुत्र सिर पर छत्र
 धारण करैगो, हम राजा की माता हैं के मुख पावेंगी ॥ ३ ॥ भरिहैं
 विनहैं ॥ ४ ॥ ६० ॥

ताते हैं देत न दूपन तोह । रामविरोधी उर बाठोर ते
 प्रगट कियो विधि मोहू ॥ १ ॥ सुंदरसुपद सुसील सुधानिधि
 जरनि जाय जेहि जोए । विष वारुनी बंधु कहितय विधु
 नातो मिटत न धोए ॥ २ ॥ होते जौ न सुजानसिरोमनि
 राम सब के मन भाहीं । तौ तेरो करतूति मातु सुनि प्रीति
 प्रतीति कहाहीं ॥ ३ ॥ मृदु मंजुल सांची सनेह सुधि सुनत
 भरत बरवानी । तुलसी साधुसाधु सुर नर मुनि कहत प्रेम
 पहिचानी ॥ ४ ॥ ६१ ॥

राम विरोधी जे बाठोर उर ताते विधाता ने हमहूं को प्रगट कियो
 भाव तब दोषी हमहूं उहरे ताते तोह को दोष नहीं देत हैं ॥ १ ॥ सुंदर

मुखदाता मुनील अमृत की राह जोहि की देखिवे ते तपनि जात है हम
विधु को भी विप और वारुणी को भी बंधु कहियत है, तो निधै भयो
किं नाता धोयवे ते नहीं भिटत है ॥ २ ॥ मुजाननि में शिरोमणि और
सब के मन माहीं श्रीराम जो न होते तो हे माता तेरी करतूति सुनि
के हमारी प्रीति प्रतीति कहां रही अर्थात् कहीं नहीं रही ॥ ३ ॥ कांप
सुंदर सांची नेह सहित औ शुद्ध ऐसी जो भरत की श्रेष्ठ जाना ताको
सुनत मात्र सुर नर मुनि प्रेम पहिचानिकै ठीक है ठीक है कर
है ॥ ४ ॥ ६१ ॥

जौं पै हौं मातुमते महुं छै हौं । तौ जननी जग में
सुप की कहां कालिमा ध्यै हौं ॥ १ ॥ क्यों हौं आजु होत सु
सपथनि कौन मानिहैं सांची । भहिमा मृगी कौन सुकत
को प्रल वचन बिसिष ते बांची ॥ २ ॥ गहि न जाति रसन
काह की कहीं जाहि जोनु सूकै । दोनबंधु कादन्ति
विनु कौन हिये को बूकै ॥ ३ ॥ तुलसी रामवियोग विष
विष विकल नारि नर भारी । भरत सनेह सुधा सींचे सा
भये ते समय सुपारी ॥ ४ ॥ ६२ ॥

कौसल्याजी के प्रति भरतजी की उक्ति ॥ १ ॥ आजु सपथनि
हम कैसे शुद्ध हो सकत हैं । हमारी बात को कौन साचो मानैगो । करत
शुक्ती की महिमा रूप मृगी खल के वचन रूप वान ते बची है । भा
नहीं बची है ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ६२ ॥ टि० महुं में, रसना जीभ ।

काहि की पीरि कौकड़हि लावों । धरहु धीर बलि जा
तात मोको आजु विधाता बावों ॥ १ ॥ सुनिवे योग वियोग
राम को हौं न होंउ मेरे प्यारे । सो मेरे नयननि आगे ते
धुपति बनहिं सिधारे ॥ २ ॥ तुलसिदास समुझाइ भरत
पांसु पोछि उरलाए । उपजी प्रीति जानि प्रभु के नि
मनहुं राम फिरि आए ॥ ३ ॥ ६३ ॥

कौसल्याजी की उक्ति है । टि० पोरि दोष । रघुनाथ जी का वियोग में मुनने योग्य नहीं रही, सो मेरे नेत्रों के सामने धन सिधाये, मैं जीवत रही क्योंकि विधाता हम से धाम हैं ॥ २ ॥ ६३ ॥

मेरी अवध धौं कहहु कहा है । करहु राज रघुराजचरन तजि सैं लटि लोगु रहा है ॥ १ ॥ धन्य मातु हौं धन्य लागि जेहि राजसमाज टहा है । ता पर मोसों प्रभु करि चाहत सब विनु दहन दहा है ॥ २ ॥ राम सपथ कोउ कछू कहै जिनि मैं दुप दुसह सहा है । पिचकूट चलिहौं प्रातहि चलि कमिऐ मोहि दहा है ॥ ३ ॥ यों कहि भोर भरत गिरिवर को मारग बूझि गहा है । सकल सराहत एक भरत जग जनमि सुलाहु लहा है ॥ ४ ॥ जानिहि सिय रघुनाथ भरत को सील सनेह महा है । कै तुलसी जाको रामनाम सों प्रेम नैम निवहा है ॥ ५ ॥ ६४ ॥

श्रीभरतजी की उक्ति है । मेरी अयोध्याजी में कहो तो क्या है अर्थात् कुछ नहीं है । रघुनाथ को चरण छोड़ि के राम करहु अस लै लगाइ के लोग कई रटि रहा वा मालै में लोग लटि रहा है ॥ १ ॥ हमारी माता धन्या हैं औ हम धन्य हैं काहे ते कि जेहि के निमित्त राजसमाज टहा है कई विगिरि गया है, ताहु पर हमारे ऐसे को स्वामी करि के बिना अग्नि के सब जरा चाहत हैं ॥ २ ॥ मेरी दहा कई बिनती है उमा पीजिये हम प्रातःकाल चलंगे, आप सब चलिये ॥ ३ ॥ गिरिवर कामदनाथ, जगत में जनमि के एक भरते ने सुंदर लाम को लहा है अस सकल सराहत हैं ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६४ ॥

भाई हौं अवध कहा रहि सहिहौं । राम लपन सिय चरन विलोकन कालि काननहि छैहौं ॥ १ ॥ जद्यपि मो तैं कै

मुखदाता मुशील अमृत की राह जोहे की देखिवे ते तपनि जात है कि
विधु को भी विष और वायणी को भी बंधु कहियत है, तो निश्चय
कि नाता धोयवे तें नहीं मिटत है ॥ २ ॥ सुजाननि में शिरोमणि
सब के मन माहीं श्रीराम जो न होते तो हे माता तेरी करतुवि सु
के हमारी प्रीति प्रतीति कहां रही अर्थात् कहीं नहीं रही ॥ ३ ॥ कोय
सुंदर सांची नेह सहित औ शुद्ध ऐसी जो भरत की श्रेष्ठ बानी ता
सुनत मात्र सुर नर मुनि प्रेम पहिचानिकै ठीक है ठीक है वा
है ॥ ४ ॥ ६१ ॥

जौ पै हौं मातुमते महुं छै हौं । तौ जननी जग में वा
सुय की कहां कालिमा ध्यै हौं ॥ १ ॥ क्यों हौं आजु होत सुवि
सपथनि कौन मानिहैं सांची । भहिमा मृगी कौन सुकती
को पल वचन विसिष ते बांची ॥ २ ॥ गहि न जाति रसना
काह की कहौं जाहि जोइ सुभै । दोनबंधु कारन्यसिंध
विनु कौन हिये की बूझै ॥ ३ ॥ तुलसी रामवियोग विषम
विष विकल नारि नर भारी । भरत सनेह सुधा सींचे स
भये ते समय सुपारी ॥ ४ ॥ ६२ ॥

कौसल्याजी के प्रति भरतजी की उक्ति ॥ १ ॥ आजु सपथनि
हम कैसे शुद्ध हो सकत हैं । हमारी बात को कौन साचो मानैगो ।
सुकती की महिमा रूप मृगी खल के वचन रूप वाज ते बची है । भा
नहीं बची है ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ६२ ॥ टि० महुं मैं, रसना जीभ ।
काहि की पोरि कौकडहि लावौं । धरहु धीर बलि ६

तात भोको आजु विधाता वाचौं ॥ १ ॥ सुनिवे योग विर्य
राम को हौं न हौं उ मेरे प्यारे । सो मेरे नयननि आगे
रघुपति बनहि सिधारे ॥ २ ॥ तुलसिदास समुझाइ भरत
काहं थांमु पोछि उरनाए । छपजी प्रीति जानि प्रभु के जित
मनहुं राम फिरि आए ॥ ३ ॥ ६३ ॥

कौसल्याजी की उक्ति है । टि० पोरि दोष । रघुनाथ जी का वियोग मैं सुनने योग्य नहीं रही, सो मेरे नेत्रों के सामने घन सिंघाये, मैं जीवत रही क्योंकि विधाता हम से घाम हैं ॥ २ ॥ ६३ ॥

मेरी अवध धौं कहहु कहा है । करहु राज रघुराजचरण तजि लैं लटि लोगु रहा है ॥ १ ॥ धन्य मातु धौं धन्य लागि जेहि राजसमाज दहा है । ता पर मोसों प्रभु करि चाहत सब विनु दहन दहा है ॥ २ ॥ राम सपथ कोउ कछू कहै जिनि मैं दुप दुसह सहा है । पिचकूट चलिहीं प्रातहि चलि कमिऐ मोहि दहा है ॥ ३ ॥ यों कहि भोर भरत गिरिवर को मारग वृक्ति गहा है । सकल सराहत एक भरत जग जनमि सुलाहु लहा है ॥ ४ ॥ जानिहि सिय रघुनाथ भरत को सील सनेह सहा है । कै तुलसी जाको रामनाम सों प्रेम नेम निवहा है ॥ ५ ॥ ६४ ॥

श्रीभरतजी की उक्ति है । मेरी अयोध्याजी में कहो तो क्या है अर्थात् कुछ नहीं है । रघुनाथ को चरण छोड़ि के राज करहु अस लैं लगाइ के लोग कई रटि रहा वा मालै में लोग लटि रहा है ॥ १ ॥ हमारी माता धन्या हैं औ हम धन्य हैं काहे ते कि जेहि के निमित्त राजसमाज दहा है कई बिगिरि गया है, ताहु पर हमारे ऐसे को स्वाधी करि के बिना अग्नि के सब जरा चाहत हैं ॥ २ ॥ मेरी दहा कई बिनती है उमा कीजिये हम प्रातःकाल चलेंगे, आप सब चलिये ॥ ३ ॥ गिरिवर कामदनाथ, जगत में जनमि के एक भरत ने सुंदर लाभ को लहा है अस सकल सराहत हैं ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६४ ॥

भाई धौं अवध कहा रहि लहिहीं । राम लपन सिय चरण विलोकन कालि काननहि लैहीं ॥ १ ॥ जद्यपि मो तैं कै

कुमातु ते छै आई अति पोची । सनमुंय गये सरन राखिनि
रघुपति परम सकोची ॥ २ ॥ तुलसी यों कहि चले भोरी
लोग विकल संग लागे । जनु वन जरत देपि दारुन द
निकसि विहंग मृग भागे ॥ ३॥६५ ॥

सुगम ॥ ६५ ॥ टि०—पोची अत्यन्त घुराई, दारुन भयंकर, द
वनडाढ़ा ।

सुक सों गहवर हिय कहै सारी । वीर कौर सिय रा
खन बिनु लागत जग अधियारो ॥ १ ॥ पापिन चरि भयानि
रानि नृप हित अनहित न विचारो । कुल गुर सचिव साध
सोचत विधि को न बसाइ उजारो ॥ २ ॥ अवलोकै न चलत
भरि लोचन नगर कोलाहल भारो । सुने न वचन कहना
कर के जब पुर परिवार सुंभारो ॥ ३ ॥ भैया भरत भाव
के संग वन सब लोग सिधारो । हम पर पाइ पीजरन त
सत अधिक अभाग हमारो ॥ ४ ॥ सुनि जग कहत अब सींग
रहु समुक्ति प्रेमपथ न्यारो । गए ते प्रभु महुंचाय फिरे पुनि
करत करम गुनगारो ॥ ५ ॥ जीवन लग जानकी लपत
को मरन महीप संवारो । तुलसी और प्रीति की चरवा
करत कहा कहु चारो ॥ ६॥६६ ॥

मैना सुआ सो व्याकुल हृदय कहै हैं । हे भाई सुआ श्री सीता रा
खन बिना जगत अधियारो लागत है ॥ १ ॥ पापिन जो वी
औ बुद्धिहीन रानी और महाराज ने हित अनहित नहीं विचा
किया । वशिष्ठ जी औ सुपुत्रादि मंत्री और साधुजन सोचत हैं कि
विषाता ने वसाय के कौन को नहीं उजारेउ अर्थात् सब को उतार
॥ २ ॥ चलत के नेत्र भरि देखे नहीं और जब पुर परिवार को सम्रा
श्रीराज्य कियो तब नगर में महत शब्द रह्यो ताते करुनाकर हैं

वचन न मुने ॥ ३ ॥ प्रिय जो भैया भरत तिन के संग वन में सब
लोगे गए औ हम पंख पाय के पींजरन में तरसत हैं । भाव जिन के
पंख नहीं ते गए औ हम नहीं, ताते अधिक अभाग हमारो है । ४॥
मुआ मुनि के कहत है कि हे अम्ब मैना प्रेम को पथ न्यारो है यह
समुझि के मौगी कहें मान रहु जे प्रभु के संग गए ते पहुँचाय के कर्म के
करतव की निंदा करत पुनि फिरे ॥ ५॥ जीवन तो जग में श्री जानकी
औ लखन लाल को है औ महाराज ने मरन बनायो है और प्रीति
की चरचा काहे को करत हैं काहे ते कि कुछ है सकत नहीं । भाव न
मरत बना न संग जात बना ॥ ६॥ ६७ ॥

कहै सुक मुनहि सिपावन सारो । विधि करतव विप-
रीत वामगति राम प्रेमपथ न्यारो ॥ १॥ को नर नारि अवध
पग मृग जेहि जीवन राम ते प्यारो । विद्यमान सब की गवने
वन वदन करम को कारो ॥ २ ॥ अब अनुज प्रिय सपा सुसे-
वक देखि विपाद बिसारो । पत्नी परबस परे पींजरनि लिपौ
कौन हमारो ॥ ३ ॥ रहि नृप की विगरी है सब को अब
एक संवारनिहारो । तुलसी प्रभु निजचरनपीठ मिस भरत
प्राण रपवारो ॥ ४ ॥ ६७ ॥

मुक कहत है कि हे मैना सिखावन मुनो । विधि के विपरीत करतव
से बक्र गति है औ श्रीराम के प्रेम को पथ न्यारो है ॥ १ ॥ अवध में
कवन नर नारि खग मृग अस हैं कि जेहि के राम ते प्यारो जीवन
है परंतु सब के रहत जो श्रीराम वन को गए तो करम को मुह फारो
है ॥ २ ॥ माता औ वंधुवर्ग औ प्रियसखा औ मुसेवक देखि के विपाद
को बिसरायो वा अनुज प्रिय सखा मुसेवकों को देखि के माना सब
विपाद को बिसरायो तो हम तो पत्नी हैं ताह में परबस पींजरन में परे हैं
तो हमारो कवन लेखो है । ३ । एक महाराज की तो रही और सब की
विगरी अब एक संवारनिहारो है जो प्रभु निज चरण पादुका के
पदाना ते भरत के प्राण को रत्नवारो है ॥ ४॥ ६७ ॥

तादिन मृगवेरपुर आए । रामसपा ते समाचार सुनि
 वारि विलोचन छाए ॥ १ ॥ कुससाथरी देपि रघुपति की हेतु
 अपनपौ जानौ । कहत कथा सिय राम लपन की बैठि
 रैन बिहानी ॥ २ ॥ भोरहि भरद्वाज आश्रम छै करि निपाद-
 पति आगे । चले जनु तक्यों न डाग टपित गज घोरघाम के
 लागे ॥ ३ ॥ वृक्षत चित्रकूट कहं जेहि तेहि मुनिवालकनि
 धतायो । तुलसी मनहुं फनिक्क मनि दूँढत निरपि शशि
 हिय धायो ॥ ४ ॥ ६८ ॥

पद सुगम ॥ ६८ ॥

विलोकि दूरि ते दोउ वीर । उर आयत आजानु सुम
 भुज स्यामल गौर सरौर ॥ १ ॥ सीस जटा सरसीरुह, लोचन
 बने परिधनु मुनिचीर । निकट निषंग संग सिय सोभित
 करनि धुनत धनु तीर ॥ २ ॥ मन अगड्ड तन पुलकि सिधिल-
 भयो नलिन नयन भरे नीर । गडत गोड मानो मकुष पंक मं
 कठत प्रेम बलधोर ॥ ३ ॥ तुलसिदास दसा देपि भरत की
 उठिधाये अतिहि अधीर । लिए उठाइ उरलाइ कृपानिधि
 धिरहजनित हरि पीर ॥ ४ ॥ ६९ ॥

आयन विसाल, आजानभुज जानु पर्यंत बाहुं ॥ १ ॥ बने परिधनु
 मुनिचीर मुनिचीर जे बल्कल ते परिधन कहैं बख बने हैं ॥ २ ॥ अ-
 दृष्ट अग्रवर्ती ॥ ३ ॥ हरि कहैं हरि लिए ॥ ४ ॥ ६९ ॥

राग केदारा । भरत भए ठाढ़े करजोरि । ह्वे न सकत
 मकुष यस समुक्ति मातुलत पोरि ॥ १ ॥ फिरिहैं किधैं
 कहैं प्रभु कल्पि कुटिलता मोरि । हृदय सोच सब
 विलोचन देख नद भद्र भोरि ॥ २ ॥ बनघासी पुर सोच

मरिचक चिह्न के छात्र के से दोरि । हेरे बचन मुनिवे
 मे मरे मरे मे मेन मन दोरि ॥ ३ ॥ तुलसी राम मुभाव
 मरिचक के छवि धीरकहि चहोरि । बोले बचन विनोत
 मरिचक रित जम्नामरिच निचोरि ॥ ४१७८ ॥

बनारि बनना बरि के अर्थात् विचारि के । हेरे नेह मरे मोर
 मरिचक मरिचक मरिचक ॥ ३ ॥ काठ केमे बचन मे बनाए मरिचक है भाव
 मरिचक मे हेरे हेरे मेन मन बोरि मेन मे मन को बोरि रहे
 है ॥ ३ ॥ ७७ ॥

जानत हो मरिचक के मन की । तटपति लुपान करीं
 दिनगी मोड़ साटा गुनहु दीनदित जन की ॥ १ ॥ ए सेवक
 मंगल बनन अति ज्यो चातकहि एक गति घन की । यह
 दिशारि मयनहु पुनोत पुर हरहु दुमह चारत परिजन की
 ॥ २ ॥ मेरी पुनि जीवन जानिण ऐसोइ जिय जैमो अहि
 जामु गई मनिजन की । मेटहु कुलकर्मक कोसलपति
 पन्ना देहु नाथ मोहि घन की ॥ ३ ॥ मोको लोइ लोइ
 लाइए लागे सोइ सोइ जौ उतपति कुमातु ते या तन की ।
 तुलसीदास सय दोष दूरि करि प्रभु अय लाज करहु निज
 पन की ॥ ४॥७१ ॥

ए अवधारणी सब निरंतर अति अनन्य सेवक हैं । जैसे चातक को
 एक मेघ की गति है भाव तैसे इन जनन को एक आप की गति है
 ॥ २ ॥ पुनि हमारे जीवन अस जानिण कि जेहि सर्प के फणि की
 मणि गई जैसे सो जाय । हे कोसलपति कुल को कलंक मेटहु । हे नाथ
 मोको घन जावे की आज्ञा देहु । इहां कुल को कलंक छोटे को राज्य
 होना बड़े को घन जानो है ॥ ३ ॥ जो या तन की उतपति कुमातु से
 है याते मोको जेई जेई दोष लगाए सोई सोई लागे । निज पन की कई
 घरनागत पालिये की लज्जा । ४ ॥ ७१ ॥

तात विचारौ धौं धौं क्यों आवों । तुम्ह सुचि मुद्द
सुजान सकल विधि बहुत कहा कहि कहि समुझावों ॥ १ ॥ निज
कर पाल पैचि या तन ते जौं पितु पग पानहीं करावों । होउ
छरिन पिता दसरथ तें कैसे ताको वचन मेठि पति पावों
॥ २ ॥ तुलसिदास जाको सुजस तिछूं पुर क्यों तेहि कुलहि
कालिमा लावों । प्रभु रूप निरपि निरास भरत भए जान्यौ
है सबहि भांति विधि वावों ॥ ३ ॥ ७२ ॥

हे तात भरत विचारो तो कि मैं क्यों वन को आयो ॥ १ ॥ करावों
कहैं वनवावों, पति पावों कहैं मर्यादा पावों । २ ॥ कुलहि कालिमा-
लावों कहिवे को यह भाव सत्यप्रतिज्ञ कुल है ॥ ३ ॥ ७२ ॥

राग सौरठ । बहुरों भरत कछो कछु चाहै । सकुच
सिन्धु बोझित विवेक करि बुधि बल वचन निवाहै ॥ १ ॥ छोटेहु
में छोड़ करि आए मैं सामुहे न हेरो । एकहि बार पावु
विधि मेरो सील सनेह निवेरो ॥ २ ॥ तुलसी जौं फिरिबो
न बनै प्रभु तौ हीं आयसु पावों । घर फेरियै लयन लरिका
है नाथ साथ हीं आवों ॥ ३ ॥ ७३ ॥

फेरि भरत कछु कहा चाहत हैं सकुच रूप समुद्र में अपने विवेक
जो जहाज करि के तेहि जहाज को बुद्धि औ वचन के बल तें निवार
हैं अर्थात् कुठार में नहीं परै देत हैं । वा बुद्धि औ वचन रूप सेना को
तेहि जहाज पर निवाहत हैं ॥ २ ॥ निवेरो कहैं दूरि कियो, हीं आवों
हम चलें । ३ ॥ ७३ ॥

रघुपति मोहि रंग किन लीजै । बार बार पुर जाइ
नाथ केहि कारन आयसु दीजै ॥ १ ॥ जद्यपि हीं पति अधम
कुटिलमति अपराधिनि को जायो । प्रनतपाल कीमल
सुभाउ जिय जानि सरन तकि आयो ॥ २ ॥ जौ मेरे तजि

चरन जानि गति कहौं हृदय कहुं राखी । तौ परिहरहुं
 दयाल दोनहित प्रभु अभिअंतरसापी ३ ॥ ॥ ताते नाथ
 कहौं मै पुनि पुनि प्रभु पितु मातु गोसाईं । भजनहीन नर-
 देह दया पर खान फेरु की नाईं ॥ ४ ॥ बंधुवचन सुनि
 श्रवन नयन राजीव नीर भरि आए । तुलसिदास प्रभु परम
 कृपा गहि बांइ भरत उर जाए ॥ ५ ॥ ७४ ॥

जो मो कों चरन छोड़ि के आन गति होय औ हृदय में कछु राखिं
 के कहत हांउं तौ हे दयाल, हे दीनहित, हे प्रभु, हे अंतरजामी त्यागि
 देहु ॥ ३ ॥ फेरु शृंगार ॥ ४ ॥ ५ ॥ ७४ ॥

काहे को मानत हानि दिये हो । प्रीति नीति गुन सीख
 धरम कहैं तुम अवलंब दिये हो ॥ १ ॥ तात जात जानिबे
 न ए दिन करि प्रमान पितुवानी । ऐहौं बेगि धरहु धोरज
 उर कठिन कालगति जानी ॥ २ ॥ तुलसिदास अनुजहि प्रबोधि
 प्रभु चरनपीठ निज दीन्है । मनहुं सवन की प्राणपाहुरू भरत
 सोस धरि लौन्है ॥ ३ ॥ ७५ ॥

हो भरत काहे को हानि हृदय में मानत हो । प्रीति औ नीति औ
 गुण औ शील औ धर्म को तुमहीं अवलंब दिए हो ॥ १ ॥ हे तात
 ए जे चौदह वर्ष के दिन हैं तिन के जाति न जानोगे ॥ २ ॥ ३ ॥ ७५ ॥

विनयी भरत करत कर जोरे । दीनबंधु दीनता दीनकी
 कवहुं परै जानि भोरे ॥ १ ॥ तुम्ह से तुम्हहिं नाथ मोक्षों मो से
 जन तुम को बहुतेरे । यहै जानि पहिचानि प्रीति छमिबे
 अवधौगुन मेरे ॥ २ ॥ यौं कहि सीय राम पायन परि लपन
 लाइ उर लौन्है । पुलक सरीर नीरभरि लोचन कहत प्रेम
 पनु कीन्है ॥ ३ ॥ तुलसी बीते अवध प्रथमदिन जौ रघुवीर न

ऐही । तौ प्रभुचरनसरोज सपय जीवत परिजनहि न
पैही ॥ ४ ॥ ७५ ॥

सु० ॥७१॥ टि०—पुलक शरीर से नेत्रों में जल भरि के प्रभु की
मतिज्ञा से कहा कि अवधि बीतने पर पहलेही दिन यदि न आवेंगे तो
परिजन को जीवित नहीं पावेंगे ।

अवसि हौं आयसु पाय रहौंगो । जनमि कैकई कोषि
कृपानिधि क्यों कछु चपरि कहौंगो ॥ १ ॥ भरत भूप सिय
राम लपन बन सुनि सानंद सहौंगो । पुरपरिजन अवलोकि
मातु सब सुप संतोष लहौंगो ॥ २ ॥ प्रभु जानत जेहि भांति
अवधलों वचन पालि निवहौंगो । आगे की विनती तुलसी
तब जब फिरि चरण गहौंगो ॥ ३ ॥ ७७ ॥

चपरि चाव पूर्वक ॥ १ ॥ भरत राजा हैं श्रीसीता राम लपन व
में हैं यह वचन सुनि के आनन्दसहित सहौंगो । पुरपरिजन औ स
मातन को देखि के अर्थात् बिकल देखि के सुख औ संतोष को पावौंगे
॥ २ ॥ जेहि भांति अवधि लों वचन पालि के निवहौंगे सो प्रभु जान
हैं । जब फेरि चरण गहौंगे तब आगे की विनती करैंगे भाव औ
सिंहासन पर बैठि यह विनती करैंगे ॥ ३ ॥ ७७ ॥

प्रभुसो में ठीठ्यौ बहुत दर्द है । कौबी कृमा नाथ भारी
ते कही कुजुगुति नई है ॥ १ ॥ यौ कहि बार बार पायनि पा
पांवरि पुलकि लई है । अपनी अदिन देखि हौं डरपत जे
विषवेलि बई है ॥ २ ॥ आयी सदा सुधारि गोसाई जन
विगारि गई है । धके वचन पैरत सनेहसरि पखो मानो की
चई है ॥ ३ ॥ चिचकूट तेहि समय सबनि को बुद्धि बिपा
हई है । तुलसी राम भरत के विकुरत सिला सप्रेम भा
है ॥ ४ ॥ ७८ ॥

प्रभु सों मैं बहुत दिठाई करी है आँ आरति ते नई कुजुगुति कही है । हे नाथ ताको छमा कीजिएगा । १ ॥ पाँवरि पादुका, हाँ कहैं हम ॥ २ ॥ हे गोसाईं जो जन ते विगिरि गई है ताको आप सदा सुधारत आए हो । एतना कहि बचन थकित भए, मानों सनेह रूप नदी के पेरत में घोर प्रवाह में परचो है । ३ । तेहि समै चित्रकूट में सवनि के बुद्धि को बिपाद ने नाशी है । गोसाईं जी कहत हैं कि श्रीभरत जू को बिछुरत में और को को कहैं शिलो मेमसहित भई है, भाव पधिलि गई है । ४।७८

जबते चित्रकूट ते आए । नंदिग्रामप्रनि अवनि डासि-कुस परनकुटी करि छाए ॥ १ ॥ अजिन वसन फल असन जटा धरे रहत अवधि चित दौन्हे । प्रभुपद प्रेम नेम ब्रत निरपत मुनिन्ह नमित मुख कौन्हे ॥ २ ॥ सिंहासन पर पूनि पादुका वारहिं वार जोहारे । प्रभु अनुराग मागि आयसु पुरजन सब काज संवारे ॥ ३ ॥ तुलसी ज्यों ज्यों बटत तेजतनु त्यों त्यों प्रीति अधिकारै । भए न हैं न होहिंगे कबहूँ भुचन भरत से भाई ॥ ४ ॥ ७९ ॥

अजिन मृगचर्म, मुनिन्ह नमित मुख कौन्हे कहिये को यह भाव कि राजकुमार होय के जस तप ए करत हैं तस हम नहीं करि सकत हैं ॥ २ ॥ अनुरागपूर्वक प्रभु जो चरनपादुका तिन्ह से आज्ञा मागि करि के पुरजनन के सब काज संवारे हैं ॥ ३ ॥ ४ ॥ ७९ ॥

राग रामकली—रापी भगति भलीभलाई भलीभांति भरत । स्वारथ परमाथ पथी जय जय जग करत ॥ १ ॥ जो ब्रत मुनिवरनि कठिन मानस आचरत । सो ब्रत लियो चातक ज्यों सुनत पातक हरत ॥ २ ॥ सिंहासन सुभग रामचरन-पीठ धरत । चालत सब राजकाज आयसु अनुसरत ॥ ३ ॥ आपु अवध विपनि बंधु सोच जरनि जरत । तुलसी सम विषम सुगम अगम लपि न परत ॥ ३ ॥ ८० ॥

भली भाँति ते भरत ने भली भगति औ भली भलाई राखी है ।
 वा भली भलाई ते भली भाँति भरत ने भगति राखी । भरत जू
 स्वारथ औ परमारथ के पथी हैं अस कहि जगत जैजै कहत है
 वा जगत में जेतने स्वारथ औ परमारथ के पथी हैं ते जैजै कहत
 हैं ॥ १ ॥ कठिन मानस हठयोगादि ते वा कठिन करि मन को अर्थात्
 रोक के ॥ २ ॥ चरनपीठ के आज्ञानुसार सब राजकाज चलावत
 हैं ॥ ३ ॥ आप तो अवय में हैं औ वन में भाई हैं ताते सोच रूप
 जरनि ते जरत हैं । गोसाईं जी कहत हैं कि भरत जी को सम विषय
 सुगम अगम कछु नहीं लखि परत हैं । अर्थात् अत्यंत सोच है ताते वा
 सम औ सुगम ठौर में भरत जू औ विषय औ अगम ठौर में राख
 हैं पर लखि नहीं परत कि के कहाँ हैं । भाव भरत जू यद्यपि सम सु
 ठौर में हैं पर जय सोच जरनि में जरत हैं तब विषय अगम में हैं अ
 श्रीराम जू यद्यपि विषय अगम में हैं पर शोचराहित हैं तो सम सुगम
 में हैं ॥ ४ ॥ ८० ॥

मोहि भावति कहि आवति नहिं भरतजू की रहनि ।
 सजल नयन सिधिलि वयन प्रभुगुनगन कहनि ॥ १ ॥ असन
 वसन अयन सयन धरम गरुड गहनि । दिन दिन वन प्रेम
 नेम निरुपधि निरवहनि ॥ २ ॥ सीता रघुनाथ लघन बिरह पीर
 सहनि । तुलसी तजि उभय लोक रामचरन चहनि ॥ ३ ॥ ८१ ॥
 असन भोजन, वसन वस्त्र, अयन गृह औ सैन औ भारी धर्म का
 ग्रहण करना ॥ २ ॥ ३ ॥ ८१ ॥

जानौ है संकर हनुमान लयन भरत रामभगति । कह
 संगम करत सुगम सुनत मीठो लगति ॥ १ ॥ लहत सहा
 चहत सयाल जुग जुग जगमगति । रामप्रेमपथ ते कवधूँ डोलत
 नहिं छगति ॥ २ ॥ रिधि सिधि विधि चारि सुगति जा विनु
 गति संगति । तुलसी तेहि सनमुप विनु विषय ठगति
 ठगति ॥ ३ ॥ ८२ ॥

श्रीशंकर श्रीहनुमान श्रीलपनलाल श्रीभरतजू ने रामभक्ति
 जानी है । वह रामभक्ति कैसे है कि कहिये मैं सुगम है औ करिये
 गम है औ सुनत में मीठी लगति है ॥ १ ॥ तेहि भक्ति को सकल
 हैं पर कोऊ एक पावत हैं औ जुग जुग में जगमगाति रहति है ।
 कबहुं पलानि परत नहीं औ श्री राम के प्रेम रूप पथ ते कबहुं
 ते आँ डगाति नहीं है ॥ २ ॥ रिद्धि सिद्धि औ चारो भांति की
 कहैं उपाय सो जा विना अगति है तेहि भक्ति के सन्मुख विना
 रूपी ठगिनि ठगति है ॥ ३ ॥ ८२ ॥

राग गौरी—कैकई करो धौं चतुराई कौन । राम लपन
 वनहिं पठाये पति पठयो सुरभौन ॥ १ ॥ कहा भलो
 भयो भरत को लगे तरुन तन दौन । पुरबासिन की नैन
 विनु कबहुं तो देखति हौंन ॥ २ ॥ कौसल्या दिनराति
 प्रति बैठि मनहिं मन मौन । तुलसी उचित न होइ
 दो प्रान गए संग जौन ॥ ३ ॥ ८३ ॥

कौशल्या जी. की उक्ति है ॥ १ ॥ दवन कहैं विरहानल ॥ ३ ॥
 ति । चता कराति प्रान गए संग जौन जो प्रान संग न गए ॥ ३ ॥ ८३
 हाग मीजियो हाथ दछो । लगी न रंग चिचकूटहु ते
 कहा जात दछो ॥ १ ॥ पति सुरपुर सिय राम लपन यन
 भरत भरत गछो । हौं रहि घर मसान पावक ज्यों
 मृतक दछो ॥ २ ॥ मेरोइ हियो कठोर करिये कहूं
 कहूं कुलिस लछो । तुलसी यन पहुँचाय फिगी सुत
 कहु परत कछो ॥ ३ ॥ ८४ ॥

हां कहाँ जात दछो इहां का बहा जात रहा । भाव जेहि सन्दरि हेतु
 ॥ १ ॥ हम घर रहि के मसान को पावक जैसे मृतक को जरावन
 मरिबोई रूप मृतक को जराय दियो ॥ २ ॥ हमारही हिय कठोर

फरिब के लिए विधाता ने कतहुं कुलिस पायो है । भाव वाली को
हमारो हृद बनायो है ॥ ३ ॥ ८४ ॥

हों तो समुझ रही अपनो सो । राम लपन सिय को
सुपमा कहुं भयो सधो सपनो सो ॥ १ ॥ जिन्ह के विरह विषाद
बटाउन्ह पग मृग जीव दुपारी । मोहि कहा सजनी समुझा-
वति हों तिन की महतारी ॥ २ ॥ भरतदसा सुनि सुमिनि
भूपगति देखि दीन पुरवासी । तुलसी राम कहत हों सजु-
वति है है जग उपहांसी ॥ ३ ॥ ८५ ॥

सखी समुझावति है ता प्रति श्री कौशल्या जी कहति हैं कि हे
सखी मैं तो आपे समुझ रही हों । भाव तब समुझावते को क्या प्रयोजन
है ॥ १ ॥ २ ॥ कौशल्या जी कहति हैं कि राम कहत में हम सहचर
हैं । भाव लोग कहि हैं कि कैसी माता हैं कि ऐसे पुत्र के बिछुरे पर श्री
बोलैत हैं । बोलनो हमारो जग में उपहास करावनिहारो होयगो ॥ ३ ॥ ८५

आली हों इन्हहि बुझावों कैसे । जित हिये भरि भरि
पति के हित मात हित सुत जैसे ॥ १ ॥ बार बार हिहि-
नात हरि उत जौ बोलै कोउ द्वारे । अंग लगाइ लिये द्वारे
ते करुनामय मुत प्यारे ॥ २ ॥ सोचन सजल सदा सोचत
से पान पान विसराए । चितवत चौंकि नाम सुनि सोचति
राम दुरति उर आए ॥ ३ ॥ तुलसी प्रभु के विरह वधिब-
ध ठि राजहंस से जोरे । ऐसेउ दुषित देखि हों जीवति राम
लपन के घोर ॥ ४ ॥ ८६ ॥

हे आली इन घोटन के मैं कैसे समुझावों । अपने स्वामी जे भीतर
लपन तिन के हित अपने हृदय में शोक को भरि भरि लेत हैं, जैसे
महतारी के हेतु पुत्र ॥ १ ॥ जो कोऊ द्वारे बोलत है तब द्वार के आगे
ताकि के बार बार हिहिनात हैं । भाव श्रीराम लपन तो नहीं सोचत

हैं । करुनामय हमारे प्यारे पुत्र लरिकई ते इन घोरन को अंग लगाइ लिए हैं ॥ २ ॥ सदा लोचन सजल रहत है औ खान पान जस सोअत में विसारि जात है तस विसराए रहत है औ श्रीराम लक्ष्मण को नाम मुनि चहुंकि के देखत हैं । जब नाम मुनिव ते श्रीराम की सुरति घर में आय जाति है तब सोच करत हैं ॥ ३ ॥ गोसाईं जी कहत हैं कि मधु के विरह रूप अधिक ने राम लपन के घोड़े जो राजहंस के जोड़े सम हैं तिन को दृष्टि करि के दुखित किए सो भी देखि के मैं निमत हों ॥ ४ ॥ ८६ ॥

राघो एक बार फिरि आवो । ए वर बाजि विलोकि आपने बहुरो वनहिं सिधावो ॥ १ ॥ जे पय प्याइ पोपि कर पंकज बार बार चुचुकारे । क्यों जीवहिं गेरे राम लाडलि ते भव निपट विसारे ॥ २ ॥ भरत सैगुनी सार करत हैं पतिप्रिय जानि तिहारि । तदपि दिनहुं दिन होत भांवरे मनहुं कमल हिम मारे ॥ ३ ॥ सुनहुं अधिक जौ राम मिलहिं वन कहियो मातु संदेसो । तुलसी मोहि और सब-जिन ते इन्ह को बडो अंदेसो ॥ ४ ॥ ८७ ॥

सार कहें पालन ॥ ८७ ॥

राग, कैदारा । काहू सो काहू समाचार अस पाए । बिचकूट ते राम लपन सिय मुनियत अनत सिधाए ॥ १ ॥ सैलसहित निरभार वन मुनिघल देपि देपि सब पाए । कहत सुनत सुमिरत सुपदायक मानस सुगम मुहाए ॥ २ ॥ बडि अवलंब वामविधि बिघटित विषम विषाद बटाए । सिरस सुमन मुकुमार मनोहर बालक बिंध चटाए ॥ ३ ॥ अवध सकल नर नारि विकल पति पकनि वचन अनभाए । तुलसी रामबिदोग सोगवस समुझत नहिं समुझाए ॥ ४ ॥ ८८ ॥

परचत नदी सरना वन मुनिन के आश्रम हम सब देखि देखि
आए हैं सुगम औ सुंदर हैं बसिबे को को कहैं कहत मुनत मुनि
में मन के सुखदायक हैं, बहि अवलंब को वाम विधाता नि तोड़े
सौक्ष्ण विपाद को बढ़ाए । सिरिस के सुमन सम सुकुमार मनो
धालकन को विंध्य परचत पर चढ़ाए ॥२॥३॥ अकनि मुनि, अनभा
अमिय ॥४॥८८॥

सुनौ मैं सषी मंगल चाह सुहाई । सुभपत्रिका निपाद
राज की आज्ञा भरत पहं आई ॥ १ ॥ कुंभर सो कुशल विम
तेहि अवसर कुलगुरु कहं पहुंचाई । गुर कृपासु संभन पु
घर घर सादर सवाह सुनाई ॥ २ ॥ बधि विराध सुर साध
सुषी करि रिषि सिष्य आसिय पाई । कुंभजसिष्य समेत
संग सिष्य मुदित चले दोउ भाई ॥ ३ ॥ देवा विध बोव
सुपास गल बसी हैं परनरुह छाई । पंथकथा रघुनाथ
पथिक की तुलसिदास सुनि गाई ॥ ४॥८९॥

॥ १ ॥ सो कुशल छेम तेही अवसर कुंभर भरत ने बशिष्ठ
कहं पहुंचाई है ॥ २ ॥ कुंभज शिष्य सुतीक्ष्ण ॥ ३ ॥ देवा नरदा
॥ ४ ॥८९॥

सौख्य न्याय वेदांत की, छोड़ि छाड़ि सब जंग ।

सीता रघुपति चरन महं, हरिहर करहु उमंग ॥

इति श्रीरामगीतावलीप्रकाशिका टीकायां श्रीसीतारामकृपापात्र श्री
॥ सीतारामीय हरिहर मसादकृतौ अयोध्याकाण्डः समाप्तः ॥

श्रीनीतागमाभ्यां नमः ।

सटीक गीतावली-आरण्यकाण्ड ।

मद्राजचरण-परचा ।

रत्नरत्न रघुनायक मुनिपयपाल ।

पादि पादि फरनाकर दुर्जनकाल ॥

मूल ।

राग मल्लार । देखे राम पथिक नाचत सुदित मोर ।

मानत मनहु सतडिता ललित घन धनु सुरधनु गरजनि
टंकोर ॥ १ ॥ कंयै कलाप घर वरहि फिरावत गावत कल
कोकिल किसोर । जहं जहं प्रभु विचरत तहं तहं सुपद
कवन कौतुक न घोर ॥ २ ॥ सघन छाँह तम रुचिर रजनि
भम बदन चन्द चित्तवत चकोर । तुलसी मुनि पग मृगनि
सराहत भये हैं सुकृत सब इन की चोर ॥ ३॥१ ॥

टीका ।

देखे० कवि की उक्ति है कि श्रीराम पथिक के देखिये ते दपित
मोर नाचत है । मानो श्रीराम को तडिता सहित छंदर घन मानत है ।
इहां तडिता श्रीजानकी जी हैं वा पीतपट है औ सारध धनु जो सो
रुद्रधनु है औ ताको टंकोर जो सो गरज है ॥१॥ वरहो कहैं मयूर सो
कलाप कहैं पक्ष को कंपाय के फिरावत है औ युवा कोकिल जो सो

मधुर गावत है । जहाँ जहाँ दण्डकवन में प्रभु फिरत हैं तहाँ तहाँ सुत
औ कौतुक थोर नहीं है ॥ २ ॥ सघन छाँह की अंधेरी में सुंदर रात्रि
के भ्रम ते औ मुख चन्द के भ्रम ते चकोर चितवत है । गोसाईं नी
कहत हैं कि खग मृगनि को मुनि सराहत हैं औ कहत हैं कि त
सुकुत इन के ओर भए हैं ॥ ३॥१ ॥

राग कल्याण । सुभग सरासन सायक जोरे । धूलत
राम फिरत मृगया वन वसति सो मृदु मूरति मन मोरे ॥
धीत वसन कटि चारु चारि सर चलत कोटि नट सो बन
तोरे । स्यामल तनु श्रमकन राजत ज्यों नव घन सुधासरोवर
घोरे ॥ २ ॥ ललित कांध वर भुज विसाल उर लेहि कंठों
चित चोरे । अवलोकत मुख देत परम सुष लित सरद ससि
की छवि छोरे ॥ ३ ॥ जटा मुकुटः सिर सारस नयननि गोड़े
तकत सुभौंह सकोरे । सोभा अमित समाति न कानन
उमगि चली चहुं दिसि मिति फोरे ॥ ४ ॥ चितवत चकित कुरंग
कुरंगिनि सब भये मगन मदन की भोरे । तुलसिदास प्र
वान न मोचत सहज सुभाय प्रेम वस थोरे ॥ ५॥२ ॥

सुभग ६० । मृगया शिकार । १ ॥ कटि चारु चारि सर कटि में
चारि वान धरे हैं । नव घन सुधा सरोवर खोरे मानो नवीन
अमृत के तालाव में स्नान किए ॥ २ ॥ ३ ॥ जटा को मुकुट सिर
हैं औ सारस कहें कमल ता सम नैन हैं । सुंदर भौंह को सकोरे म
यात ताकत हैं । सोभा भितिरहित है ताते वन में समाति नहीं है यथा
को फोरि के चहुं दिसि उमगि चली ॥ ४ ॥ मृगा मृगी चकित चितवत
हैं मदन के भ्रम ते सब मगन भए हैं । भाव मदन के पाँव मान
हैं । एऊ एक पाण हाथ में औ चार पाण कटि में धरे हैं । गोसाईं नी
कहत हैं कि प्रभु पाण नहीं छोड़त हैं काहे ते कि प्रभु को यह सरन
सुभाय है अर्थात् बनावट करि नहीं कि योरे प्रेम के वश होत हैं ॥ ५॥

राग धौलर—देखे हैं राम लज्जत यह मोला । पंचवटी वर
 मण्डपों पर खड़े खड़े जगता पुनीता ॥ १ ॥ कपटधुरंग कनक-
 बन्धित लपट जिह्व मो कहरि रमि वाला । पाइ पालिबे योग
 मंजुम मातृ मंजुम वाला ॥ २ ॥ पिटादवन मुनि विहंसि
 मरम मंदारि आदमर कीर्ति । चन्गो मो भाजि फिरि फिरि
 रीत मुनिमय रजवारि चीरि ॥ ३ ॥ मोहति मधुर मनोहर
 मूर्ति रमहरिन के पाछे । धावनि नवनि विलोकनि
 बिषयनि दम तुलसीदर आछे । ४ ॥

पैरे १० पद सु० ॥ २ ॥ रि०—धुरंग हरिन, ऐषहरिन सोने का धृग,
 विषयनि विशेष प्रकार ।

राग कान्हाज—कर मर धनु कटि रुचिर निपंग । प्रिया
 प्रीति प्रेरित दमघोषिन विषयत कपट कनकमृग मंग ॥ १ ॥
 भुज विमान कामनीय कन्य उर वनमोकर मोहै मांघरे अंग ।
 मनो मुकुतामनि मरकतगिरि पर लसत ललित रविकिरन
 प्रसंग ॥ २ ॥ नैननलिन मिरजटा मुकुटविष सुमनमाल
 मानो निवसिरंग । तुलसिदाम असि मूरति की वलि छवि
 बिलोकि लालै अमित अनंग ॥ ३ ॥ ४ ॥

कर १० । गुजा विसाल है औ कंप छाती सुंदर है औ अम कण
 मांघरे अंग पर मोहन है । मानो मुक्तामणि मरकत के परवत पर सुंदर
 रविकिरन के प्रसंग से सोभत है । नैन कमल सम हैं सिर में जटा को
 छुट्ट है बीच में श्वेत सुमन की माला है सो मानो शिव के शिर पर
 गंगा है । गोसाई जी कहत है कि ऐसी मूरति की छवि देखि कै एक
 को को कहै अनेक काम लाजत है ॥ ३ ॥ ४ ॥

राग कैदारा—राघव भावति मोहि बिपिन की वीथिन्ह
 धवनि । परुन कंज वरन चरन सोकहरन अंकुस कुलिसं
 केतु अंकित धवनि ॥ १ ॥ सुन्दर स्यामल अंग वसन पीत-

मुरंग कटि निपंग परिकर गिरवनि । कनक कुंग स
 साजि वार सर चाप राजियनयन इत उत चितवनि ॥ २ ॥
 सोहत सिर मुकुट जटापटल निकर मुमन लता सजित रचो
 वनयनि । तैसेई स्रमसौंकर रुधिर राजत सुंप तैसिचै लखित
 भृकुटिन्ह की नवनि ॥ ३ ॥ दीपत पगनिकर मृग रवनिहनुत
 थकित विसारि लहं तहं की भवनि । हरि दरसन फल पायो
 है ज्ञान विमल जाचत भक्ति मुनि चाहत जवनि ॥ ४ ॥ जिन
 की मन मगन भये हैं रस सगुन तिन के लिये पगुन मुक्ति
 कवनि । खवनसुपकारनि भवसरितांतरनि गावत तुलसिदास
 कोरति पवनि ॥ ५ ॥ ५ ॥

राघोइ० राघो की विपिनि वीथिन की धावनि मोको भावति
 जेहि भाइये ते शोकहरन लाल कमल सम जो अष्ट चरण में अंड
 कुलिश ध्वज हैं ताते अंकित अवनि हैं गई है ॥ १ ॥ औ सुंदर न्यास
 अंग औ सुंदर पीत रंग को वसन औ कटि में जो तरकस औ पडुका
 तें फेट को बांधनि मोको भावति है औ कनकमृग के संग में जो है
 में सर चाप साजे हैं औ कमल सम नैन से जो इत उत देखत हैं औ
 मोको भावति है ॥ २ ॥ औ सिर में जटासमूह को मुकुट जो सोहत है औ
 अनेकन पुष्प लता ते जो बनावरी रची है सो मोको भावति है औ
 तैसेई सुंदर श्रमकण जो मुख पर शोभत औ तैसेई सुंदर जे शृङ्गनि
 की नवनि है सो मोको भावति है ॥ ३ ॥ खगन औ मृगिनयुग
 जहाँ तहाँ के भ्रमनि विपारि के थकित देखत हैं । हरि के दरसन को
 फल विमल ज्ञान पायो है ताते भक्ति जाचत हैं । जेहि भक्ति को मुनि
 चाहत हैं ॥ ४ ॥ कदापि कोऊ कहै कि सब ते दुर्लभ ज्ञान है तेहि
 पाए पर भक्ति क्यों जांचत हैं ता पर कहत हैं जिन्ह के मन सगुन ने
 मम में मगन भये हैं तिनह के लेखे निर्विशेष मुक्ति क्या है । अतएव
 गीता में कहा । ब्रह्मभूतः मत्सत्तात्मा न शोचति न कांक्षति । समस्तसंशु
 भूतेषु मद्भक्तिं लभते परात् ॥ पवनि कहें पावनि ॥ ५ ॥ ५ ॥

मोरठ । रघवर दूरि छाड़ मृग माख्यो । लपन पुकारि
 राम हसए कहि मरतेहुं वयर संभाख्यो ॥ १ ॥ सुनहु तात
 कोउ तुमहिं पुकारत प्राननाथ की नाई । कछो लपन इत्यो
 हरिन कोपि मिय हठि पठये वरिआई ॥ २ ॥ वसु बिखोनि
 कहत तुलसी प्रभु भाई भली न कीन्ही । मेरे जान जानकी
 काह पन छल करि हरि लीन्ही ॥ ६ ॥

रघु० । हगए धीरे अपर पद सु० ॥३॥ ६ ॥

भारत वचन कहति दैदेहीं । बिलपति भूरि बिसूरि दूरि
 गये मृगसंग परम मनेछो ॥१॥ कहे काटु वचन रेप नाघी मैं
 तात छमा सो कौनै । देखि बधिकावस राजमरालिनि लपन
 लाल छिनि लीजै ॥२॥ वन देवनि सिय कहन कहति यों छल
 करि नीच हरी हैं । गोमरकर सुरधनु नाथ ज्यों त्यों पर-
 दाथ परी हैं ॥३॥ तुलसिदास रघुनाथ नाम धुनि अकनि
 गोध धुकि धायो । पुत्रि पुत्रि जानि डरहि न जैहै नीच मीच
 हों आयो ॥४॥ ७ ॥

भारत ६० । भूरि बिसूरि बहु चिंता करि वा बहुत उसास लेइ
 ॥१॥ २ ॥ वनंदवतीन सो सीता जू श्री राम जू सो यों कहिये को
 कहति है कि मोको छल करि के नीच ने हरी है । गोमर कहै कसाई
 मोहि के कर सुरधनु जैसे पर तैसे परदाथ परी हैं ॥३॥ धुकि कहै वेग
 करि, नीच मीच हों आयो नीच जो रावण ताके मृत्यु राम में आयो ॥४॥ ७

फिरत न वारहिं वार प्रचाख्यो । चपरि चींच चंगुल हय
 हति रघ पंड पंड करि डाख्यो ॥१॥ विरय विकल कियो
 कोन लीन्हि सिय वन-घायनि अकुलान्यो । तव अंसि कांठि
 कांठि पर पांवर लै प्रभुप्रिया परान्यो ॥२॥ रामकाज-धगराज

आज लखो जियत न जानकि त्यागी । तुलसिदास सुर सिद्ध
सराहत धन्य विहग बड भागी ॥ ३८ ॥

चपरि चटकई करि ॥ १ ॥ घन घायन बहुत घायन से ॥ २ ॥ ३८ ॥
दि०—असि तलवार । प्रभुप्रिया सीता । खगराज जटाघु ।

राग गौरी । हेम को हरिन हनि फिरे रघुकुलमनि
लपन ललित कर लिये मृगछाल । आश्रम आवत बली सगुन
न भये भले फरके वाम बाहु लोचन विसाल ॥ १ ॥ सरित
जल मलिन सरनि सूखे नलिन बलिन गुंजत कल कूजे न
मराल । कोलिनि कोलकिरात जहं तहं बिलपात बन
बिलोकि जात पग मृग माल ॥ २ ॥ तरु जी जानको लाये
ज्याये हरि करि कपि हेरै न हुंकरि भरे फल न रसाल । जी
सुकसारिका पाले मातु ज्यों ललकि लाले तेज न पडत न
पंढावै मुनिवाल ॥ ३ ॥ समुझि सहमे सुठि प्रिया तो न
थाई उठि तुलसी विवरन परनटनसाल । चोरै सो सब
समाज कुसल देवों आजु गहवरि हिये कहैं कीसलपाल ॥ ४ ॥ ३८ ॥

हेम को हरिन जो मारीच ताको मारि के रघुकुलमनि फिरे । ताको
सुंदर छाल लपनलाल हाथ में लिए । अतएव इनुमचाटक लंकाकाण्ड में
एही मृगचर्म पर रघुनाथ को बैठव लिखे । अङ्के कृत्वोत्तमाङ्ग पुत्रगवलपतेः
पादमसस्य इतुर्भूमौ विस्तारितायां त्वचि कनकमृगस्याङ्गुधौ निषाप ।
बाणं रसःकुलद्रं प्रगुणितमनुजेनार्पितं तीक्ष्णमक्ष्णोः कोणेनोद्ग्राह्यमाणस्त्र-
दनुजवचने दत्तकर्णोपमास्ते ॥ १ ॥ माल समूह ॥ २ ॥ ज्याए जे हरि
करि, कपि, सिंह, शर्पा यानर जे जानकी जी जिआए रही ॥ ३ ॥ ४ ॥ १ ॥

आयम निरधि भूले द्रुम न फले फूले बलि पग मानी
कयहुं नहे । मुनिन मुनिबधूटी उजरी परनकुटी पंचवटी
पहिचानि ठाटेई रहै ॥ १ ॥ उठि न सलिल लिये प्रेम प्रभु-

न जानकी रापी । २॥ मरतन में रघुवीर विलोके तापस धैर
बनाये । चाहत चलन प्राण पांवर विनु सिय सुधि प्रमुहि
सुनाये ॥३॥ वार वार कर मीजि सौसधुनि गीधराज पछि-
ताई । तुलसी प्रभु कृपाल तेहि औसर चाइ गये दीउ भाई
॥ ४॥१२ ॥

मेरे ३० । अब गीधराज को परित्याग कहत हैं कि मेरे एको धात
हाथ न लागी नाइक हमार शरीर सपास भयो जैसे धन में कल्पलता
अग्नि ते जरि जाइ ॥ १ ॥ सब जग जानत रह्यो कि महाराज दशरथ
से औ जटायु से प्रेम है पर सो प्रेम महाराज दशरथ सो न प्रतिपात्यो ।
भाव महाराज दशरथ की इच्छा रही कि श्रीराम राजा होई । तेहि में
हम सहाय न किया । नाटके । न मंत्री निर्व्यूढा दशरथनुपे राज्यविषयान
पैदेशी जाता इहहरणतोरारससपतेः । नरामस्यास्येन्दुर्नयनविषयोभूत्सुहृति-
नोजटायोर्जन्मेदं वितथमभवद्भाग्यराहितम् ॥ याही श्लोक के अनुसार पर
पद है ॥ १२ ॥

राघो गीध गोद करि लीन्हो । नयनसरोज सनेह सलिल
सुंचि मनहुं अर्द्धजल दीन्हो ॥ १ ॥ सुनहु लपन पंगपतिहि
मिलि बन में पितु मरन न जान्यो । सहि न सक्यों सो कठिन
विधाता पड्यो पच्छ आजु भान्यो ॥ २ ॥ बहुविधि राम कछो
तन रापन परमधीर नहि डोल्यो । रोकि प्रेम अवलोकि
षटनविधु वचन मनोहर बोल्यो ॥ ३ ॥ तुलसी प्रभु भूठे
जीवमल्लिग समय न धोये लैहीं । जाको नाम मरत सुनि-
दृष्टभ तुमहिं कहां पुनि पैहीं ॥ ४ ॥ १३ ॥

राघो ३० । खगपति गीधराज, भान्यो तोरयो, अपर पद सु० ॥३॥
॥१३॥ टिप्पणी—अर्द्धजल मरनसमय जल देना ।

गीध के छे जानत रामदियो हैं । प्रनतपाल सेवक कृपाल-

चित पितु पटतरहि दियो हों ॥ १ ॥ तृणगजोनिगत गीध
जनम भरि पाइ कुजन्तु जियो हों । महाराज सुकृती समाज
सब ऊपर आबु कियो हों ॥ २ ॥ स्रवन वचन सुप नाम
रूप चप राम उछंग लियो हों । तुलसी मो समान बडभागी
को कहि सकै वियो हों ॥ ३॥१४ ॥

नीके० । अपने हृदय में श्रीराम को नीके कै जानत हों । वा यों
कई एहि भांति ते नीके कै जानत हों ॥१॥२॥ धवन सों श्रीराम को
वचन सुनत हों आ मुख से नाम लेत हों नेत्र सों रूप देखत हों आ
देह को श्रीराम गोद में लिए हैं तो मो समान बड भागी वियो कई
दूसरे को को कहि सकैगो ॥ ३॥१४ ॥

मेरे जान रात कछू दिन जीजै । देखिये आपु सुचन-
सेवा सुप मोहि पितु को सुप दीजै ॥ १ ॥ दिव्य देह इच्छा
जीवन जग विधि मनाइ मांगि लीजै । हरि हर मुजस मुनाय
दरस दे लोग कृतारथ कीजै ॥ २ ॥ देखि बदन सुनि वचन
अमिय तन राम नयन जल भीजै । बोल्यो विहग विहसि
रघुवर बलि कहों सुभाय पतीजै ॥ ३ ॥ मेरे मरिबे सम
न चारि फल होंहि तो क्यों न कहीजै । तुलसी प्रभु दियो
उतर मौनहीं परीमानो प्रेम सहीजै ॥ ४॥१५ ॥

मेरे० । पुत्र की सेवा को मुख आप देखिए औ हम को पिता
का मुख दीजिये ॥ १ ॥ विधाता को मनाइ के दिव्य देह औ जग में
इच्छाजीवन मांगि लीजिये । हरिहर को जस मुनाय के औ आपन
दंशन देह के लोगन को कृतार्थ कीजिये ॥ २ ॥ रघुनाथ के मुख
को देखि कै औ वचनामृत को सुनि के औ श्रीराम के नयन जल से
तन को भीजै कै ॥ ३ ॥ मौने रूप उतर श्रीराम दियो मानों प्रेम में
सही परी । भाव रघुनाथ ऐसे वक्ता निरुत्तर भए ॥ ४॥१५ ॥

मेरो सुनियै तात संदेसी । सीयहरने जिनि कहिहु पिता
 सों द्वैहै अधिक अंदेसी ॥ १ ॥ रावरे पुन्य प्रताप अनल मह
 अल्प दिननि रिपु दहिहै । कुलसमेत सुरसभा दसानन
 समाचार सब कहिहै ॥ २ ॥ मुनि प्रभुवचन आनि उर
 मूरति चरनकमल सिर नार्ई । चली नभ सुनंत रामे कल
 कीरति अरु निजभाग बडाई ॥ ३ ॥ पितु ज्यों गीध क्रिया करि
 रघुपति अपने धाम पठायो । ऐसे प्रभु बिसारि तुलसी सठ
 तूं चाहत सुप पायो ॥ ४ ॥ १६ ॥

पद छ० ॥ १६ ॥

राग सूडव । सवरी सोझ उठी फरकत वाम बिलोचन
 बाहु । सगुन सुझावने सूचत मुनि मन अगम उछाहु ॥
 छन्द । मुनि अगम उर आनन्द लोचन सजल तनु पुलका
 वली । तन पर्नसाल बनाइ जल भरि कलस फल चाहन
 चली ॥ मंजुल मनोरथ करति सुमिरति विप्रवर वानी भली ।
 ज्यों कल्पवेलि सकेलि सुकृत सुफूल फूली सुप फली ॥ १ ॥
 प्रानेप्रिया पाहुने ऐहै राम लपन मेरे आजु । जानत जन
 जिय की मृदु चित राम गरीवनेवाजु ॥ छन्द ॥ मृदुचित
 गरीवनेवाजु आजु विराजिहैं गृह आइ कै । ब्रह्मादि संकर
 गौरि पूजित पूजिहैं अब जाइ कै ॥ लहि नाथ हों रघुनाथ
 यानी पतितपावन पाइ कै । दुहुं ओर लाहु अघाइ तुलसी
 तीसरेहु गुन गाइ कै ॥ २ ॥ दोना रुचिर रचे पूरन अंद
 मूल फल फूल । अनुपम अमियहु ते अंयक अवलोकत अनु
 कूल ॥ छन्द ॥ अनुकूल अंयक अंय ज्यों निज डिंभ हित
 सब आनि कै । सुंदर सनेहु सुधा सहस जनु सरस राधे

सानि कै ॥ छन भवन छन बाहिर बिलोकति पंथ भू परि-
 यानि कै । दोउ भाइ आये सवरि काकी प्रेमपनु पहिचानि
 कै ॥ ३ ॥ सवन मुनत चली आवत देखि लपन रघुराउ ।
 सिधिल सनेहु कहे हैं सपनो विधि कैधौं सतिभाउ ॥ छन्द ॥
 सतिभाउ कै सपनो निहारि कुमार कोसलराय कै । गहे
 वरन जे अघहरन नराजन वचन मानस काय कै ॥ लघु
 भाग भाजन उदधि उमग्यो लाभ सुष चित चाय कै । सो
 जननि ज्यों आदरी सानुज राम भूपे भाय कै ॥ ४ ॥ प्रेम
 पट पावरे देत सुषर्ष बिलोचन वारि । आश्रम लै दिये
 प्राप्त पंकज पाय पधारि ॥ छन्द ॥ पद पंकजात पधारि
 पूजे पंथसम विरहित भये । फल फूल अंकुर मूल धरे
 सुधारि भरि दोना नये ॥ प्रभु पात पुलकित गात खाद
 सराहि आदर जनु जये । फल चारिहुं फल चारि देत पर-
 चारि फल सवरी दये ॥ ५ ॥ सुमन बरपि हरये सुर सुनि
 सुहित सराहि सिद्धात । केहि रुचि केहि छुधा सानुज
 मांगि मांगि प्रभु पात ॥ छन्द ॥ प्रभु पात मांगत देति
 सवरी राम भोगी याग कै । बालक सुमित्रा कौसिका कै
 पाहुने फल साग कै ॥ पुलकत प्रसंसत सिद्ध सिव सनकादि
 भाजन भाग कै । सुनि समुक्ति तुलसी जानि रामहिं बस
 प्रमल अनुराग कै ॥ ६ ॥ रघुवर अंचल उठे सवरी करि
 प्रनाम कर जोरि । हौं बलि बलि गर्द पुरइ मंचु मनोरथ
 मोरि ॥ छन्द ॥ पुरइ मनोरथ स्वारथहु परमारथहुं पूरन करी ।
 अथ औगुनन की कीठरी करि कृपा मुद मंगल भरी ॥

तापस किरातनि कोल मृदु मूरति मनोहर मन धरो । सिर
नाइ आयसु पाइ गवनी परम निधि पाले परी ॥ ७ ॥ सिध
सुधि सब कछी नप सिध निरपि निरपि दीउ भाइ । दैदे
प्रदच्छिना करत प्रनाम न प्रेम अवाइ ॥ छन्द ॥ अति प्रेम
मानस रापि रामहिं रासधामहिं सो गर्ई । तेहि मातु ज्यो
रघुनाथ अपने हाथ जल अंजलि दई ॥ तुलसी भनत सवरी
प्रनति रघुवर प्रकृति करुनामई । गावत सुनत समुक्त
भगति द्विय होइ प्रभुपद नित नई ॥ ८ ॥ १७ ॥

इति श्री रामगीतावल्यां चारण्यकाण्डः समाप्तः ।

सवरी ३० । सवरी सोय उठी या काल में घाम नेत्र औ बाहु फर-
कत जे ते सोहायने सगुन मुनिपन अगम उछाहु को सूचन करत हैं ।
मुनिन को जो अगम सो आनन्द उर में है । नेत्र सजल हैं । तन में
रोमांच हैं ऐसी जो सवरी सो तृन औ परन के गृह को संवारि के अर्थात्
झारि बटोरि के औ कलस में जल भरि के फल लेइवे के अभिलाष
से चली । चलत में सुंदर मनोरथ करति है औ विम्वर जो मतंग ऋषि
तिन की जो भली बानी ताको सुमरति है । जो बानी रूप कल्पवेलि
सुकुंत बटोरि के सुंदर फूल फूली रही सो अब सुख रूप फल फली ॥ १ ॥
अब सवरी को मनोरथ कहत हैं । सवरी कहति है । हम नाय पाई के
अघाय के लाहु लहव औ श्रीरघुनाथ पतितपावन बाना पाय के अघाई
के लाहु लहव याते दूना ओर लाभ अघाई के है औ तुलसी से तीसरो
गुन गाईके अघाय लहु लहव अपर सु० ॥ २ ॥ दोना सुंदर
रचे ताको कंद मूल फल फूल ते पूरन किए । ते मूलादि कैसे हैं कि
अमृतहु ते अनूप हैं औ अम्बक कहें नेत्र ता से देखतो में अनुकूल हैं
अर्थात् सुंदरो हैं । नेत्रन के प्रिय जो फल हैं जैसे माता अपने बालक
के हित आनै तैसे सब आनि के सुंदर सनेह जो है सो हजार गुन
अमृत से सरस है मानो तासो सागि राखे । छन भीन छन बाहर भूमि
पर हाथ दैके राह देखति है । सवरी के प्रेम की प्रतिज्ञा पहिचानि के

श्रीसीतारामाभ्यां नमः ।

सटीक गीतावली—किष्किन्धाकाण्ड ।

मङ्गलाचरण—संरठा ।

त्यागि बालि बलवान्, दीन पीन सुग्रीव कहं ।
मीव कियो भगवान्, को कृपाल अस हेतु विनु ॥ १ ॥

मूल ।

राग केदारा । भूपन वसन विलोकत सिय के । प्रेमविषस
मन वेपु पुलक तन नीरज नयन नीरभरे पिय के ॥ १ ॥ सकुचत
कहत सुमिरि उर उमगत सील सनेह सुगुनगन तिय के ।
लामि दसा लपि लपन सया कपि पधिले हैं चांच माठ
मानो धिय के ॥ २ ॥ सोचत हानि मानि मन गुनि गुनि
गये विचटि फल सकल सुखिय के । वरने यामवन्त तैहिं
पसपर वचन विवेक वीर रस विय के ॥ ३ ॥ धीर वीर सुनि
समुक्ति परसपर ब्रत उपाय उघटत निज हिय के । तुलसिदास
बच समझ कहि ते कवि लागत निपट निठुर जड जिय के
॥ ४ ॥ १ ॥

टीका ।

भूपण ६० । ऋष्यमूक पर्वत पर सुग्रीव ने श्रीजानकी जी को
भूपण वसन श्रीराम जी को दिष्ट तोहि विलोकत मात्र श्रीराम जू को

मन प्रेम के विशेष वस भयो औ तन कंप औ पुलकावलीयुक्त भयो
औ कमल नैन में आंसू भरि आए ॥ १ ॥ सखा कपि सुग्रीव और
बांदर, माठ महुका ॥ २ ॥ मन में हानि मानि के गुनि गुनि के सोचत
हैं कि सुकिय कहैं सुकृत के सकल फल विघटि कहैं वीति गए हैं वीर
रस विय के वीर रस के वीज के ॥ ३ ॥ उघटत प्रगट करत ॥४॥१॥

प्रभु कपि नायक बोलि कह्यो है । बरपा गई सरद चतु
भाई अब लौ नहिं सिय सोधु लख्यो है ॥ १ ॥ जा कारन
तजि लोकलान तनु राषि बियोग सख्यो है । ताको तो
कपिराजु भाजु लागि कछु न काज निबख्यो है ॥ २ ॥ सुनि
सुग्रीव सभौत नमित मुष उत्तम न देन चख्यो है । पाइ गये
हरि जूथ देखि उर पूरि प्रमोद रख्यो है ॥३॥ पठये वदि वदि
अवधि दसहुं दिसि चले बल सबनि गख्यो है । तुलसी सिय
लगि भवदधि मानो फिरि हरि चहत मख्यो है ॥ ४॥१६॥

इति श्री रामगीतावल्यां किष्किन्धाकाण्डः समाप्तः ।

प्रश्न ३० । ॥ १ ॥ २ ॥ हरि वानर ॥ ३ ॥ अवधि वदि वदि पठये
अवधि चौपाई रामायण में स्पष्ट है । मास दिवस मई आयेहु भाई ।
दशो दिशा को चलत भए पराक्रम को सब ने गहो है, गोसाई जी
कहत हैं कि जानकी जी के लागि संसार रूप समुद्र को मानो फेर हरि
महा चाहत हैं ॥ ४ ॥ २ ॥

इति श्री रामगीतावलीप्रकाशिकाटीकायां श्रीसीतारामकृपापात्र
श्रीसीतारामीय हरिहरप्रसादकृतौ किष्किन्धाकाण्डः समाप्तः ।

श्रीसीतागमाभ्यां नमः ।

सटीक गीतावली—सुन्दरकाण्ड ।

मूल ।

राग कैदारा—रजायसु राम को जव पायो । गाल सेलि
मुट्टिका मुदितमन पवनपूत सिरनायो ॥ १ ॥ भालुनाथ
नलनील साध चले वली वालि को आयो । फरकि सुभ्रंग भये
सगुन कहत मानो भग मुद मंगल छायो ॥ २ ॥ देखि विवस्व
सुधि पाइ गौध सो सबनि अपनी बलु आयो । सुमिरि राम
तकि तरकि तोयनिधि लंक लूक सो आयो ॥ ३ ॥ पोजत
घर घर जनु दरिद्रमन फिरत लागि धनु धायो । तुलसी
सिय विलोकि, पुलकवी तनु भूरि भाग भयो भायो ॥ ४ ॥ १ ॥

टीका ।

रजायसु २० ॥ १ ॥ २ ॥ मायो कहैं तौल्यौ, तरकि कहैं कूदि, लंक
लूक सो आयो लंका में लूक सम आयो । भाव लूक उत्पात मूचक होत है
॥ ३ ॥ श्रीहनुमानजू श्रीजानकीजू को घर घर खोजत हैं जैसे
दरिद्र को मन धन लागि धायो फिरत है भायो कहैं मन भायो ॥ ४ ॥ १ ॥
देखी जानकी जव जाइ । परम धीर समीरमुख के प्रेम
घर न समाइ ॥ १ ॥ कस सरीर सुभाय सोभित लगी उडि
उडि धूलि । मनहु मनसिजमोहनी मनि गयो भोरे भूलि ॥ २ ॥

रटति निसिवासर निरंतर राम राजिवनयन । जात निकट
न विरहिनी अरि अकनि ताते वयन ॥ ३ ॥ नाथ के गुन-
गाथ कहि वापि दर्ई मुदरो डारि । कथा मुनि उठि लई कर-
पर रुचिर नाम निहारि ॥ ४ ॥ हृदय हर्ष विपाद अति पति-
मुद्रिका पहिचानि । दास तुलसी दसा सो कहि भांति कहै
वयानि ॥ ५ ॥ २ ॥

देखी इ० ॥ १ ॥ स्वाभाविक शोभित जो श्रीजानकीजू तिन को
कृशित जो शरीर है तामें धूरि उड़ि उड़ि लगी है मानो काम भ्रम से
अपने मोहनी मणि को मूलि गयो है ॥ २ ॥ राति दिन निरंतर
श्रीराम राजिवनैन रटति हैं । तात गरम बानी मुनि के विरहिनी अरि जो
वायु सो निकट नहीं जात है । भाव जरि जावे के डर ते ॥ ३ ॥ करवर
श्रेष्ठ कर में ॥ ४ ॥ ५ ॥ २ ॥

राग सौरठ—बोली यली मुदरी सानुन कुसल कोसल-
पालु । अभिय वचन सुनाइ मेटहि विरह ज्वालाजालु ॥ १ ॥
काहति हित अपमान मै कियो होत हिय सोइ सालु । रोप
छमि सुधि करत कबहुं ललित ललितन लालु ॥ २ ॥ परसपर
पति देवरहि का होति चरचा चालु । देखि कहु कीहि हेतु
बोली विपुल वानर भालु ॥ ३ ॥ सीलनिधि समरथ मुसाहिव
दीनबंधु दयालु । दास तुलसी प्रभुहि काहु न कह्यो नेरो
हालु ॥ ४ ॥ ३ ॥

बोलीइ० । श्रीजानकीजू मुदरी से पूछति हैं कि हे मुदरी अनुज-
सहित कोशलपाल को कुशल बोलु ॥ १ ॥ लपनलाल के हित कहते
में मैं अपमान कियो सो सुमिरि हृदै में साल होत है । पति जो श्रीराम
औ देवर जो लखनलाल तिन्ह के आपुस में केहि चाल की चरचा
होति है । हे देखि बहुत वानर भालु केहि हेतु बोलाए । संका । वानर
भालु के बोलाइवे श्रीजानकीजू कैसे जानी । उत्तर । मुदरी दास्ते में

ब्रह्मण जी रहे रहे । "नाथ के गुनगाय कहि कपि दियो मुदरी डारि"
॥ ३१४॥३ ॥

सदल मनपन हैं कुसल हापालु कोमलगाउ । सीलसटन
सनेहमागर सहज सरल मुभाउ ॥ १ ॥ नीद भूप न देय-
रहि परिहरे को पछिताउ । धीर धुर रघुवीर को नहिं सप-
नेहूं चितचाउ ॥ २ ॥ मोधु विनु अनुरोध रिपु को बोधु
विहित उपाय । करत हैं सोई समय साधन फलति बनति
वनाउ ॥ ३ ॥ पठैं कपि दिमि दसहुं जी प्रभु काज कुटिल न
काउ । योनि लियो हनुमान करि सनमान जानि समाउ ॥ ४ ॥
इहैं हों संकीरत कहि कुसलात सियहि मुनाउ । देपि दुर्ग
विनेपि जानकि जानि रिपु गति आउ ॥ ५ ॥ कियो सीय
प्रबोध मुदरी दियो कपिहि लपाउ । पाइ अवसर नाइ सिर
तुलसी सगुन गन गाउ ॥ ६ ॥ ४ ॥

सदल ० । मुदरी की उक्ति कि दलसहित लखनलालसहित
कुशल हूँ कोशलनाथ सो कुशल है ॥ १ ॥ देवर जो लपनलाल तिन
को न नीद है न भूप है औ छोड़ि के जावे को पछिताव है । भाव मर्म
बचन सहि लेत उहां से न जाते तो काहे को दुख भोगते या दूर
जाइ गये नगीच छप काहे न रहे औ धीरन में अग्रवर्ती जे श्रीरघु-
निर निन के चित में सपनो में आनंद नहीं है ॥ २ ॥ रिपु को खबर
प्य विना अनुरोध काहें रोक रहत है अर्थात् कुछ बनत नहीं तब रिपु
बोध में जो विहित उपाय ताको लोक करत हैं सोई उपाय रूप
मयन समय पाय के फलति है औ वनाव बनत है एही न्याय के
नुमार प्रभु ने रिपु के जानिये हेतु दसो दिसा में वानरों को पत्र ।
वानर प्रभु के काज में कुटिल कोऊ नहीं हैं । हनुमान में समाई जानि
बुलाय लियो हुनि सनमान करि के संकेत की वान यदि के हम को
औ करत भये कि हमारी कुशलात जानकी जी को जाय गुनाओ

औ लंका गढ़ को औ विशेष जानकी जी को देखि कै औ रिपु की पराक्रम जानि कै हमारे दिग आओ ॥३॥४॥५॥ एहि प्रकार ते मुदरी ने श्रीजानकी जी को विशेष बोध कियो औ हनुमान को देखाय दियो श्रीहनुमान जू अवसर पाय सिर नाथ कै श्रीराम के गुनसमूह कहन लगे ॥ ६॥४ ॥

सुअन समोर को धीर धुरीन वीर बडोइ । देखि गति सिय मुद्रिका की बाल ज्यों दियो रोइ ॥ १ ॥ अकनि कटु-
बानी कुटिल की क्रोध बिंध्य बढोइ । सकुचि सम भयो ईस आयसु कलस भव जिय जोइ ॥ २ ॥ बुद्धि बल साहस परा-
क्रम अछत राखि गोइ । सकल साज समाज साधक समउ कह सब छोइ ॥ ३ ॥ उतरि तरु ते नमत पद सकुचात सोचत सोइ । चुके अवसर मनहु सुजनहिं सुजन सनमुष होइ ॥ ४ ॥ कहे बचन विनीति प्रीति प्रतीति नीत निचोइ । सीय सुनि हनुमान जान्यो भली भांति भलोइ ॥ ५ ॥ देवि विन कंठूति कहिबो जानिहै लघु खोइ । कहौंगो सुष की समर सरि कालिकारिष धोइ ॥ ६ ॥ कत कहु नहिं बनत हरि द्विय हरय सोक समोइ । कहत मन तुलसीस लंका करौ सघन घमोइ ॥ ७ ॥ ५ ॥

सुअनइ० । धीरन में अग्रवर्ती बडो वीर जो पवन को पूत सो श्रीजानकीजू औ मुद्रिका की कुगति देखि कै जैसे बालक रोवै तैसे रोय दियो ॥ १ ॥ कुटिल रावन की कटुबानी सुनि कै हनुमान जी को क्रोध रूप बिंध्य पर्वत बढ़त भयो पर श्रीराम की आज्ञा रूप अगस्ति को देखि कै सकुचि कै सम है जात भयो ॥ २ ॥ बुद्धि बल साहस पराक्रम के रहते इन सब के छपाय राखे फाँद ते कि सकल साज समाज के साधक समय है अस सब कोई कहत हैं ॥ ३ ॥ इस ते उतरि के श्रीजानकी जी के पद में नमस्कार करत भए औ सो बात

कहवान औ मोचन भए । भाव जब गवन कहु कहत रहा तब कुछ
 बर्या अचमर के चूके पर मानो मुजन के से सन्मुख मुजन होय
 ॥ ४ ॥ मोनि पिश्याम नीनि में निचोरि के नम्र वचन बोले श्रीजानकी
 मोचन सुनि के हनुमान को जान्यो औ यह विचारयो कि अब
 बर्या मर्त्यो भानि ते है ॥ ५ ॥ हनुमान जू बोले कि हे देवि विना
 कानि किए कहिये ते लोग लघु जानिई ताने कालिह समररूपी नदा
 वंशुन की करिखा घोड़ के तब कर्होगो ॥ ६ ॥ हरप, शोक में हृदय
 मिलि रगो है ताने हनुमान जू सो कुछ करन नहीं बनत है । इहां हरप
 वंशुन करि औ शोक दशा देखि । तुलसी के ईश जे हनुमान ते मन में
 कर है कि लंका में सघन घमोड़ करौंगो । भाव अस चौपट करौंगो कि
 करौं जामंगो । घमोड़ फो फोड़ देशवाले भंडभांड फोड़ देसवाले घमोड़
 फोड़ देशवाले फटीला फोड़ देशवाले सत्यानाशी फोड़ देशवाले बंग
 कर है ॥ ७ ॥ ७ ॥

राग केशरा । हों रघुर्वसमनि की दूत । मातु मानु
 प्रतीति जानकि जानु मारुतपूत ॥ १ ॥ मै सुनी याते
 बसैलौ कहि जे निधर नीच । क्यों न मारे गाल बैठो काल
 हाटनि बीच ॥ २ ॥ निदरि अरि रघुवीर बल लै जाउं जौं
 हाँ पाजु । डरौं आयसुभंग ते अरु बिगरिहै सुरकाजु ॥ ३ ॥
 शोधि बारिध साधि रिपु दिन चारि में दोउ बोर । मिल-
 धिनि कपि भालु दल संग जननि उर धरु धीर ॥ ४ ॥ चिच-
 कुरव्या कुसल कहि सीस नायो कीस । सुहृद सेवक नाथ
 को लधि दई अचल असोस ॥ ५ ॥ भये सीतल स्वयन राग
 मन मुने वचन पिथूप । दास तुलसी रही नयननि दरस ही
 भूप ॥ ५ ॥ ६ ॥

हो ६० ॥ १ ॥ चारें असेली अमर्जाद की चारें फाल के मुख में
 चौरि है ताके बीच में वंशुन है तब क्यों न गाल मार । भाव गाऊ

नहीं मारत है सन्निपात करि जल्पत है ॥ २ ॥ श्रीरघुवीर के बल ते
अरि की निरादर करि कै हठि करि जो आप को ले जावें तो श्रीराम
जू की आज्ञाभंग ते डरत हों औ देवतन को काज विगैरेंगे ताते डरत
हों ॥ ३ ॥ इहां चारि दिन अल्प दिन को बोधक है ॥ ४ ॥ चित्रकूट
की कथा अर्थात् जयंत की कथा औ श्रीराम की कुशल कहि के हनुमान
ने शीस नवाए । चित्रकूट की कथा जो कहे ताको यह भाव कि तुम्हारे
हेतु इन्द्र के घेरा की कैसी दुर्दशा किए तब और की कहा चली ॥५॥६॥

तात तोहू सों कहत झोति हिये गलानि । मन को
प्रथम पनु समुझि अछत तन लखि नई गति भई मति
मलानि ॥ १ ॥ प्रिय को वचन परिहख्यो जिय के भरोसि
संग चली वन बडो लाभ जानि । प्रीत विरह तौ समेक
सरयसु सुत ओसर कां चूकियो सरिस न जानि ॥ २ ॥
आरजसुअन के तौ दया दुअवनहु पर मोहि सोध मोते सब
विधि नसानि । आपनौ भलाई भलो कियो नाथ सब ही
को मेरे ही अदिनवस विसरौ वानि ॥ ३ ॥ नैम तो पपीहा
ही के प्रेम प्यारी मीन ही के तुलसी कह्यो है नीके हृदय
जानि । इतनी कह्यो सो कह्यो सोय क्योंही त्यांही रही
प्रीति परि सहो सो न वसानि ॥ ४ ॥ ७ ॥

तात ३० । हे तात तुमहें से कहत हृदय में गलानि होति है । मन
को जो प्रथम पनु रह्यो भाव श्रीराम विनु हम निभय नारों सो तन
को विद्यमान समुझि के यह नई गति देखि के हमारी गति मजान भई
॥ १ ॥ प्रिय कहत रहे कि तुम घर में रहो नेहि वचन को त्याग्यो
निभये के भरोसे मे औ वन में बड़ा व्याध जानि के भोग पजित्त पर
गनेह को गरषस जो पीतम तिन को विरह भयो तब हे तुम अरमान
पुनरे मगि रहनि नहीं है । भाव विदग्धने गरीर छोड़ देना रहा । का
‘नान्दाविन्द ने गनेह सर्वग’ पाठ होय तो भग्न भये करना कि वहाँ

जब मन में जानी जान न्याय जानी कि प्रीतम के विरह ते प्रीतम को
 नर सखम है । भाव नाने संग चलने चाहिए सो प्रीतम को विरह
 ने भयो ताको हम मदे याने अवसर चुकियो सरिस हानि नहीं है
 नन त्याग देना रहा ॥ २ ॥ आर्ज जो श्रेष्ठ दशरथ महाराज तिन
 दुष्ट को दया दुष्टो पर है । भाव नव जो मरनागत हैं तिन को को
 को । सो ते सब दिनमाय गई है याने हम को सोच है आपने भलाई ते
 नव को भलो कियो है पर मेरी ही अदिनवश नाथ हूँ की भलाई
 की बानि विसरि गई है ॥ ३ ॥ नेम तो पर्याई को ठीक है । भाव बाको
 प्रीतम पेय केतनो निरादर करन है ताको नहीं मानत है औ प्यारी
 प्रीतमी को प्रेम है भाव प्रीतम जो जल तेहि बिजु नहीं जीअत है । नीके
 हृदय में आनि के जानकी जू ने यह कही है । यतनी कही सो कही
 जानकी जू ज्यों के त्यों रही भाव काष्ठवत् है रही । प्रीति की तो सही
 प्रीति अर्थात् अपनपो भूलि गई पर विधाता सो कुछ न बसान ॥४॥७॥

मातु काहे को कहति अति वचन दीन । तब की तुहीं
 जानति अब को होहि कहत सब के जिय की जानत प्रभु
 प्रवीन ॥ १ ॥ ऐसे तो सोचहि न्याय निठुर नायक रत
 सलभ कुरंग प्रग कमल मीन । करुनानिधान को ती ज्यों
 ज्यों तनु छीन भयो त्यों त्यों मन भयो तेरे प्रेम पीन ॥ २ ॥
 सिय को सनेह रघुवर की दसा सुमिरि पवनपूत देख्यो
 प्रीतिलोन । तुलसी जन को जननिह्र प्रबोध कियो समुक्ति
 तात जग विधिअधीन ॥ २२॥८ ॥

मातु ३० । हे मातु काहे को अति दीन वचन कहाति हो । तब की
 तुहीं जानति हो । भाव कैसो प्रीति तुम्हारे में रही औ अब जैसी है
 हम हय कहत हैं औ सब के जिय की प्रभु प्रवीन जानत हैं । भाव तुम
 को विरहिनी जानि क्यों न विरही होहिगे ॥ १ ॥ जस तुम सोचाति
 सो हम निठुर नायक में जे रत हैं ते सोचहि तो न्याय कहें युक्त हैं जैसे
 कुरंग, पर्याहा, हरिन, कमल, मीन को निठुर नायक दीपसिखा, मेघ,

राग, सूर्य, जल ये सब हैं ते सोचहिं औ करुनानिधाने श्रीराम को तो
ज्यों ज्यों तन छीन भयो त्यों त्यों तुम्हारे प्रेम में मन पीन भयो ॥२॥
श्रीजानकी जू को नेह औ रघुवर की दशा सुमिरि के जब पवनपूत
प्रीति में लीन भयो तब जानकी जू देखि हनुमानजी को प्रबोध कियो
कि हे तात विधाना के आधीन जग जानो ॥ ३ ॥ ८ ॥

राग जयतिश्री । कहो कपि कब रघुनाथ कृपा करि
हरिहैं निज वियोगसंभव दुष । राजिवनयन मयन अनेक
छवि रवि कुल कुमुद सुपद मयंक सुष ॥ १ ॥ विरह-अनल
सहाय समीर निज तनु जरिबे कहं रही न कहु संक । अति
बल जल वरषत दोउ लोचन दिन भर रहनि रहत येकहि
तक ॥ २ ॥ सुदृढ ज्ञान अवलंबि सुनहु सुत राखति प्रान
विचारि दहन मत । सगुन रूप लीला विलास सुष सुमिरन
करत रहत अंतरगत ॥ ३ ॥ सुनु हनुमंत अनंत बंधु करुना
सुभाव सुशील कोमल अति । तुलसिदास एहि वास जानि
जिय बर दुष सहैं प्रगट न कहि सकति ॥ ४ ॥ ९ ॥

कहो १० । निज वियोग सम्भव अपने वियोग ते उत्पत्ति ॥ १ ॥
निज स्वास रूप वायु के सहाय युक्त जो विरहानल तामें तन के जरिबे
कहं कहु संदेह न रही । पर दिन औ राति एकै तार से दोउ लोचन
मवल जल वर्षत हैं । भाव नैन रूप भेष जरिबे नहीं देत हैं ॥ २ ॥ हे
सुत सुन्दर दृढ़ ज्ञान को अवलम्बन करि के भाव राघो जा को अपना-
वत हैं ताको त्यागते नहीं एहि ज्ञान के अवलम्बन करि जराइवे के मत
ते विचारि के प्रान को राखति हैं औ भीतर सगुन रूप के लीला
विलास को सुख सुमिरन करत रहत हैं ॥ ३ ॥ हे हनुमंत लपनलाल
भाई कारुण्य सुशील औ अति कोमल हैं एहि वास ते प्रगट नहीं
सकति हैं भाव तुम जब जाय कहोगे तब विकल होय जाहिगे
ते बर दुख सहत हैं ॥ ४ ॥ ६ ॥

राग कैदारा । कवहुं कपि राघव आवहिंगे । मेरे
 नयन चकोर प्रोतिवस राकाससिमुष देपरावहिंगे ॥ १ ॥
 मधुप भरान मोर चातक हँ लोचन बहु प्रकार धावहिंगे ।
 अंग अंग छवि भिन्न भिन्न सुप निरपि निरपि तहं तहं छाव-
 हिंगे ॥ २ ॥ विरह अगिनि जरि रहौ लता ज्यों कृपादृष्टि जल
 पलुहावहिंगे । निजवियोगदुप जानि दयानिधि मधुरवचन
 कहि समुझावहिंगे ॥ ३ ॥ लोकपालु सुर नाग मनुज सब
 परे बँदि कव मुकुतावहिंगे । रावनवध रघुनाथ विमल जस
 नारदादि मुनि जन गावहिंगे ॥ ४ ॥ यह अभिलाष रङ्गनि
 दिन मेरे राज विभोपन कव पावहिंगे । तुलसिदास प्रभु मोह-
 जनित भ्रम भेद बुद्धि कव विसरावहिंगे ॥ ५ ॥ १० ॥

कवहुं १० । हमारे प्रीतिवश नैन रूप चकोर को मुख रूप पूर्ण-
 चन्द्र को कव देखरावंगे । राका नाम पूर्णवासी को है ॥ १ ॥ लोचन
 जो सो भ्रमर हंस मोर पपीहा है के बहुत प्रकार ते कव धाँगे औ
 अंग अंग की छवि में भिन्न भिन्न मुख देखि देखि के तहाँ तहाँ कव
 छाय रहेंगे । भाव भ्रमर है मुख नेत्र कर पद रूप कमलन में औ हंस
 है के नाभी रूप सर में औ मोर है के गंभीर गिरा रूप गर्जन में औ
 पपीहा है स्वाम शरीर रूप घन में कव छावंगे ॥ २ ॥ ३ ॥ मुक्तावहिंगे
 छोड़ावहिंगे ॥ ४ ॥ गोसाईजी कहत हैं कि जानकीजी कहति हैं कि
 मधु हमारे मोह जनित भ्रम को अर्थात् कनकमृग विषयक जो भ्रम
 भयो ताको औ भेद बुद्धि को अर्थात् लक्ष्मणजू में जो आनि भाँति की
 बुद्धि भई ताको कव विसराइ देहिंगे । भाव यह दूनों दोष हमारे कव
 भूलि जाहिंगे ॥ ५ ॥ १० ॥

सत्य वचन सुनु मातु जादना । जन के दुप रघुनाथ
 दुपित अति सहज प्रकृति करुनानिधान की ॥ १ ॥ तुव

वियोग संभव दारुन दुःख विसरि गई महिमा सुवान की ।
नत कहुं कहं रघुपति सायक रवि तम अनीक कहं जातु-
धान की ॥ २ ॥ कहं हम पसु सायक चंचल वात कहैं
विद्यमान की । कहं हरि सिव अज पुज्य ज्ञान धन नहिं
विसरति वह लगनि कान की ॥ ३ ॥ तुव दारसन संदेश
सुनि हरि को बहुत भई अवलंब प्रान की । तुलसिदास गुन
सुमिरि राम के प्रेममगन नहिं सुधि अपान की । ५॥१॥

सत्य वचन ३० ॥ १ ॥ तुम्हारे वियोग ते उत्पन्न जो कठिन दुःख
ताते सुंदर जो वान की महिमा सो विसरि गई । नहिं तो तुम ही कहो
कहां रघुपति को शायक सूर्यसम कहां राक्षसों की सेना तमसम ॥ २ ॥
कहां हम पशुन में चंचल वांदर औ कहां विष्णु शिव ब्रह्मा करि के
पूज्य ज्ञानस्वरूप श्रीराम । वात कहैं मैं विद्यमान की हमारे पर जो बीती
है सो वात कहत हौं जेहि प्रकार ते हमारे कान में लागि वात कहे सो
विसरत नहिं । इहां श्रीराम की अति करुना जनाए । तथा च स्मृतिः ।
“ब्रह्मविष्णुमहेशाद्या यस्यांशा लोकसाधकाः । तमादिदेवं श्रीरामं विशुद्ध-
स्परमम्भजे” ॥ १ ॥ ३ ॥ तुम्हार दर्शन तुम्हार संदेश सुनि के हम
जानत हैं कि श्रीराम को मान की बहुत अवलंब भई । हनुमान जी श्री-
राम को गुनगन सुमिरि के प्रेम में मगन भये ताते अपनपो भूलि गए
॥ ४ ॥ ११ ॥

राग कान्हरा । रावन जो मैं राम रन रोषि । की संहि
सकै सुरासुर समरथ विसिध काल दसननि ते छोपे ॥ १ ॥
तपबल भुजबल कै सनेहबल सिव बिरंचि नौकी विधि
तोपे । सो फल राज समाज सुखन जन आपुन नास आपन
पोपे ॥ २ ॥ तुला पिनाक साहु नृप विभुजन भट बटोरि
सब के बल जोपे । परसुराम से सूर सिरोमनि पल में भये
पैत के से धोपे ॥ ३ ॥ कालि की वात बालि की सुधि करि

समुक्ति हिताहित पोलि भरीये । कछो कुर्मन्विन को न
मानियै बड़ी हानि जिय जानि त्रिदोये । ४॥ जासु प्रसाद जन्मि
अग पुरुषनि सागर सृजि पने अरु सोये । तुलसिदास सो
स्वामि न सूभ्यो नयन बौस मंदिर कैसे मोये ॥ ५ ॥ १२ ॥

रावन ३० । अब श्रीहनुमान जी औ रावन को संवाद लिखत
है ॥ १ ॥ तपबल ते कै भुजबल ते कै सनेहबल ते शिव विरंचि
को नौको विधि से प्रसन्न किए, ताको फल राज समाज औ पुत्र सेवक
पाए सो आप ने पोपे को आपुहि पति नासो ॥ २ ॥ राजा जनक
रूप साहु ने त्रिभुवन के भट बटोरि के सब के बल को पिनाक रूप
तराजू पर जोपे, भाव सब का पलरा उठि गया, श्रीरामहि का पलरा
न उठा औ जेहि श्रीराम के आगे मूरशिरोमणि परसुराम से पल में
खेत के धोपे से भए, भाव देख दी मात्र के रहि गए ॥ ३ ॥ अब ही
बाल की बात कालि की है भाव थोड़े दिन की है ताको मुधि करि
जे हृदय रूप श्रोणा को पट खोलि के हित अहित समुक्षि कुर्मन्विन को
त्रिदोये जानि अर्थात् कालवश जानि इन को क्यों न मानिए कोई
ते कि बड़ी हानि है ॥ ४ ॥ जेहि के प्रसाद ते जगत में पुरुष जनम
के समुद्र को उत्पन्न किए औ खंदे औ सोखे । समुद्र को छेने मियमन
ने, औ खोदे सगर महाराज के पुत्रों ने, सोखे अगस्ति ने । मांगे कई
श्रोते ॥ ५ ॥ १२ ॥

राग मारु—जौं ही प्रभु आयमु लै चलतो । तौ यहि
रिसि तोहि सहित दसानन जातुधान दल दलतो ॥ १ ॥
रावन सो रसरज सुभट रस सहित लंक पल पलतो ।
करि पुट पाक नाकनायक हित घने घने घर घलतो ॥ २ ॥
बहे समाज लाज भाजन भयो बड़ी काज विनु दलतो ।
लंकनाथ रघुनाथ वयर तरु बाजु फैलि पुलि दलतो ॥ ३ ॥
काल कर्म दिगपाल सकल लग लाल लामु करतलतो ।

भाव जो तन न छूटा तो कहा प्रेम ॥ ३ ॥ करुणा श्रीजानकी जू की
दशा देखि कोप रावण पर लाज जस चाहि तस न करने को भय
विनु आज्ञा लंका जराइवे को तासो भरयो चरण कमल सिर नाय के
मौनहीं कपि गमन कियो यह समय स्नेह को सर्वस्व है औ तुलसी की
रसना रूखी है ताही ते गायो परत है । भाव सरस होती तो वाझ जाती
॥ ४॥१५ ॥

राग वसंत—रघुपति देपो आयो आयो हनुमंत । लंकेस
नगर पैल्यो वसंत ॥ श्रीरामराजहित सुदिन सोधि । साथी
प्रबोधि लांघो पयोधि ॥ १ ॥ सिय पाय पूजि आसिपा पाय ।
फल अमिय सरिस पाये अघाय ॥ कानन दलि होरो रचि
बनाय । हठि तैल बसन बालधि बंधाय ॥ २ ॥ दिय डोल
बलि संग लोग लागि । बरजोर दर्ई चहुंओर आगि ॥ आपत
आहुति किये जातुधान । लपि लपट भभरि भारि विमान ॥ ३ ॥
नभ तल कौतुक लंका विलाप । परिनाम पचहिं पातकी
पाप ॥ हनुमान हांक सुनि बरष फूल । सुर बार बार बरनहिं
लंगूल ॥ ४ ॥ भरि भुवन सकल कल्याण धूम । पुरं जारि
बारिनिधि बोरि लूम ॥ जानको तोपि पोषेउ प्रताप । जै
पवनसुवन दलि दुअनदाप ॥ ५ ॥ नाचहिं कूदहिं कपि
करि विनोद । पीवत मधु मधुवन मगन मोद ॥ यों कहत
लपन गहे पाय आय । मनिसहित मुदित भैय्यो उठाय ॥ ६ ॥
लगे सजन सैन भयो हिय हुलास । जय जय जस गावत
तुलसिदास ॥ ७ ॥ १६ ॥

रघुपति ३० ॥ १ ॥ साथी जामवंत आदि ॥ २ ॥ बालधि लंगूर
॥ ३ ॥ आहुति को आपत रूप निसाचरों को किए । भभरि भड़कि
परिनाम पचहिं पाप ने पातकी अंत में पचत हैं तो क्यों न लंका में

। तोर ॥ ४ ॥ नृपि नंगुर ॥ ५ ॥ पोप्यो प्रताप नंका जराइ
 गंगन मनाप को दुष्ट कियो । दुअन टाप कहं दुष्टन को अहंकार ॥ ६ ॥
 दुहापनि । शंका । ए मय नक्ष्मण जी कैमे जाने । उत्तर । सर्व-
 जा करि ॥ ७ ॥ १६ ॥

राग अयतिशयो । गुनहु राम यिस्वासधाम हरि जनक-
 सुता प्रति दिपति जैसे महति । हे सौमित्रि बंधु करुना-
 निधि मन महु रटति प्रगटहु नहिं कहति ॥ १ ॥ निज पद
 कमल बिलोक मोकरा नयननि चारि रहत न एक छन ।
 मनहु नोत नौरज समि संभव रवि वियोग दोउ स्रवत सुधा-
 कन ॥ २ ॥ यहु राखसो सहित तरु के तर तुम्हरे विरह
 निज जन्म दिगोवति । मनहु दुष्ट इन्द्रिय संकट महं बुद्धि
 विवेक उदय मगु जोवति ॥ ३ ॥ सुनि कपिवचन विचारि
 हृदय हरि अनपाइनी सदा सो एक मन । तुलसिदास दुष
 दुपातीत हरि मोच करत मानहु प्राकृत जन ॥ ४ ॥ १७ ॥

हे सौमित्र बंधो हे करुणानिधि अस जानकी जू मन महं रटति हैं
 ओ प्रगट नहीं कहति हैं भाव, अति वियोग ते बोलि नहीं सफति हैं
 वा राखसन के भय ते ॥ १ ॥ अपने चरणकमल को देखत रहति हैं
 नीचे सिर करना एक शोकमुद्रा है औ शोक में रतह हैं औ आखिन
 में आंसु एक छन टिकत नहीं मानो चंद्रमा ते उत्पन्न जे दोऊ स्याम
 रंग के कमल ते सूर्य के वियोग ते सुधाकण श्रवत हैं । इहां दोऊ श्याम
 कमल नेत्र हैं । मुख समि है । रवि श्रीराम हैं । सुधाकण आंसु हैं ॥ २ ॥
 तरु के तर में बहुत राखसिन के सहित तुम्हारे विरह में आपन जन्म
 बिनावति हैं मानो बुद्धि दुष्ट इन्द्रिय के संकट में विवेक उद की राह
 ताकति हैं । इहां दुष्टेन्द्रि राखस हैं, पुद्धि श्रीजानकी जू हैं औ विवेक
 श्रीरायव हैं ॥ ३ ॥ हरि कपि की बातें सुनि कै औ हृदय में अस विचारि
 के कि सो जानकी जू एक मन में सदा अनपायनी कहें नागरहित

भाव जो तन न छूटा तो कहा प्रेम ॥ ३ ॥ करुणा श्रीजानकी जू
दशा देखि कोप रावण पर लाज जस चाहिए तस न करने को भ
विनु आज्ञा लंका जराइवे को तासो भरयो चरण कमल सिर नाप
मौनहीं कपि गपन कियो यह समय स्नेह को सर्वस्व है औ तुलसी क
रसना रूखी है ताही ते गायो परत है । भाव सरस होती तो वासिजान
॥ ४॥१५ ॥

राग वसंत—रघुपति देपो आयो आयो हनुमंत । लंके
नगर पैल्यो वसंत ॥ श्रीरामराजहित मुदिन सोधि । साथी
प्रबोधि लांघो पयोधि ॥ १ ॥ सिय पाय पूजि आसिया पाय ।
फल अमिय सरिस पाये अघाय ॥ कानन दलि होरो रवि
बनाय । हठि तेल बसन बालधि बंधाय ॥ २ ॥ दिय ठोल
चले संग लोग लागि । वरजोर दर्ई चहुंओर आगि ॥ आपत
आहुति किये जातुधान । लपि लपट भभरि भारे बिमान ॥ ३ ॥
नभ तल कौतुक लंका बिलाप । परिनाम पचहिं पातको
पाप ॥ हनुमान हांक सुनि वरष फूल । सुरं बार बार वरनहिं
लंगूल ॥ ४ ॥ भरि सुचन सकल कल्याण धूम । पुर जारि
वारिनिधि वोरि लूम ॥ जानको तोपि पोयेउ प्रताप । कै
पवनसुचन दलि दुचनदाप ॥ ५ ॥ 'नाचहिं कूदहिं' कपि
करि विनोद । पीवत मधु मधुवन मगन मोद ॥ यों कइत
लपन गहे पाय आय । मनिसहित मुदित भैव्यो उठाय ॥ ६ ॥
लगे सजन सैन भयो द्विय हुलास । जय जय जस गावत
तुलसिदास ॥ ७ ॥ १६ ॥

रघुपति ३० ॥ १ ॥ साथी जामवंत आदि ॥ २ ॥ बालधि संग
॥ ३ ॥ आहुति को आपत रूप निसाचरों को किए ।
परिनाम पचहिं पाप ने पानकी अंत में पचत हैं तो

धरि के उर पर गिरावति हैं मानो हृदय में विरह के तुरन्त को घाय
देति के धीरज धरि के तकि तकि के ततारनि कहैं छीट देति हैं । अंतर
गति हारति भीतर से हारति हैं ॥ ३ ॥ १९ ॥

तुम्हरे विरह भई गति जौन । चित दै सुनहु रामकामना-
निधि जानौ काहु पै सकों काहि छौ न ॥ १ ॥ लोचन नीर
रूपन के धन ज्यों रहत निरंतर लोचन यौन । हा धुनि
पगी लाज पिंजरौ महं रापि छिये बडे बधिक छठि मौन ॥ २ ॥
जेहि बाटिका बसति तहं पग मृग तजि तजि भजि पुरातन
मौन । स्वास समीर भेंट भई भोरहुं तेहि मगु पगुं न धख्यो
तिहु पौन ॥ ३ ॥ तुलसिदास प्रभु दसा सीय की मुप करि
कहत होति अतिगौन । दीजि दरस दूरि कीजै दुप छौ तुम
भारति भारतदोन ॥ ४ ॥ २० ॥

तुम्हरे ३० । हे करुणानिधि राम तुम्हरे विरह में जानकी जू की जौ
गति भई हैं ताको चित दै के सुनहु हम फलु जानत हैं पै कहि नहीं
सकत हैं ॥ १ ॥ निरंतर नेत्रन के कोन में नेत्रन को जल रस दे
जैसे कृपिन को धन कोने में रहत है । लाजरूपी पिंजरा महं रापुनि
रूपी पक्षिणी को बड़े बधिक रूप मान ने छठि करि के राग्य है ॥ २ ॥
जेहि बाटिका में श्रीजानकी जू बसति हैं तरां ते रग मृग अपना
माचीन भौन छोड़ि के भजे । भाव शरीर से विरहानल की तपनि जो
छडि है ताको न सहि सकी । स्वास औ समीर ते जो भूगीठ के भेद
भई तो फेर तेहि मग तीनों समीर नील मंद गुमंर पग न परदो ।
भाव एक धार काहू भाग से बधि गए फेर जाइवे ने स्वास जगद
देगो ॥ ३ ॥ हे प्रभु सीय की जो दसा है मो मुप करि करिने ने
अनि गाँण होनि है दरशन दीजे औ दुख को दूर कीजे दोरे ने छि
हम आर्ष की आर्षि दाहक हो ॥ ४ ॥ २० ॥

कपि के मुनि कल कोमल यदन । प्रेमदुलकि सब दात

भक्ति में स्थित हैं। गोसाईं जी कहत हैं कि दुख सुख ते रहित जो हरि
सो प्राकृत जन सम शोच करत हैं ॥ ४१७ ॥

राग केदारा—रघुकुलतिलक वियोग तिहारे । मैं देखी
जब जाइ जानकी मनहुं विरहमूरति मनमारे ॥ १ ॥ चित्र
से नैन भर गटे से चरन कर मटे से सवन नहि सुनति सु-
कारे । रसना रटनि नाम कर सिर चिर रहै नित निजपद
कमल निहारे ॥ २ ॥ दरसन आस लालसा मन मह राखे
प्रभुध्यान प्रान रपवारे । तुलसिदास पूजति चिजटा नीके
रावरे गुनगन सुमन सवारे ॥ ३ ॥ १८ ॥

रघुकुल ३० । मानो विरह की मूरति हैं ताह में उदास ॥ १ ॥
तसवीर के नेत्र सम नेत्र हैं । भाव अचल है रहे हैं औ गढ़े से चरन
कर हैं । भाव चेष्टा रहित हैं । मूदे सम कान हैं । ताते धीरे से को
पुकारे से भी नहीं सुनति हैं । जीभ ते नाम को रटति हैं औ बहुत दे
तक माथ पर हाथ धरे रहाति हैं औ अपने चरणकमल को सदा निहारे
रहाति हैं ॥ २ ॥ आप के दर्शन की आशा औ लालसा मन में राखे
हैं । ताते प्राण के रक्षा करनिहारो प्रभु को ध्यान राखे हैं औ रावरे
गुनगन रूप संवारे भए फूल ते वृजदा नीके पूजति हैं ॥ ३ ॥ १८ ॥

अतिहि अधिक दरसन की आरति । रामवियोग असोक
विटपतर सौय निमेष कल्पसम टारति ॥ १ ॥ बार बार वर-
वारिज लोचन भरि भरि बरत वारि उर टारति । मनहुं
विरह के सद्य घाय हियें लपि तकि तकि धरि धीरे तंतारति
॥ २ ॥ तुलसिदास यद्यपि निसिवासर कन कन प्रभु मूरतिहि
निहारति । मिटति न दुसह तापतउ तनु की यह विचारि
अंतरगति हारति ॥ ३ ॥ १९ ॥

आति ३० ॥ १ ॥ बार बार श्रेष्ठ कमल लोचन में गरम जल भारि

हैं हे नर नर निम्न के हैं ताको इतर के विरह के मुग्ध को पाव
हैं हे नर नर निम्न के हैं ताको इतर के विरह के मुग्ध को पाव
हैं हे नर नर निम्न के हैं ताको इतर के विरह के मुग्ध को पाव
हैं हे नर नर निम्न के हैं ताको इतर के विरह के मुग्ध को पाव ॥ ११ ॥

हृदय विरह भई गति होन । चित है मुग्ध रामदासना-
निधि भागो दृष्ट है भरी कहि हो न ॥ १ ॥ लोचन नीर
हृदय के धन क्यों रहत निरंतर लोचन कीन । हा धुनि
परा काज पिंजरी मरुं रापि छिद्ये दृष्ट अधिक हठि मौन ॥ २ ॥
नेहि दाटिका घसति तहं पग मृग तजि तजि भजे पुरातन
मौन । स्वास समीर भेंट भई भोरहुं तेहि मगु पगुं न धखी
तिहु पौन ॥ ३ ॥ तुलसिदास प्रभु दमा सीय की सुप करि
करत होति अतिगौन । दीज दरम दूरि कीजै दुप ही तुम
पारति पारतहोन ॥ ४ ॥ २० ॥

हृदय १० । हे कल्यानिधि राम तुमो विरह में जानकी जू की जो
गति भई है ताको चित है के मुग्ध दृष्ट कछु मानत है पै कहि नहीं
मन हो ॥ १ ॥ निरंतर नेयन के कोन में नेत्रन को जल रहत है
जैसे कपिन को धन कोने में रहत है । लाजरूपी पिंजरा महुं हाधुनि
रूपी पक्षिणी को घटे अधिक रूप मौन ने हठि करि के राखी है ॥ २ ॥
नेहि दाटिका में श्रीजानकी जू घसति है तहां ते खग मृग अपना
मार्यान मौन छोड़ि के भजे । भाव शरीर से विरहानल की तपनि जो
छडनि है ताको न सहि सकी । स्वास औ समीर ते जो भूलींउ के भेंट
भई तो फेर तेहि मग तीनों समीर शीतल मंद सुगंध पग न धरयो ।
भाव एक बार काहू भाग से बधि गए फेर जाइवे ते स्वांस जलाइ
देगो ॥ ३ ॥ हे प्रभु सीय की जो दशा है सो मुख करि कहिबे ते
अनि गौण होति है दरशन दीजे औ दुख को दूर कीजे काहे ते कि
दुप आर्च की आर्चि दाहक ही ॥ ४ ॥ २० ॥

कपि के मुनि कल कोमल वयन । प्रेमपुलकि सब गात

सिधिल भये भरे सलिल सरसीकहनयन ॥ १ ॥ सियवियोग-
सागर नागर मनु बूडन लग्यो सहित चितचयन । लहरी
नाव पवनजप्रसन्नता वरवस तहां गह्यो गुनमयन ॥ २ ॥
सकत न वृष्णि कुसल वृष्णे त्रिनु गिरा विपुल व्याकुल उर
चयन । ज्यों कुलीन सुचि सुमति वियोगिनि सनमुख सहै
विरह सर पयन ॥ ३ ॥ धरि धरि धीर वीर कोसलपति किये
यत्न सखे उतरु न दयन । तुलसिदास प्रभु सपा अनुज र
सयनहिं कह्यो चलहु सजि सयन ॥ ४ ॥ २१ ॥

कपि ६० ॥ १ ॥ श्री जानकी जू के वियोग रूपी समुद्र में श्रीराम
जू के मन जो नागर सो अपने चित्त के आनन्दसहित बूडन लग्यो
तहां पवनसुत की प्रसन्नता रूप नौका लहरी पर तहज्ज वरवस ते काम
ने गुन को गह्यो । भाव मन को खींच्यो पवनजप्रसन्नता को नजका
कहिये को यह भाव कि इन की प्रसन्नता ते जानि परत है शीघ्र रावण
जीत्यो जायगो ॥ २ ॥ श्रीराम कुशल नहीं बूझि सकत हैं औ कुशल
बूझे बिना उर रूप घर में बानी अति व्याकुल है । जैसे कुलीन पवित्र
सुंदर मतिवाली वियोगिनी नायिका विरह को चोखो बान सन्मुख सहै
है । भाव कुछ उपाय नहीं करि सकति है ॥ ३ ॥ ४ ॥ २१ ॥

राग मारु । जय रघुवीर पयानो कौन्ही । कुक्षित मिधु
ढगमगत महीधर सजि सारंग कर लौन्ही ॥ १ ॥ सुनि कठोर
टक्कोर घोर अति चौके विधि त्रिपुरारि । जटापटल तै चली
सरसरी सवात न संभु संभारि ॥ २ ॥ भये विकल दिगपाल
संवाण भय भरे भुवन दस चारि । परभर लंक ससंक दसा-
नन गर्भ सवहिं भरिनारि ॥ ३ ॥ कटकटात भट भाहु
विकट मकट करि कहरिनाद । कूदत करि रघुनाथ सपथ
उपरीउपरा वदि याद ॥ ४ ॥ गिरि तरु धर नय सुप्र कराल

एद कोलहु करत विपाद । चले तस दिसि गिसिभरि धरु
 धरु कहि को घराक मनुजाद ॥ ५ ॥ पवन पंगु पावक पतंग
 भनि दुरि गए यके विमान । जाचत सुर निमेष सुरनायक
 नयन भार अकुलान ॥ ६ ॥ गये पुरि सर धूरि भूरि भय
 भय बल जलधि समान । नभ निमान हनुमान हांक सुनि
 समुझत कोउ न अपान ॥ ७ ॥ दिग्गज कमठ कोल सहसा-
 नन धरत धरनि धरि धीर । वारहिं वार अमरपत करपत
 करके परी सरीर ॥ ८ ॥ चलो चमू चहुं ओर सोर कहु
 वनै न वरनत भीर । झिलझिलात कसमसत कोलाहल
 होत नीरनिधितीर ॥ ९ ॥ जातुधान पति जानि काल-
 वस मिले विभीषन भाइ । सरनागतपालक कृपाल कियो
 तिलक लियो अपनाइ ॥ १० ॥ कौतुक ही वारिधि दंभाइ
 उतरे सुबेलतट जाइ । तुलसिदास गठ देवि फिरे कापि
 प्रभु भागमन सुनाइ ॥ ११ ॥ २२ ॥

जब १० । छुभित कहैं चलायमान ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ केहरिनाद
 सिनोद उपरिउपरा चढ़ा चढ़ी ॥ ४ ॥ धरि धागन किए, रद दात,
 वराक तुच्छ, मनुजाद राक्षस ॥ ५ ॥ वायु बंद है गयो, अग्नि मूय चन्द्रमा
 सब छिवि गए, विमान थकि गए, देवता निमेष जाचत भए, औ इन्द्र
 नैनन के भार ते अकुलाय उठे । भाव यहु नेवन में धूरि परी जाने ॥ ६ ॥
 धूरि से तलाव पुरि गए, परवत औ बल सब समुद्र के समान है गए ।
 पाव चरनन के आघात में आकाश में नगारा औ हनुमान जू को हांक
 एनि के कोऊ अपनपो नहीं समुझत है । अर्थात् देहाध्याम रहित भए
 ॥ ७ ॥ दिग्गज कमठ वाराह शेष धीर परि के भूमि को धरत है औ
 सरीर में कहकै परी है ताने बारंबार आमर्षयुक्त होइ खींचन है । अर्थात्
 सरीर को सीधा करत है ॥ ८ ॥ कसममग एक में एक दिजि गए है
 जाने ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ २२ ॥

राग असावरी । आए दूत देखि सुनि-सोच-सठ मन में ।
 बाहिर बजावै गाल भालु कपि कालवस मोसे वीर सो
 चहत जीत्यो रारि रन में ॥ १ ॥ राम छाम लरिका लपन
 बालिबाल कहि बालि को गनत रिच्छ जल ज्यों न घन में ।
 काज को न कपिराज कायर कपिसमाज मेरे अनुमान
 इनुमान हरि गन में ॥ २ ॥ समय सयानी रानी मृदुबानी
 कहैं पिय पावक न होहि जातुधानबेनुवन में । तुलसी
 जानकी दिये स्वामी सो सनेह किये कुसल न तरु सब छै है
 छार छन में ॥ ३॥२३ ॥

आए ३० ॥ १ ॥ क्षाम कहैं दुर्बल, बालिबालक अंगद, जल ज्यों
 न घन में जैसे बेजल को बादर बेगनती को होत है । हरिगन वानर
 को समूह ॥ २ ॥ राक्षस रूप जो वांस का वन है तामें अग्नि मति
 होहि ॥ ३ ॥ २३ ॥

आपनो आपनो भांति सब काहू कही है । मंदोदरी
 मंदोदर मालिवान महामति राजनीतिपाहुंछि जहां लो
 जाकी रहो है ॥ १ ॥ महामद अंध दसकंध न करत कान
 मौज्यस नीचु इठि कुगहनि गही है । दंसि कहैं सचिव
 सयाने मों सो यों कहत चहत मेरु उडन बडो बयार बही
 है ॥ २ ॥ भालु नर वानर अछार निछरनि को सोऊ नृप बाल-
 कनि मांगो धारि लही है । देखो काल कौतुक पिपोनकनि
 पछ लागे भाग मेरे लोगनि के भई चित चही है ॥ ३ ॥
 तोमो न तिगोक पाजु साहम समाजु माजु महाराजु पायसु
 भो छोड़े सोड़े सहो है । तुलसी प्रनाम कै विभीषन विनोति
 कहैं प्याग देखे ताग कपि केनि लंका दही है ॥ ४ ॥ २४ ॥

आपना ३० । धारि कहैं फौज अपर पद सु० ॥ ४ ॥ २४ ॥

दमरो न देपियत साहिव सम रामै । वेदज पुरान
 कोविद विरतरत जाको जमु सुनत गावत गुन घामै
 ॥ माया लोच जग जाल सुभाव करम काल सब
 नामकु सब मै मय जामै । विधि से करनिहार हरि
 पानिहार हर से हरनिहार जपै जाके नामै ॥ २ ॥ सोई
 वय जानि जन की विनती मानि मतो नाथ सोई जाते
 परिनामै । सुभटसिरोमनि कुठार पानि सारिपेहुं
 लोपाई दृष्टां किये सुभ सामै ॥ ३ ॥ वचनविभूषन
 पन वचन सुनि लागें दुप दूषन से दाहिनेउ वामै ।
 दुस्रो हुमकि हिये हन्यो लात भले तात चल्थो सुरतरु
 तजि चोर घामै ॥ ४ ॥ २५ ॥

दूसरी ३० । कोविद पंडित, विरतरत वैराग्यरत ॥ १ ॥ सासकु
 भूषनकर्ता ॥ २ ॥ सुभटन में शिरोमणि परशुराम ऐसहुं देखि औ
 के श्रीराम से शुभ जानिकें सामे किए अर्थात् मिलाप किए ॥ ३ ॥
 जन को विशेष भूषनकर्ता जो विभीषन का वचन है ताको छानि के
 दाहिने वचन है पर दुख औ दूषन समान वाम लगे वा दाहिने औ
 ने बड़े रहे निन के दुख दूषन समान लगे । गोमाई जी फरत है
 हुमकि करि के हृदय में लात मार्यो, हे तात भला किए भत पादे
 के वाम मय जो रावन है ताको तजि के सुरतरुसमान जो श्रीराम
 निद को ताकि के चल्थो ॥ ४ ॥ २५ ॥

जाय माय पाय परि कथा सो सुनाई है । मसाधान
 जाति विभीषन को बार बार कछा भयो तात लात नारे
 लो भाई है ॥ १ ॥ साहिव पितुसमान जातुधान को
 निपट ताके घपमान तेरो बडीये बडाई है । गरम पलानि
 न सनमानि सिप दति रोष किये दोष महे मनुभे

भलाई है ॥ ३ ॥ इहाँ ते विमुख भये राम की सरन गये
 भलो नेकु लोखु राखे निपट निकाई है । मातृपग सौ स
 नाई तुलसी असीस पाइ चले भले सगुन कहत मन भाई
 है ॥ ४ ॥ २६ ॥

जाय ६० । विभीषन अपने माता को दिगं जाय के पाँय परि
 के लात मारिबे की कथा सुनाई ॥ १ ॥ एक तो साहिब है, दूसरे
 पितुसमान है। अर्थात् बड़ा भाई है और राक्षसन को राजा है ताके अप-
 मान ते तेरी बड़िण बड़ाई है । विभीषन को गलानि में गरत जानि के
 माता सनमानि के शिक्षा देति है कि समुझे ते क्रोध किए में दोष है
 और सहे में भलाई है ॥ २ ॥ यद्यपि रावन किहां ते विमुख भए में
 औ श्रीराम जू के शरण गए में भलो है पर तथापि किंचित लोक
 राखे में निपट सुंदराई है । भाव लोग कहेंगे कि संकटसमय में भाई
 को छोड़ दियो ॥ ४ ॥ २६ ॥

भाई कैसे करों डरों कठिन कुंफेरें । सुकृत संकट पंगो
 जातु है गलानि गखो कृपानिधि को मिलो पै मिलि कै
 कुबेरें ॥ १ ॥ जाय गहे पाय धाय धनद उठाय भेखो समा-
 चार पाय पोच सोचत सुमिरें । तहँ मिले महेस दियो जित
 उपदेस राम की सरन जाहि सुदिन न हरे ॥ २ ॥ जाकी
 नाम कुंभज कलिस सिंधु सोंपिवे की मेरो कछो मानि तात
 बांधे जनि वरे । तुलसी मुदित चले पाये है सगुन भले रंक
 लूटिवे को मानो मनिगन ठेरें ॥ ३ ॥ २७ ॥

भाई-६० । विभीषन अपने मन में विचार करत हैं कि हे भाई हम
 कैसा कर कठिन कुंफेरें हैं । धर्म संकट में परत भए । भाव राम विरोधी
 किहां न रहना चाहिए औ त्यागिवे में लोकोपहास, कि आपदकाल में
 छोड़ि भागे एहि गलानि में गरे जात हैं । फेर यह निश्चय कियो कि कुबेर
 से मिलि करि के फेर श्रीरघुनाथ सो मिलों ॥ १ ॥ फेर कुबेर के दिग

विधाता ने भली भांति वात राखी ॥ ३ ॥ ४ ॥ ॥ कृपासिंधु गूलपा
वे परिश्रम अनुकूल भए । मुद को मूल रूप जो मार्ग ताको जनाय
सनमानि कै दीनजन जानि कै अपनाय लियो ॥ ५ ॥ स्वारथ
परमारथ दोऊ हस्तगत भयो औ श्रमपथ वीति गयो यह सपना
कैधौ सौतुख है कि मुख रूप धान को देवता सींचत औ निराय दे
हैं । निराइवे सोइवे को कहत हैं ॥ ६ ॥ गुरु गौरीश मिले अब सा
सीतापति औ हित हनुमान ते जाय के मिलि हैं अब हम को क
करिवे को है । वांछित की सीमा अघाय कै मिली ॥ ७ ॥ मैं जो लालच
सो लटि के ललचाइ के को जानै कहाँ जाय मरतो अब अभै रु
नंगारा बजाय कै श्रीरघुवीर को भजि हैं ॥ ८ ॥ २८ ॥

पदपदुम गरीब निवाज के । देपिहीं जाइ पाइ लोचन
फल हित सुर साधु समाज के ॥ १ ॥ गई बहोर भोर निर्वा
हक साजक बिगरे साज के । संवरीसुपद गौधगतिदायक
समन सोक कपिराज के ॥ २ ॥ आरति हरन सरन समर्थ
सब दिन अपने की लाज के । तुलसी याहि कहत नतपालक
मोसे निपट निकाज के ॥ ३ ॥ ४६ ॥

पद ६० ॥ १ ॥ जो वात गई है ताको बहोरनिहारे हैं औ अन्तर्
निर्वाह करनिहारे हैं औ बिगरे भए साज को साजनिहारे हैं ॥ २ ॥
आरति के हरनिहारे हैं औ सब दिन में अपने भक्त की लाज के
समर्थ सरन कई रक्षक है । “हरणं गृहरक्षित्रोरित्यमरः” । नतपालक
हरणागत रक्षक ॥ ३ ॥ २९ ॥

महाराज राम पछि जाउंगी । मुप स्वारथ परिहरि
करिहीं सोइ जो साहिवहि सोहाउंगी ॥ १ ॥ सरनागत
मुनि वेगि योनिहैं हैं निपटहिं सकुचाउंगी । राम गरीब
निवाज निवाजि हैं जानिहैं ठाकुर ठाउंगी ॥ २ ॥ धरि

बाय हाथ माथे एहि ते कहि लाभ अघाउंगो । सपनो सौ
 न कछू लपि लघु लालच न लोभाउंगो ॥३॥ कहिहों
 रोटिहा रावरी विन मोलही बिकाउंगो । तुलसी पठ
 कतरे पोढ़िहों उवरी जूठन पाउंगो ॥ ४ ॥ ३० ॥

श्री० । महा ६० ॥१॥ जानि हैं ठाकुर ठाउंगो ठाव कहैं स्थान गयो
 नयों ठाकुर मोको जानिहैं अर्थात् स्थानभ्रष्ट ॥२॥ लघु लालच लौकिक
 भादि ॥ ३ ॥ ४ ॥ ३० ॥

पाइ सचिव बिभीषन के कही । कृपासिंधु दसकंध बंधु
 धनु धन सरन आयो सही ॥ १ ॥ विषम विषाद बारिनिधि
 इहत घाह कपोस कथा लही । गये दुप दोष देपि पद पंकज
 न साध एकौ रही ॥ २ ॥ सिधिल सनेह सराहत नप
 सिप नीकि निकाई निरवही । तुलसी मुदित दूत भए मन
 महुं भमिय लाहु मागत मही ॥ ३॥३१ ॥

आप ६० । बिभीषन के सचिव ने श्री रामचंद्र से आइ के कही ॥१॥
 विषाद रूप समुद्र में मूढ़त रहे तहां सुग्रीव की कथा समुत्ति पाइ
 भाव पालि के आस से सुग्रीव के उवारे तो हमहूँ को उबारेंगे ॥२॥
 ते सिख लो जो नीकी निकाई निवही है ताको गराहन हैं औ
 ते सिधिल हैं । दूत दीपित होत भयो, मानो छाँछ को मागत रहे
 अमृत पाए । इहां छाँछ सनेसा है औ अमृत सुंदराई को देगिबे
 ॥ ३ ॥ ३१ ॥ टि०—पद पंकज देखतही सभी दुख और दोष दूर
 और एक भी वासना (सोध) बाकी न रही सब पूर्ण होगई ।

पिनती सुनि प्रभु मुदित भए । रीरराज कपिराज
 नल बोलि धादिनंदन लये ॥ १ ॥ वृंक्षिऐ कहा रजाइ
 नय धर्मसहित ऊतर दये । बली बंधु ताको दिमोह
 पयर बोज परवस वये ॥२॥ बाई पगार हार रंज में बसत

न कबहुं फिरि गये । तुलसी असरन सरन स्वामि के विरद
विराजत नित नये ॥ ३॥३२ ॥

विनती ॥ १ ॥ श्रीरामजू कहे तुम सब के वृक्षिवे में कहा है, अस
आज्ञा पाइ के नीति धर्म सहित उत्तर देत भए । तेहि रावण बली को
बंधु है जेहि ने विशेष मोह के वश बैर को बीज बोए । एह नीति कहे
अब धर्म कहत हैं ॥ २ ॥ हे बांह पगार तेरे द्वार ते भय सहित जे पुरुष
ते कबहुं फिरि न गए । स्वामी के अशरण शरण जे विरद हैं ते नित्य
नए विराजत हैं । पगार नाम यद्यपि भित्ति का है पर इहां प्रबल के अर्थ
में जानता ॥ ३ ॥ ३२ ॥

द्विय विहसि कहत हनुमान सों । सुमति साधु सुचि
सुहृद विभीषन वृक्षि परत अनुमान सों ॥ १ ॥ हौं बलि
जाउं और को जानै कहि कृपानिधान सों । छली न होइ
स्वामि सनमुष ज्यों तिमिर सातहयजान सों ॥ २ ॥ घोटो
परों सभीत पालियै सो सनेह सनमान सों । तुलसी प्रभु
कीचो जो भलो सोइ वृक्षि शरासन वान सों ॥ ३॥३३ ॥

हिय ३० ॥ १ ॥ कृपानिधान सो हनुमान जू यह बात कही कि
मैं बलि जाउं । आप छोड़ि और अस को जानै छली पुरुष स्वामी के
सन्मुख नहीं होत है, सातहयजान जो सूर्य तिन्ह सो जैसे अंधकार
सन्मुख नहीं होत है ॥ २ ॥ खोटो है वा खरो है पर सो विभीषण
सभीत है तातें सनेहयुक्त सन्मान सो पालिये । शरासन औ बाण सो
वृक्षि कहैं जानि के जो आप करय सो भलो है । भाव शरासन देहा औ
बाण सूया आप दोऊ को राखे हैं । वा शरासन बाण सो वृक्षि के आप
जो करय सो भला है । भाव दूसरे से वृक्षिवे को क्या प्रयोजन है । आप
के पराक्रम को को भेद ले सकैगो ॥ ३ ॥ ३३ ॥

सांचेहु विभीषन पाइ है । वृक्षत विहसि कृपालु लपन
सुनि कहत सकुचि सिर नाइ है ॥ १ ॥ ऐहै कहा नाय ।

ज्यो है छां ज्यों जहि जाति बनाइ है । रावनरिपुहि रापि
 पुन दिनु को विभुवन पति पाइ है ॥ २ ॥ प्रभु प्रमन्न सब-
 समा सराहत दूतवचन मन भाइ है । तुलसी बोलिय बेगि
 वचन सो भइ महाराज रजाइ है ॥ ३ ॥ ३४ ॥

भावार्थ ३० लपनलाल सो श्रीरामकृपालु विहंगमि के दूत हैं कि
 भावार्थ विभीषण आर्यगो । यह सुनि गिर नवाइ मरुचि के लपनलाल
 राव है ॥ १ ॥ हे नाथ आर्यगो कदा भयोन् भविष्य आप काहे को
 जात है विभीषण आइ गयां हे ओ आप के इहां बनाइ के क्यों कहि
 जा सकत है आप के बिना रावण के रिपु को राखि के ऐसो को
 विभुवन से हे जो प्रतिष्ठा पार्यगो ॥ २ ॥ प्रभु प्रमन्न हैं सब सभा सरा-
 वति है ओ यह वचन विभीषण के दूत के मन में भावत भयो । लपन-
 लाल सो श्रीमहाराज रामचन्द्र की आज्ञा भई कि विभीषण को शीघ्र
 जाइ लीजिये ॥ ३ ॥ ३४ ॥

बली लेन लपन हनुमान हैं । मिले सुदित बूझि कुसल
 रम्यर सकुचत करि सनमान हैं ॥ १ ॥ भयो रजायसु पाउं
 गरिये बोलत कृपानिधान हैं । दूरि तें दीनबंधु दिये जनु दंत
 भय परदान हैं ॥ २ ॥ सील सहस हिमभानु तेज मत कोटि
 नहुं के भानु हैं । भक्तनि को हित कोटि मातु पितु परिन्ह
 कोटि कृसानु हैं ॥ ३ ॥ जनगुन रज गिरि गनि सकुचत
 ज गुनगिरि रज परवान हैं । बाहुं पगार बोल की अविचलु
 करत गुनगान हैं ॥ ४ ॥ चरचा चलति विभीषण की सोइ
 त सुचितु दे कान हैं । चाहुचाप तूनीर तामरस करनि
 रत वान हैं ॥ ५ ॥ हरपत सुर वरपत प्रसून सुभ सगुन
 त कल्याण हैं । तुलसी ते कृतकृत्य जी मुमिरत भमय
 वन ध्यान हैं ॥ ६ ॥ ३५ ॥

चले ३० । लवाइये के हेतु लपनलाल आँ हनुमान जू चले हैं, जब विभीषण के दिग गए तब दर्पित परस्पर मिले आँ कुशल वृक्ष के सन्मान करि के सकुचत हैं । सकुचने को यह भाव जस सन्मान किया चाही तस नाही बनत है वा करि के अर्थ से जानना अर्थात् सन्मान से विभीषण जू सकुचत हैं ॥ १॥२ ॥ प्रभु सहस्र चन्द्र सम शीलवान हैं, शतकोटि भानुहू के भानु सम तेजस्वी हैं, कृशानु कहैं अग्नि ॥ ३ ॥ जन को गुण जो रज सम है ताको गिरि सम गनि के सकुचत हैं आँ आपन गुण जो गिरि सम है ताको रज सम मानत हैं ॥ ४ ॥ सुन्दर चाप आँ तरकस है कर कमलनि ते बाण सुधारत हैं ॥ ५॥६॥३५॥

रामहिं करत प्रनाम निहारि कै । उठे उमगि शानंद प्रेम परिपूरन विरद विचारि कै ॥ १ ॥ भयो विदेह विभीषण उत इत प्रभु अपनपो विसारि कै । भली भाँति भावते भरत ज्यों भेद्यो भुजा पसारि कै ॥ २ ॥ सादर सयहि मिलाइ समानहि तिपट निकट वैठारि कै । वृक्षत कुसल पेस सप्रेम अपनाइ भरोसीं भारि कै ॥ ३ ॥ नाथ कुसल कल्याण सुमंगल विधि सुष सकल सुधारि कै । दैत लेत जे नाम रावरो विनय करत सुषचारि कै ॥ ४ ॥ जो मूरत सपने न विलोकात मुनि भइस मन सारि कै । तुलसी तेहि हीं लियो अंक भरि कहत काहु न सँवारि कै ॥ ५ ॥ ३६ ॥

रामहि ३० । विरुद विचारि कै अशरण के शरण हम हैं यह वान विचारि कै ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ हे नाथ जे रावरो नाम लेत हैं तिन्है ब्रह्मा कुशल कल्याण सुमंगल सकल सुख सुधारि कै देत हैं आँ चारि सुख से विनय करत हैं ॥ ४ ॥ ५ ॥ ३६ ॥

करुनाकर की करुना भई । सिटी मीचु लहि लंक संख गइ काहू सों न पुनिस पई ॥ १ ॥ दसमुप तज्यो दूध सापी ज्यों आपु काढ़ि साढ़ी लई । भव भूपन सोइ

विधो विभीषणु मुद्ग मंगल महिमा मई ॥ २ ॥ विधि हरि-
 र मुनि मित्र मंगलत मुद्रित न्ये दुर्दुभि दई । वारहिं वार
 सुमन परपत दिय परपत काहि जय जय जई ॥ ३ ॥ कौसिक
 मिना जनक संकट हरि नृगुपति को टारी टई । पग मृग
 कर निमाचर सब की पूंजी धिनु घाटो मई ॥ ४ ॥ युग
 युग कोटि कोटि करतव करनी न कछु परनी नई । राम
 भजन महिमा हुनभी दिय तुलसीदास की वनि गई ॥ ५ ॥ ३७ ॥

कहना ६० । कल्याणकर जो धीरायव तिन्ह की कल्याण होती
 भई विभीषण की मृत्यु भित्री लंका मिली औ सब शंका गई औ काहू
 सो सुनुस औ इपा न भई । भाव बिना परिश्रम ई सब बात भई ॥ १ ॥
 दमयुध ने विभीषण को दूध के माखी सम तज्या औ आप साक्षी
 सम लंका के मुख को लई सोइ विभीषण को श्रीराम ने भव जो
 संसार ताको भूषण औ मुद्ग मंगल महिमा मई कियो ॥ २ ॥ ३ ॥
 विभाविस अहल्या औ जनक को संकट हरि के परशुराम की टई कई
 गर्व टारे औ खग मृग भिद्य औ निशाचर इन्ह सब की बिन पूंजी की
 बहरी घादी ॥ ४ ॥ युगयुग में कोटि कोटि श्रीराम के करतव हैं कछु
 नई करनी नहीं परनी गई ॥ ५ ॥ ३७ ॥

मंजुल मूरति मंगल मई । भयो विसोक विलोक विभी-
 षणु निह देह सुधि सीव गई ॥ १ ॥ उठि दाहिनी ओर तें
 सन्मुख सुपट मागि बैठक लई । नय सिय निरपि निरपि
 रुप पावत भावत कछु कछु ऐ भई ॥ २ ॥ वार कोटि सिर
 काटि साटि लटि रावन संकर पै लई । सोइ लंका लपि
 अतिथि अनवसर राम तृनामन ज्यो दई ॥ ३ ॥ प्रीति प्रतीति
 रीति सोभा सरि थाहत जहं जहं तहं घई । वाहु बनी घा
 नै ॥ बोल को वीर बिजड़ बिजड़ गई ॥ ४ ॥ यो दयानु दूसरी

दुनी जेहि जरनि दीन हिय की हई । तुलसी काकी नाम
जपत जग जगती जामति बिनु बई ॥ ५॥३८ ॥

मंजुल ३० । नेह कहै सांसारिक प्रेम और देह की सुधि की मर्यादा
गई वा श्रीराम के नेह ते देह की सुधि की मर्यादा गई ॥ १ ॥ दाहिनी
ओर बैठे रहे तहां ते बठि के सुखद सन्मुख बैठवे की श्रीराम सो
आज्ञा मांगि लई । अर्थात् जामें रूप भली भांति देखि परै । भावत कह्य
कह्य पे भई महा दुख की भावना करत रहे सो सुख की भावना करण
लगे ॥ २ ॥ अनंत बार सिर काटि कै ऊख समान लटिके जो रावण
ने श्रीशंकर पै लंका लई सोई लंका को विभीषण को अतिथि मानि
कै अनवसर समुझि कै अर्थात् वनवास समुझि कै वृण के आसन
समान दई । भाव यह विचारे कि हम कुछ न दिये ॥३॥ प्रीति प्रीति
रीति औ शोभा रूप नदी को जहां जहां थाह लेत हैं तहां तहां अपाह
पावत हैं । बाहु के बली बोल के बाना बाले अर्थात् जो कहत सोई
करत और विश्व के विजय करनेवाले वीर औ नीतिवान और दयाल
कौन दूसरो दुनियां में है, जेहि ने दीन के हिय की जरनि नाशी है
औ काकी नाम जपत संसारमें पृथ्वी बिना बोए जामति है ॥४॥५॥३८॥

सब भांति विभीषण की बनी । कियो कृपालु प्रभय
कालहु ते गई संकृति सासति धनी ॥ १ ॥ सदा लंपन हनु-
मान संभु गुरु धनी राम कोसल धनी । हियेहि और और
कौन्ही विधि रामकृपा औरै ठनी ॥ २ ॥ कलुष कलंक
कलिस कोस भयो जो पद पाइ रावन रनी । सोइ पद पाइ
विभीषण भो भव भूपन दलि दूषण धनी ॥ ३ ॥ बांछ पगार
उदार सिंगेमनि नतपालक पावन धनी । सुमन वरपि
रघुवर गुन वरनत हरपि देव दुहुंभि हनी ॥ ४ ॥ रंक
निवाज रंस राजा किये गये गरव गरि गरि गनी । राम
प्रनाम महा महिमा कर सकल सुमंगल मनि जनी ॥५॥ होय-

भनो ऐमेहि अजहं गये राम मरन परिहरि लनौ । भुजा
 हठाय मापि संकर करि कनम पाइ तुनमो भनौ ॥६॥३८॥

मर मापि ३० । मंझानि मंझार ॥१॥ श्रीलखनलाल औ हनुमान
 रमना मए औ श्रीशिव ज गुरु मये औ कोशल धनी जो श्रीराम
 से धनी कई स्वामी मए विभीषण के हृदय में और रहा भाव रावण
 को दरदण करि दिन कई और विधाना ने और किया । अर्थात् रावण
 ने माया और श्रीराम के कृपा से और ठनत भई अर्थात् विभीषण ने
 सेवा पाई ॥ २ ॥ जो राजपद पाय के रनी रावण पाय औ कलंक
 को हटा को खजाना भयो मोई राजपद पाय के दूषणगण को दलि के
 धमार को भूषण विभीषण भयो ॥ ३ ॥ पावनपनी पवित्र जाकी
 मरिहा है ॥४॥५॥ रंक निवाजा कई गरीबनेवाज जो श्रीराम सो रंक
 जो विभीषण ता को राजा किए औ गनी कई धनी अपने गर्व ते गलि
 गलि गये अर्थात् विभीषण को ऐश्वर्य देखि कै श्रीराम के मणाम की
 मर महिमा की खानि ने सकल सुमंगल रूप मणि को उत्पन्न किये
 ॥५॥ मनी कई अभिमान ताको छोड़ि के अजहं श्रीराम शरण गए ऐसे
 ईश्वर हाथे अर्थात् जस विभीषण को भयो भुजा उठाय के अर्थात् ईश्वर
 की ओर हाथ करि के और शिवजी के शासी करि के जपय खाय के
 हलसी ने फरी ॥ ६ ॥ सो० । इतनहु पर नहि होय, सन्मुख सीता-
 नाथ जो । हरिहर पछु हय सोय, तरसत भूसा घास को ॥ ३९ ॥

कहो क्यों न विभीषण को धनै । गयो छाडि कुल सरन
 राम की जो फल चारि चाखो जनै ॥ १ ॥ मंगलमूल प्रनाम
 जामु जग मूल अमंगल के धनै । तेहि रघुनाथ हाथ माथे
 दियो की ता की महिमा भनै ॥२॥ नाम प्रताप पतित पावन
 किय जे न अघाने अघ धनै । कोउ उलटो कोउ सूधो जपि
 भये राजहंस धायस तनै ॥ ३ ॥ हुतो ललात कृसगात पात-
 परि मोद पाइ कोटीकनै । सो तुलसी चातक भयो जावत
 रामस्याम सुंदर धनै ॥ ४ ॥ ४० ॥

कहो ३० । जो फल चारि चारथो जनै जो शरणागत चारो वेद
में फल रूप है औ अर्थ धर्म काम मोक्ष चारो की उत्पत्ति करनिहारी
है ॥ १ ॥ जाको प्रणाम मंगल को मूल है औ अमंगल के मूल को
खोदत है ते रघुनाथ ने हाथ माथे पर दियो तब ताकी महिमा को को
कहै ॥ २ ॥ अघ औ अनीति ते जे न अघाने ते पतितन को नाम ने
अपने प्रताप ते पावन किये डलटो बाल्मीक जी जापि कै सूर्यो प्रह्लाद
आदि जपि कै काक से हंस भए ॥ ३ ॥ दुर्बल शरीर ललचात जो
खरी खात रह्यो औ कोदो के कनौ पाय कै आनन्द पावत रह्यो
सो राम श्यामसुंदर घन को जाचत मात्र चातक भयो । इहां खरी
लौकिक सुख को जानौ औ कोदो के कणवत् स्वर्गादि सुख जानौ
औ चातक होव श्रीराम में अनन्य होव है ॥ ४॥४० ॥

पतिभाग विभीषण की भली । एक प्रणाम प्रसन्न राम
भये दुरित दोष दारिद्र दली ॥ १ ॥ रावन कुंभकर्ण वर मागत
शिव विरंचि बाधा छली । रामदरस पायो अविचल पद
सुदिन सगुन नीके चली ॥ २ ॥ मिलनि विलोकि स्वामि
सिधका की उकटे तरु फूले फली । तुलसी सुनि सनमान बंधु
को दसकंधर हसि हिय जली ॥ ३॥४१ ॥

अति ३० । दुरित दोष पाप जनित दोष वा पाप औ औगुन ॥१॥
रावण औ कुंभकर्ण को वर मांगत में शिव विरंचि ने सरस्वती करि
के छले अर्थात् आन कै आन कहवाय दिए औ वे वर मागे श्रीराम
के दर्शन ते विभीषण अविचल पद पाए औ सुंदर दिन औ सुंदर
सगुन भली भांति ते विभीषण के संग चले भाव विभीषण दिन सगु-
नादि न विचारे रहे आप से आप संग लगे ॥ २ ॥ उकटे तरु फूले
फले को यह भाव कि जे जड़ श्रीराम सनेहरहित रहे ते सनेहरहित
भए हंसि हिय जले ऊपर से तो हंस पर भीतर से जले ॥ ३॥४१ ॥

गए राम सरन सब की भली । गनी गरीब बढो छोटी

बुद्ध मूढ हीनदल अतिदलो ॥ १ ॥ पंगु अंध निर्गुनी निसंवल
 शे न लड़े जांचे जलो । सो निवह्यौ नोके जो जनमि जग
 रामराज मान्य चलो ॥ २ ॥ नाम प्रताप दिवाकर कर तें
 गत तुहिन ज्यों कलिमलो । मुत हित नाम लेत भवनिधि
 तहि गयो अजामिल सो पलो ॥ ३ ॥ प्रभुपद प्रेम प्रनाम
 कामतर मय विभीषन की फलो । तुलसी मुमिरत नाम
 सदन को मंगलमय नभ जल घलो ॥ ४ ॥ ४२ ॥

गप १० । तुष पंडित ॥ १ ॥ निसम्बल विना खरब को राम
 गन पारग चलो श्रीराम के राजमार्ग कई भक्ति पथ में जो चलो ॥ २ ॥
 नाम प्रताप रूप सूर्य के तीक्ष्ण किरण ते कलिमलो बरफ सम गलत
 है ॥ ३ ॥ प्रभु के पद में प्रेम और प्रणाम रूप कामतर से तत्क्षण
 विभीषण को भलो भयो नाम मुमिरतमात्र सब जीवन को आकाश
 बरफ पल मंगल मय होत है ॥ ४ ॥ ४२ ॥

सुजस मुनि स्रवन हों नाथ आयो सरन । उपल केवट
 एड सवरी मंछति समन सोक स्रम सीव सुधीव आरति
 करन ॥ १ ॥ राम राजीवलोचन विमोचन विपति स्याम,
 नव तामरस दास वारिद वरन । लसत जट जूट सिर चारु
 मुनि चोर कटि धीर रेधुवीर तूनीर सर धनु धरन ॥ २ ॥
 कातुधानस भ्राता विभीषन नाम दंधु अपमान गुरु ग्लानि
 चाहत गरन । पतितपावन प्रनतपाल करुनासिंधु रापिए
 मोहि सौमित्र सेवित धरन ॥ ३ ॥ दीनता प्रीति संकलित
 मृदु वचन सुनि पुनक्ति तन प्रेम जल नयन लागे भरन ।
 बोलि लंकेश कहि अंक भरि भेंटि प्रभु तिलकु दियो दीन
 दुप दीप दारिद दरन ॥ ४ ॥ रातिचर जाति आराति सब
 भांति गत कियो सो कल्याण भाजन मुमंगल करन । दास

तुलसी सद्यै हृदय रघुवैसमनि पाहि कहि काहि कीन्हो न
तारन-तेरन ॥ २॥६२ ॥

सुजस ३० ॥१॥ श्याम नव तामरस दाम नवीन नील कमल की माला
सम, जुट समूह ॥ २ ॥ जातुधानेस रावण, गुरु ग्लानि, भारी ग्लानि
से ॥ ३ ॥ संकलित संमिलित ॥ ४ ॥ रातिचर निशाचर, आराति
शत्रु, इहां रावण की बंधु है ताते आराति कहि सद्य दयासहित ॥५॥६३॥

दीनहित बिरद पुराननि गायो । भारतवंधु कृपालु
मृदुलु चित जानि सरन हो आयो ॥१॥ तुम्हरे रिपु की हो
अनुज विभीषन बंस निसाचर जायो । सुनि गुन सोल
सुभाव नाथ को में चरनहि चितु लायो ॥ २ ॥ जानत प्रभु
दुष सुष दासनि को ताते कहि न सुनायो । करि कटना
भरि नयन बिलोकिहु तब जानी अपनायो ॥ ३ ॥ धर्चन
बिनीत सुनत रघुनायक हंसि करि निकट बुलायो । भेद्यो
हरि भरि अंक भरत ज्यों लंकापति मनु भायो ॥ ४ ॥ कर
पैकज सिर परसि अभय कियो जन पर हेतु देखायो । तुल-
सिदास रघुवीर भेजनु करि को न अभय पंद पायो ॥५॥६४॥

दीन ३० । हेतु प्रीति अपर पद सु० ॥ ४४ ॥

राग धनाश्री । संख कहीं मेरो सहज सुभाउ । सुनहु
सपा अपिपति लंकापति तुम सुन कोन दुराउ ॥ १ ॥ सब
विधि झीन दीन अति जडमति जाको कतहु न ठाउ । पाये
सरन भजो न तज्यो तेहि यह जानत रिपिराउ ॥२॥ जिन
को हो हित सब प्रकार चित नाहि न और उपाउ । तिनहि
लागि धरि देह करौ सब डरों न मुजस नसाउ ॥ ३ ॥ पुनि
पुनि भुजा उठाइ कहत हो संकल संभापति आउ । नाहिन
कोउ प्रिय मोहि दास सम कपट प्रीति बहि जाउ ॥ ४ ॥
मुनि रघुपति को धर्चन विभीषन प्रेम भगन मेन पाउ ।

तुलसिदास तजि भास चास सब ऐसे प्रभु कहुं गाउ ॥५॥४५॥

गल्प १० । सदन बनादरदिन ॥ १ ॥ भजो कहैं अंगीकार करत
 हैं, गिरिगाउ नारद ज ॥ २ ॥ दरो न मृगज नसाइ कहिवे को यह
 कर कि "भुवन मनोक गोम मनि जानू । यह महिमा कछु बहुत न ताम्" ।
 त्याहि ॥ ३ ॥ कपट मोनि यहि जाउ कपट करि जो भीति होती है ।
 को बोलिजाउ टांकि है । भाव हमारी भीति निष्कपट है अतएव अंचल
 है ॥ ४ ॥ ५ ॥ ४५ ॥

नाहि न भजिबे खोगु पियो । श्रीरघुवीर समान पान को
 पान कृपा दियो ॥ १ ॥ कहहु कौन मुर सिला तारि पुनि
 कबट सीत कियो । कौने गौध प्रथम को पितु ज्यों निज
 कर पिंड दियो ॥ २ ॥ कौन देव सवरी को फल करि
 भोजन सलिल पियो । वालिदास वारिधि बूडत कपि कहि
 यहि बाँध लियो ॥ ३ ॥ भजन प्रभाउ विभोषन भाष्यो सुनि
 कपि काटक जियो । तुलसिदास को प्रभु कोसलपति सब
 प्रकार वरियो ॥ ४ ॥ ४६ ॥

नादिन १० । पियो कहैं दूसरो ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ वरियो कहैं
 रघुवान ॥ ४ ॥ ४६ ॥

राग जयतश्री । कय देखोंगो नयन बड़ मधुर सूरति ।
 राजिवदलनयन कोमल कृपा अयन मयननि बड़ छवि
 प्रगति दूरति ॥ १ ॥ सिरसि जटा कलाप पानि सायक
 पाप उरसि रुचिर वनमान लूरति । तुलसिदास रघुवीर की
 सोभा सुमिरि भई है मयन नहि तनु की सूरति ॥ २ ॥ ४७ ॥

श्री जानकी जू की लालि कमल के पत्र के समान नेत्र है जेहि
 सूरति की ओ कोमल है ओ कृपा को यह है ओ काम समूह के छवि
 को अंगानि तो दूर करति है ॥ १ ॥ दूरति लटकति ॥ २ ॥ ४७ ॥
 राग केदारा । कछु कबहुं देखिहीं पानी हो पारज

मुअन । सानुज सुभग तन जब ते विकुरे बने तब ते दव
सी लागी तीनहुं मुअन ॥ १ ॥ मूरति सूरति किये प्रगट
प्रीतम हिये मन के करन चाहै चरन कुअन । चित चिट्ठिगो
वियोग दसानन कहिये जोग पुलकगात लागे लोचन चुअन
॥ २ ॥ तुलसि विजटा जानौ सोय अति अकुलानौ मृदुवानौ
कह्यो ऐहैं दवन दुअन । तमोचर तम हारौ मुरकंज सुधकारी
रबिकुलरवि अब चाहत उअन ॥ ३॥४८ ॥

कहुं इ० । आरज कहैं श्रेष्ठ दवसी आगसी ॥ १ ॥ मन के करन
मन के हाथन से ॥ २ ॥ दवन दुअन, शत्रुनाशक निशाचर रूप तम
के नासनिहारे औ देवरूप कमल के मुखदेनिहारे सूर्य कुल के सूर्य अब
उगा चाहत हैं ॥ ३॥४८ ॥

अब लों मैं तोसों न कहैरी । मुनु विजटा प्रिये प्राण-
नाथ बिनु वासर निसि दुप दुसह सहैरी ॥ १ ॥ विरह विषम
विष बेलि बंढो उर तें मुप सकल सुभाष देखैरी । सोइ
सोचिये लागि मनसिज के रहट नयन नित रहत नंहेरी ॥ २ ॥
सर सरोर सुपे प्राण वारिचर जीवन आस तनि चलन
चहैरी । तें प्रभु मुजस मुधा सीतल करि राखे तदपि न तृप्त
लेहैरी ॥ ३ ॥ रिपु रिसि घोर नदी विवेक बल धीरसहित
हुते जात वहैरी । दै मुद्रिका टेक तेहि अवसर रुचि
समीर सुत पैरि गहैरी ॥ ४ ॥ तुलसिदास सब सोच पोच मृग
मन कानन भरि पूरि रहैरी । अब सधि सिय संदेह परि-
हस हिय आइ गये दोउ बोर अहैरी ॥ ५ ॥४९ ॥

अब लों ॥ १ ॥ उर तें तीक्ष्ण विरह रूप विष की बेली बड़ी
तेहि बेली ने स्वाभाविक सकल सुख को जरायं दई औ तेहि बेली
सोचये के अर्थ काम के रहट रूप हमारे नेत्र नित नथे रहत हैं ॥ २ ॥
शरीर रूप तड़ाग सुखे प्राण रूप मछली आदि जीवन की आशा छोड़ि

बैठना चारों पर मैंने मनु मुनय मर अमृत ते शीतल करि के
 रस नयापि नमि न लहे ॥ ३ ॥ मनु का जो घोर रिस है सो नदी
 सिरेक बल धारना सहित नाम बहे जान रहे पर तोहि अवसर में
 हिसा रूप लफड़ा मे मन्दाह के हे मर्गों परिके पवनपूत गहत भए
 ॥ ४ ॥ सब सोच पोच रूप मृगा मन रूप कामन में भरि पूरि रहे हैं
 कना धुनि विनया सोली कि हे सभी श्रीजानकी जू अब संदेह को
 पि ने छोड़ो शोक भिकारी कुंभर आइ गए। भाव सोच पोच रूप मृग
 न न बचेंगे ॥ ५॥४६ ॥

राग विलायन—सो दिन सोने को कहूँ कब ऐहै । जा
 दिन बंधो मिंधु विजटा मुनु तूं मंभम मोहि आनि मुनैहै
 ॥ १ ॥ विश्वदवन सुर साधु मतावन रावन कियो आपनो
 पैहै । कनकपुरी भयो भूप विभीषन विबुध समाज बिलोकन
 पैहै ॥ २ ॥ दिव्य दुंदुभी प्रसंसि हैं मुनिगन नभतल बिसल
 बिसाननि छैहैं । वरपिहैं कुमुम भानुकुलमनि पर तब सोकीं
 पवनपूत लै लैहै ॥ ३ ॥ अनुजसहित सोभिहैं कपिन महु
 तनुद्वि कोटि मनोज हि तेहै । इन नयनन्हि एहि भांति
 प्रानपति निरपि हृदय आनंद समैहै ॥ ४ ॥ बहुरौ सदल सनाय
 सखहिमन कुसल कुसल विधि अवध देखैहै । गुरुपुरलीन
 सासु दीउ देवर मिलत दुंसह उर तपित बतैहै ॥ ५ ॥ संगल-
 कलस बधावन घर घर पैहैं मागने जो जीहि भैहै । विजय
 राम राजाधिराल को तुलसिदास पावन लसु गैहै ॥ ६ ॥ ५० ॥

सो दिन ५० । सोने को कहिये को यह भाव कि जैसे धातुन में
 सोना उत्कृष्ट होत है तैसे दिनन में सो दिन उत्कृष्ट कब आवेगो
 ॥ १ ॥ २ ॥ नभतल आकाश औ पृथ्वी में ॥ ३ ॥ कोटि मनोज
 हितैं कोटि काम को संतप्त करि हैं । ४ ॥ फेर दलंमहिन लक्ष्मण-
 सहित नाथ को कुशल औ अवध को कुशल विधाता देखैं हैं । ५॥६॥५०॥

लपति नाथ समुक्ति जियं देपु ॥ ७ ॥ मुनि पुलस्ति के जस
मयंक महुं कत कलंक हठि होहि । और प्रकार उवार नही
कहुं मैं देख्यौ जग टोहि ॥ ८ ॥ चलु मिलु वेगि कुसल सादर
सिय सहित अग्र कर मोहि । तुलसिदाम प्रभु सरन सबद
मुनि अभय करौ गो तोहि ॥ ८॥९॥१॥

टीका ।

मान० । मंदोदरी की उक्ति है आयो व कहैं आयो अब ॥ १ ॥
जनायो, आप अपने को जनावत भए मिस बहाना ते ॥ २ ॥ दाप
अभिमान ॥ ३ ॥ ४ ॥ बल उदाधि अगाध बल रूप समुद्र जेहि वाली
को अथाह ॥ ५ ॥ ६ ॥ विरदैत बानावाले दोहि कहैं दोइ कै ॥ ८॥९॥१॥

राग कान्हरा । तूं दसकंठ भले कुल जायो । तामहुं
सिवसेवा विरंचिं बर भुज बल विंपुल जगत जसु पायो ॥ १ ॥
परं दूषन त्रिसिरा कबंधरिपु जेहि वाली जम लोक पठायो ।
तांको दूत पूनीत चरित हरि सुभ संदेस कहन हौं आयो ॥ २ ॥
सौमद नृप अभिमान मोहवस जानत अनजानत हरि
लायो । तजि ब्यलीक भवु कारुणीक प्रभु दै जानकिहिं सुनहिं
समुझायो ॥ ३ ॥ यातें तव हितु होइ कुसल कुल अचल राज
चलिहै न चलायो । नाहित रामप्रताप अनल महुं है पंतंग
परिहै सठ धायो ॥ ४ ॥ जद्यपि अंगद नीति परम हित
कह्यो तथापि न कहु मन भायो । तुलसिदास सुनि वचन
क्रोध अति पावक जरत मनहु छत नायो ॥ ५ ॥ २॥

तू० । अंगद की उक्ति ॥ १ ॥ २ ॥ श्रीमद धनमद, लीक कपट
॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ २ ॥

तैं मेरो मरम कहु नहिं पायो । रे कपि कुटिल टोठ-

सु पाँवर मोहि दास ज्यों डाँटन आयो ॥ १ ॥ भाता कुंभ-
 रन रिपुघातक सुत दुरपतिहि बंध करि ल्यायो । निज
 मुनिल भति अतुल कहों क्यौं कंदुक ज्यों कैलास उठायो
 ॥ २ ॥ सुर नर असुर नाग पग किन्नर सकल करत मेरो
 ल भायो । निसिचर रुचिर अहार मनुजतनु ताकी जस पल
 मोहि सुनायो ॥ ३ ॥ कछा भयो वानर सहाय मिलि करि
 श्याय ज्यों सिंधु बंधायो । जो तरिहै मुज बीस घोर निधि
 पंखी की विभुषन में जायो ॥ ४ ॥ सुनि दससीस वचन
 विकुंजर विहंसि ईस माय हि सिर नायो । तुलसिदास
 एकैस कालवस गनत न कोटि जतन समुझायो ॥ ५ ॥ ३ ॥

त १० । रावण की उक्ति ॥ १ ॥ २ । मन को भायो कहें हमारो
 न कहें हमारो गुलाम को भायो करत हैं ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ३ ॥

सुनु जल में तोहि बहुत बुझायो । एते मान सठ भयो
 नोवस जानतहूं चाहत विष पायो ॥ १ ॥ जगतविदित
 पतिघोर बालि बल जानत हों किधौं अब विसरायो । विनु
 प्रयास सोठ हल्यौ एक सर सरनागर पर प्रेम देपायो ॥ २ ॥
 रावहुंग निज कर्म जनित फल भलि ठौर पठि धैर बटायो ।
 नानर भालु अपेट लपेटनि मारत तब छैह पड़ितायो ॥ ३ ॥
 मोहीं दसन तोरिवे लायक कछा करौं जो न आयसु पायो ।
 रघुवीर बाण विदलित उर सोवहिगो रघुनि मोहायो
 ॥ ४ ॥ अघिबल राज विभीषन को सब छेहि रघुनाथवरन
 विनु लायो । तुलसिदास एहि भांति वदन कहि मरहत
 रज्जो बालिनृपभायो ॥ ५ ॥ ४ ॥

सुनु १० । अंगद की उक्ति ॥ १ ॥ सठ दाना अधिदान दोहर

मयो है ॥१॥२॥३॥ होई कहैं हम, विदलित विशेषदलित ॥ ४॥५॥६॥

राग केदारा । राम लपन उरं लाइ लये हैं । भरे नीर
राजीवनयन सब अंग अंग परिताप लये हैं ॥ १ ॥ कहत
संसीक विलोकि बंधुमुख वचन प्रीति गथये हैं । सेवक संप
भक्ति भायग गुन चाहत अब अथये हैं ॥ २ ॥ निज कोरति
करतूति तात तुम्ह सुकृती सकल लये हैं । मैं तुम्ह
बिनु तनु राखि लोक अपने अपलोक लये हैं ॥ ३ ॥ मेरे
पन की लाज इहां लों हठि प्रिय प्रान दये हैं । लागत सांग
विभीषन ही पर सीपर आपु भये हैं ॥ ४ ॥ सुनि प्रभुवचन
भालु कपि सुर गन सोच सुपाइ गये हैं । तुलसी पाइ मवन-
सुत विधि मानो फिरि निरमये नये हैं ॥ ५॥५ ॥

राग ३० । लक्ष्मण जी की शक्ति लगिवे की कथा लिखत हैं । सब
अंग परिताप लए हैं सब अंग परिताप तें वे उठे है ॥ १ ॥ वचन प्रीति
गथए हैं वचन प्रीति से गुहे भए हैं । सेवक औ सखा औ भगति औ
भार्षणे को गुन अब इवा चाहत है । भाव ए सब गुण लक्ष्मण छोडि
दूसरे में कहां होयगो । २ ॥ हे तात तुम अपनी कीर्ति औ करतूति
के सकल सुकृति को जीति लए हैं हम तुम्हारे बिना अपना तन लोक
में राखि के अपलोक कहैं अयश को लए हैं ॥ ३ ॥ हमारी प्रतिज्ञा
की लाज तुम को इहां लो भई कि हठि करि के प्रिय जो प्रान सो दिए ।
विभीषण को सांग लागत तापर लक्ष्मण आप दाल भए हैं । भाव विभी-
षण जो मरेंगे तो श्रीराघव की प्रतिज्ञा जायगी यह विचारि आप
शक्ति को लै लए दाल को सिपर पारसी में कहत हैं ॥ ४ ॥ निर्मल
नए हैं मानो विधाता ने नए सिरे से फिर लक्ष्मण जी को बनाए
हैं ॥ ५ ॥ ५ ॥

राग सोरठ—सोपें तो न काछू छै पाई । सोर निवाडि
भूली विधि भायग चल्थो लपन सो भाई ॥ १ ॥ पुर पितु-

सकल सुख परिहरि जेहि वन विपति बंटाई । ता संग
 मुरलोक सोक तजि सबयो न प्रान पठाई ॥ २ ॥ जानत
 बाहर कठोर तें कुलिस कठिनता पाई । सुमिरि सनेह
 निवासुत को दरकि दरार न जाई ॥ ३ ॥ तातमरन तिय-
 न गीधवध भुज दाहिनी गवांई । तुलसी में सब भांति
 पने कुलहि कासिमा लाई ॥ ४ ॥ ६ ॥

श्लोक १० । और अंत लों ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ दाहिना भुज भाई को कहत
 ४ ॥ ६ ॥

मेरो सब पुरुषारथ याको । विपति बंटावन बंधु बाहु-
 करों भरोसो काको ॥ १ ॥ सुनु सुग्रीव सावेहूं भी पर
 वदन विधाता । ऐसे समय समर संकट हों तज्यो
 सो भाता ॥ २ ॥ गिरि कानन जेहैं सायामृग हों पुनि
 संघाती । छैहै कहा विभीषन की गति रही सोच
 राती ॥ ३ ॥ तुलसी सुनि प्रभुवचन भालु कपि सकल
 हिय हारे । जामवंत हनुमंत धोलि तब चौसर जानि
 ॥ ४ ॥ ७ ॥

श्लोक १० । विपति बंटावन विपति को बंटावनहारो ॥ ७ ॥

ग मारु—जो हों सब अनुसासन पावों । तो चंद्र-
 नचोरि चैल ज्यों जानि सुधा सिर नावों ॥ १ ॥ कै
 दलों व्यालावलि अमृतशुंड महि लावों । भेदि भुज
 नु दाहिरो तुरत राहु दैतावों ॥ २ ॥ विबुध देद
 पानी धरि ती प्रभु अनुग कटावों । पटकों बीच नीच
 ज्यों सबहि को पाव पावों ॥ ३ ॥ तुम्हरेहि कृपा

प्रताप तिहारहि नेकु विलंब न जावों । दीजै सोइ भाय
तुलसी प्रभु जीहि तुम्हरे मन भावों ॥ ४ ॥ ८ ॥

जौ ६० । हनुमानजी की उक्ति है जो अब हम आज्ञा पावें त
पक्ष सम चन्द्रमा को गारि कै अमृत आनि कै सिर नवावें ॥ १ ॥
अथवा पाताल के सपों को गारि कै अमृत को कुंड भूमि पर ले आव
अथवा ब्रह्मांड को भेदन करि तेहि राह तेहि मूर्ग को बाहर करो अ
तेहि राह को राहु से बंद करि देउं । भाव जय सूर्य ब्रह्मांड में न रहे
सेव कैसे भिनुसार होयगो । “काज नसाईहि होत प्रभाता” यह आशय
लेके हनुमानजी । कहे विबुधवैद्य अश्वनीकुमार, बरवस जो रावरी अनु
गद्गास मीचु मृत्यु, मूपक मूसा ॥ ३ ॥ ४ ॥ ८ ॥

२० सुनि हनुमंतवचन रघुवीर । सत्य समीरसुधन सव
शायक कछौ राम धरि धोर ॥ १ ॥ चाहिय वैद ईस भायस
धरि सोस कीस वल ऐन । आन्यौ सदनसहित सोवत ही
जौलौ मलकु परै न ॥ २ ॥ जियै कुंचर निस मिलै मूलि
का कौन्ही बिनय रुपिन । उठ्यो कपीस सुमिरि सीतापति
प्रल्यौ सजीवन लेन ॥ ३ ॥ कालनेमि दलि बिगि विलोक्यौ
द्रोनाचल जिय जानि । देयी दिव्यौषधी जहां तथं करी न
परो पहिचानि ॥ ४ ॥ जियौ उठाइ कुधर कंदुक ज्यौ बिगि
न जाइ वपानि । ज्यौ धाए गजराज उधारन सपदि सुदर
सैनपानि ॥ ५ ॥ आनि पहार जोहारे प्रभु कियौ वैदराज
उपचार । करुनासिंधु बंधु भेख्यौ मिटि गयो सकल दुपचार
॥ ६ ॥ सुदित भालु कपि कटक लछौ जनु समर पयोनिधि
पार । बहुरि ठौरही राखि महीधर आयो पवनकुमार ॥ ७ ॥
सैनसहित से कहि सराहत पुनि पुनि राम मुजान । बरपि
प्रसंसत विबुध वक्राड निसान ॥ ८ ॥

तुलसिदास मुधि पाइ निमाचर भये मनहुं विनु प्रान । परी
मेरो सोहि लेखगट्ट दइ हांक हनुमान ॥ ८॥८ ॥

शुने १० ॥ १ ॥ श्रीगणेश हरे कि वंश चाहिण यह आज्ञा स्वामी
सो हनुमान बच अवन मिर पर परि के घरमीहत वंश को लंका
में मोहनही भान्यो एगने सोचना मे कि जब लो पलक न परयो ॥२॥
हने नामा वंश-जो लेख मे आयो सो विन कीन्ही कि राति भर में
जो मिले तो कुंभर जाव ॥ ३ ॥ ४ ॥ कुंभर पर्वत, कंदुक गेंदा, वेग
शोभा, मुदभनयानि विष्णु ॥ ५ ॥ ६ ॥ ठौरहो जहां से आए रहे
हो रपि आए ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥

राम कीदारा । कौतुक ही कपि कुंभर लियो है । बल्यो
राम नाइ माध रघुनाथहि मरिम न वेगु वियो है ॥१॥ देख्यो
जात जानि निमिचर विनु फर सर डयो हियो है । पखो कहि
राम पवन राख्यो गिरि पुर तेहि तेज पियो है ॥ २ ॥ जाइ
भरत भरि अंक भेंटि निज जीवन दान दियो है । दुय लघु
पवन सरम घायल मुनि मुय वडो कोस जियो है ॥ ३ ॥
पायसु इतहि स्वामि संकट उत परत न कछू कियो है ।
तुलसिदास विहग्यो, अकास सो कैसे के जात सियो है
॥ ४॥१०॥

कौतुक १० । सरिस न वेग वियो है जाके परावर दुमरे फौ पैग
नेही है । १ ॥ भरत जू हनुमान जी को जान देखे निधर जानि के
विनु फर को यान हृदय में मारघो, तेहि यान ने पुर कई संपूर्ण हनुमान
जी के तेज को पी लियो । हनुमानजू राम कहि के पृथ्वी में गिरे पर्वत
को पवन ने रोकि राख्यो भाव जाते पुरी न दवि जाय । २ । भरत
जू हनुमान जी के दिग जाय के अंक भरि भेंटि के पुनि अपना आर-
दाय हनुमान जू को दान दियो है तब हनुमान जू जी रहे हैं । एतना
वैप है । परम भायल मर्म स्थान ॥ इव श्रीराम

जू की आज्ञा अवधि भर अयोध्या जी में रहिये की औ उत श्रीराघव
जू संकट में हैं कुछ करत नहीं वनत है । भाव न रहत वनत न जात
घनत गोसाँई जी कहत हैं कि फय्यो आकाश सो कैसे सियो जात है
॥ ४॥१० ॥

भरत सत्रसूदन बिलोकि कपि चित चकित भयो है ।
राम लपन रन जीति अवध आए कैधों मोहि भ्रम कैधों
काहू कपट ठयो है ॥ १ ॥ प्रेम पुलकि पहिचानि कै पद
पदुम नयो है । कछौ न परत जेहि भांति दुहुं भाइन्ह सनेह
सों सो उर लाइ लयो है ॥ २ ॥ समाचार कहि गइक भौ
तेहि ताप तयो है । कुधरसहित चढो बिसिप्र बेगि पठवौ
सुनि हरि हिय गरव गूढ उपयौ है ॥ ३ ॥ तीर ते उतरि
जसु कछौ चहै गुन गननि जयो है । धन्य भरत धन्य भरत
करत भयौ मगन मौन रह्यौ मन अनुराग रयौ है ॥ ४ ॥
यह जलनिधि पन्यो मय्यो लँघ्यो बंध्यो बंधयो है । तुलसिदास
रघुवीर बंधु महिमा को सिंधु तरि को कवि पार गयो है
॥ ५॥११ ॥

भरत ६० सु० ॥११२॥ हनुमान जू समाचार कहे । गहर कहैं बिकम्ब
भयो तेहि ताप ते भरत जू तपि जात भए । भरत जू कहत भये कि
पर्वतसहित हमारे बाण पर चढ़ो तुम को शीघ्र प्रभु के दिग भेज देउं,
यह सुनि के हनुमान जी के हृदय में भारी अहंकार उपज्यो है कि
“मोरे भार चलाहि किमि बाना” । फिर हनुमान जी बाण पर चढ़े भरतजू
को बोझ न जान परथौ बाण चलावन लगे तब हनुमान जू भरतजू
को प्रभाव समुक्षि बाण ते उतरि के भरतजू को यश फहा चाह्यो पर
भरतजू के गुणगणों ने जीति लियो है । भाव कहिये को न समर्थ
भये धन्य धन्य भरत कहत मगन भए औ चुप है जात भए औ मन
भरतजू के अनुराग में रंगि गयो ॥३॥४॥ यह समुद्र को सगर महा-

राज के पुत्रों ने खन्यो वा मियग्रत ने औ देवता दैत्यों ने मध्यो औ
 हनुमान जी ने नांघ्यो श्रीरघुनाथ ने धधिउ औ अगस्त्य जी अग्र
 गए । गोसाई जी कहत हैं कि भरत की महिमा समुद्र को तरि के कौन
 बस कहि है कि जो पार गयो है । एहि समुद्र तें महिमा समुद्र को
 अधिक जनाए ॥ ५॥११ ॥

हो तो नहिं जो जग जनम भरत को । तौ कपि कहत
 कृपानधार भग धनि आचरण चरत को ॥ १ ॥ धीरज धरम
 धरनिधर धुरहु तें गुरु धुर धरनि धरत को । सब सदगुन
 सनमानि आनि उर अघ औगुन निदरत को ॥ २ ॥ सिवहु
 न सुगम सनेह रामपद सुजननि सुलभ करत को । सृजि
 निज जमु सुरतह तुलसी कहुं अभिमत फरनि फरत को
 ॥ ३॥१२ ॥

होतो ६० । अब हनुमान जी की उक्ति । गोसाई जी कहत हैं जगत
 में जो भरत जी को जनम न होतो तो स्नेह का मार्ग कृपानधार
 सम है ता पर चलि के तेहि व्रत को को आचरण करत ॥१॥ धरणी-
 धर जो पर्वत तेहि के धुर कहैं भारहु ते गुरु कहैं अधिक है भार जेहि
 को ऐसे धीरज धर्म को धरणी पर को धरत औ सब सदगुनों को
 सनमानि कै हृद में आनि कै अघ औ औगुनन को कौन दरत कहैं
 विदीर्ण करत वा निदरत कहैं निरादर करत ॥२॥ जो रामपद सनेह
 शिव को भी नहीं सुगम सो सुजननि को सुलभ करत । भाव भरत जी
 की दशा स्मरण करि के श्रीरामपद में प्रीति उपजति है “कहत छुनत
 सनिभाव भरत को । सीयरापद होइ न रत को” । निज यश रूप सुर-
 तह को सृजि के तुलसी कहं बांछित फरनि को को फरन भरत जी
 प्रति श्रीराम जी की उक्ति है “मिटिहै पाप प्रपंच सब अखिल अपंगल-
 भार । बोक सुजस परलोक मुख सुमिरत नाम तुम्हार” ॥३॥१२॥

सुनि रनघायल लघन परे हैं । स्वामि काज संयाम

सुभट सो लोहै ललकि लरे हैं ॥ १ ॥ सुवन सोक संतोष
 सुमित्रहिं रघुपति भगति वरे हैं । छिन छिन गात सुपात
 छिनहिं छिनु हुलसत होत हरे हैं ॥ २ ॥ कपि सों कहत
 सुभाय अंब के अंबक अंबु भरे हैं । रघुनंदन विनु बंधु कुंभ-
 वसर जयपि धनु दुसरे हैं ॥ ३ ॥ तात जाहु कपि संग रिपु-
 सूदन उठि कर जोरि परे हैं । प्रमुदित पुलकि पैत घूरे जनु
 विधिवस सुठर ठरे हैं ॥ ४ ॥ अंब अनुज गति लपि पवनज
 भरतादि गलानि गरे हैं । तुलसौ सब समुझाई मातु तेहि
 समय सचेत करे हैं ॥ ५ ॥ १३ ॥

सुनि ६० । स्वामी के कार्य हेतु संग्राम में सुभट जो मेघनाद तासों
 ललकारि के लोह करि लरें हैं नेहि रण में लपणलाल घायल परे हैं
 यह सुनि के सुमित्राजू को पुत्र को शोक है औ लक्ष्मणजू रघुपति की
 भक्ति को वरे कहैं अंगीकार किए हैं ताते संतोष है याते छिन छिन में
 गात सुपात औ छिन छिन में हुलसत औ हरे होत है ॥ १ ॥ २ ॥
 माता के नेत्रों में जल भरे हैं स्वाभाविक कपि सों कहति हैं यद्यपि धनु
 दूसरा है अर्थात् सहायक है तथापि कुअवसर में बिना बंधु के रघुनन्दन
 भए ॥ ३ ॥ हे रिपुसूदन अब तुम हनुमान के संग जाउ यह सुनि
 सज्जुहान जू हाथ जोरि के खड़े होत भए आनन्द करि पुलकित होत
 भए मानो पूरे दाव पर बिबे के बस पास सुन्दर दार से दरे हैं माना
 फी औ सज्जुहान की दशा देखि हनुमान ज औ भरत आदिक गलानि ने
 गरत भए तेहि समय में मातु के समुझाय के सब सनेत करे हैं ॥ ४ ॥ १३ ॥

विजय सुनाइ वीर परि पाय । कहौं कहा कपोस तुम्ह
 मुचि मुमति सुद्ध सुभाय ॥ १ ॥ स्वामि संकट हेतु हौं जड
 दाननि जनम्यौ जाय । समय पाइ कहाइ सेवक घट्यौ तौन
 सहाय ॥ २ ॥ कहत मिथिल सनेइ भो जनु धीर घायल
 घाय । भरतगति लपि मातु सब रहि ज्यों गुह्री विनु माय ॥

॥ ३ ॥ भेट कहि कहियो कह्यौ यों कठिनमानस माय ।
लाल लोनें लपन सहित मुललित लागत नाय ॥ ४ ॥ देखि
बंध मनेह अंध सुभाउ लपन कुठाय । तपत तुलसी तरनि-
बामकु ठाँह नये तिहुं ताय ॥ ५ ॥ १४ ॥

बिनय ६० ॥ १ ॥ जाय व्यर्थ, प्रज्यो तौन सहाय सहाय में युक्त
न पयो ॥ २ ॥ उयो गुडी बिनु वायु जंस ये हवा की गुडी ॥ ३ ॥
श्रीकौशिल्याजू कहति हैं कि हमारो भेट कहि कै पेंसो कहना कि
तुम्हारी कठिनमानस माता ने अस कहा है कि हे लाल नाय कहें
नाव तुम्हारी लपन सहित ललित लागत है । भाव निज शोभा जो
बाहो तो लपनसहित आओ ॥ ४ ॥ भरत शत्रुहन को सनेह औ
माता को सुभाव औ लपन को कुठाव में देखि कै तरनि जो सूर्य तिन
के पास देनिहारे जो हनुमानजू सो यह नये तीनों ताप से तपत हैं ।
शंका । नन्दिग्राम में श्रीकौशिल्याजू आदि कैसे पास भई । उत्तर ।
महात्मन के मुख से अस सुना है जब लक्ष्मणजू को शक्ति लगी तब
सुमित्राजू स्वप्न देख्यो कि भुजा को सर्प लील्यो, सो जाय श्रीवशिष्ठजू
सो कहाँ सो मुनि वशिष्ठजू कहाँ कि लक्ष्मण को कुछ आरिष्ट है सो
ताके हेतु यह शांति के अर्थ किया चाहिए परन्तु यह समय राक्षस
करि यह नहीं होय पावत । भरत जो रक्षा करें तो यह होय तब सब
मिछे नन्दिग्राम में भरत के समीप आय के समाचार कहे । तब भरत
बिना गासी को वान लै करि रक्षा हेतु धरे ताही समय में हनुमान
आए सो निश्चर के भ्रम से भरतजू मारत भए ॥ ५ ॥ १४ ॥

हृदय घाउ मेरे पीर रघुवीरै । पाइ सजौवन जागि
कहत यों प्रेम पुलकि विसरै सरौरै ॥ १ ॥ मोहि कहा वृक्षत
पुनि पुनि जैसे पाठ अरथ चरचा कीरै । सोभा सुप छति
लाह भूप कहुं केवल कांति मोल हीरै ॥ २ ॥ तुलसी मुनि
सौमित्रवचन सब धरि न सकत धीरौ धीरै । उपमा राम
लपन को प्रीति कौ क्यों दोऊ छीरै नीरै ॥ ३ ॥ १५ ॥

हृदय ३० । श्रीलक्ष्मण जू सजीवन के पाय के जागि के प्रेम में पुलकि के देहाध्यास विसारि के अस कहत हैं कि हम को पुनि पुनि कहा वृद्धत हो, जो घाव देखनो होय तो हमारे हृदय में देखो ओ पीर पूलना होय तो श्रीरघुवीर जू सो पूछो । जैसे पाठ के अर्थ की चर्चा सूगा से कोऊ पूछें । भाव तस हम से पूछना है । शोभा सुख हानि औ लाभ राजा कहं है हीरा को केवल कांति औ मोल मात्र है, अस लक्ष्मणजू को वचन मुनि धीरो धीर को नहीं धरि सकत है । श्रीराम-लपन की प्रीति की उपमा छीर औ नीर की क्यों दिजिए । भाव उन की प्रीति खटाई आदि तें विलगति है ॥ ३ ॥ १५ ॥

राग कान्हरा । रातज राम कामसत सुंदर । रिपु रन जीति अनुजसंग सीमित फेरत चाप विसिप वनरुह कर ॥ १ ॥
 श्याम शरीर रुचिर स्वम सीकर सोनितकन विच बीच मनो-हर । जनु पद्योतनिकर हरिहित गन भोजत मरकत शैल सिपर पर ॥ २ ॥ घायल वीर विराजत चहुं दिसि हरपित-सकल रीछ अरु वनचर । कुसुमित किंसुक तरु समूह महं तरुन तमाल विसाल विटपवर ॥ ३ ॥ राजिवनयन विलोकि कृपा करि किये अभय मुनि नाग विबुध नर । तुलसिदास यह रूप अनूपम हृदिसरोज बसि दुसह विपति हर ॥ ४ ॥ १६ ॥

अब रावणादि सब निशाचरों के वध के अनंतर श्री रघुनाथ जी के स्वरूप को, वर्णन करत हैं । रातज ३० । वनरुह कमल ॥ १ ॥ सुंदर श्याम शरीर में सुंदर श्रमविन्दु औ बीच २ में श्रोणितकण हैं । मानो खद्योत समूह औ हरिहित जे चंद्रमा तिन के गण जे तारा ते मरकत शैल के सिपर पर शोभत हैं इहां खद्योत श्रोणितकण है औ तारा श्रमविन्दु है मरकत शैल श्रीराम को शरीर है खद्योत को कोऊ देश में जुगनु कोऊ देश में भगजोगिनी कहत हैं औ जो खद्योत सूर्य वाचक होय तौ भी वनत है क्योंकि अरुण रंग सूर्य का भी है ॥ २ ॥

मानो फूले मग पल्लव के नरु समूह में गुवा श्रेष्ठ विगाल तमाल को
हस है । इहां गायल वीर फूले पल्लवसम हैं तमालसम श्रीराम हैं
॥ ३ ॥ ४ ॥ १६ ॥

राग अमावसी । अथधि आजु किधों श्रीरो दिन है हैं ।
चटि धवरहर विलोकि दपिन दिसि वृक्ष धों पथिक कहा
ते आए वै हैं ॥ १ ॥ वहरि विचारि हारि हिय सोचति
पुनकिगात नागे लोचन धौ हैं । निज वासरनि वरप पुरवैगो
विधि सेरे तछं करम कठिन कृत हो हैं ॥ २ ॥ वन रघुवीर
मातु गृह जीवति निलज प्राण सुनि सुनि सुप सै हैं । तुल-
सिदास मो सी कठोर चित कुलिश सालभंजिको न है हैं
॥ ३ ॥ १७ ॥

अथधि ३० । श्रीकौशल्या जू की वक्ति रघुनाथ के आइवे फो
दिन आगुइ है कि दुइ दिन और है सखी ते कहति है कि अटारी पर
पादि के दक्षिण दिशा देखि के पथिक सो वृक्ष कि वै कहाँ ते आए हैं ।
भाव कदापि कहीं रघुनाथ से आवत के भेंट भई होय ॥ १ ॥ पिचार
करि हारि हिय सोच करत हैं पुलकावली अंग में है आ नैनन से आँसू
रूपकन लगे । अब हृदय में सोचत हैं कि तहां विधाता के निकट मेरे
हुन कठिन कर्म कोई है ताते ग्रह्या अपने दिनन सों चौदह वर्ष पुरवैगो
॥ २ ॥ कुलिश सालभंजिको न है हैं कुलिश कहै वज की सालभंजिका
कहै मतिमा सो भी नहीं होगी ॥ ३ ॥ १७ ॥

आत्मी अब राम लपन कित सै हैं । चिचकूट तज्यो तब
ते न लही सुधि वधूसमेत कुसल सुत सै हैं ॥ १ ॥ वारि
वयारि विषम हिम आतप सटि विनु वसन भूमितल सै हैं ।
कंद मूल फल फूल असन वन भोजन समय मिगत सै हैं
वै हैं ॥ २ ॥ किन्हहि विलोकि सोचि ते लता द्रुम पग नग

सुनि लोचन जल च्छेहैं । तुलसिदास तिन्ह को जननी हैं
मो सो निठुर चित औरैं कहुं छेहैं ॥ ३॥१८ ॥

आली ३० । शंका । हनुमान जी से तो सब वृत्तान्त सुने रहीं
चित्रकूट तज्यो तब ते न लही सुधि यह कैसे कहति हैं । उत्तर । व्या-
कुलता करि । अपर पद सु० ॥ १८ ॥

राग सोरठ । बैठी सगुन मनावति माता । कब ऐहैं
मेरे बाल कुसल घर कहहु काग फुरि वाता ॥ १ ॥ दूध भात
की दोनी देहैं सोने चोंच मटेहैं । जव सियसहित
बिलोकि नयन भरि राम लपन उर लैहैं ॥ २ ॥ अवधि
समोप जानि जननी निय अति चातुर अकुलानी । गनक
बुलाइ पाय परि पृकृति प्रेम भगन मृदुबानी ॥ ३ ॥ तेहि
अवसर कोउ भरत निकट तें समाचार लै आयौ । प्रभु आग-
मन सुनत तुलसी मानो मौन सरत जल पायौ ॥ ४ ॥१८॥

वैठी ३० । पद सुगम ॥ १९ ॥

राग गौरी । छेमकरी बलि बोलि सुबानी । कुसल छेम
सिय राम लपन कब ऐहैं अवधि अवध रजधानी ॥ १ ॥ ससि-
सुधि कुंकुमवरनि सुलोचनि मोचनि सोचतु वेद बपानी ।
देवि दया करि देहि दरसफल जोरि पानि विनवाहि सब
रानी ॥ २ ॥ सुनि सनेहमय बचन निकट ह्वै मंजुल मंडल
कौ मडरानी । सुभ मंगल आनंद गगन धुनि अकनि
अकनि उर जरनि जुडानी ॥ ३ ॥ फरकन लगे मुभंग विदिसि
दिसि मन प्रसन्न दुप दसा सिरानी । करहि प्रनाम सप्रेम
पुलकि तन मानि विविध बलि भगुन मयानी ॥ ४ ॥ तेहि
अवसर हनुमान भरत सो कही मकन कल्याण कहानी ।

तुलसिदास मोड़ चाह मज्जीवनि विषम वियोग बिधा बड़ि
भानी ॥ ५॥२० ॥

उप ३० । छपकरी मपेदमुखवाली चीन्ह को कहत हैं । फाहू देश
में खेपकल्पानी कहत हैं । ऐह अवधि अवध रजधानी । रजधानी की
जो मोवां तेहि भयोध्या जी में कव ऐहें ॥ १ ॥ हे शशिमुखी हे
अरणवर्णा तूं कईं तुष ॥ २ ॥ ३ ॥ मानि विविधि बलि अनेकन पूजा
पानि के ॥ ४ ॥ सोई कल्पान कहानी रूप इच्छित सजीवन ने विषम
विपोगजनित जो बड़ी व्यथा ताको जराय दिए ॥ ५ ॥ २० ॥

राग धनाथो । सुनियत सागर सेतु बंधायो । कोसलपति
को कुसल सकल सुधि कीउ एक दूत भरत पड़ि ल्यायो ॥ १ ॥
बधो विराध त्रिसिरा पर दूषन सूपनषा को रूप नसायो ।
इति कदंध बल बंध बालि दलि कृपामिंधु सुघौव बसायो
॥ २ ॥ सरनागत अपनाइ विभीषन रावन सकुल समूल
बहायो । विबुधसमाज निवाजि बांछ दी बंदि श्रीरवर
बिरुद कहायो ॥ ३ ॥ एक एक सों समाचार सुनि नगर
लोग जहं तहं सब धायो । धन धुनि अकनि सुदित मयूर
ज्यों बूडत जलधि पार सो पायो ॥ ४ ॥ अवधि आजु यों
कहत परसपर बेगि विमान निकट पुर आयो । उतरि
अनुज अनुगनि समेत प्रभु गुरु द्विज गन चरननि सिरु नायो
॥ ५ ॥ जो जेहि लोग राम तेहि विधि मिलि सब के मन
पति मोद बढायो । भेंटौ मातु भरत भरतानुज क्यों कहीं
प्रेम अमित अनमायो ॥ ६ ॥ तेही दिन मुनिवृंद अनंदित
तुरित तिलक की साज सजायो । महाराज रघुधंसतिलक
को सादर तुलसिदास गुन गायो ॥ ७॥२१ ॥

सुनियत ३० सु० ॥ १॥२॥३॥ मेघधुनि सुनि के जैसे मयूर महदित

होत अर्थात् तस प्रमुदित भए औ जस समुद्र में बूझत पार पावै तस
पाए ॥४॥ अनुग सेवक ॥ ५ ॥ अनमायो जो न अमाय ॥६॥ ७॥ १॥

राग जयतिथी । रन जीति राम राउ आए । सानुन
सदल ससीय कुसल आजु अवध अनंद वधाए ॥ १ ॥ अरि-
पुर जारि उजारि मारि रिपु विनुष सुवास वसाए । धरनि
धेनु महिदेव साधु सब के सब सोच नसाए ॥ २ ॥ दर्ई लंक
थिर यथो बिभीषन वचन पियूष पिआए । सुधा सींचि कपि
कृपा नगर नर नारि निहारि जिआए ॥ ३ ॥ मिले गुर बंधु
मातु जन परिजन भए सकल मनभाए । दरस हरष दस-
चारि वरष के दुष पल में बिसराए ॥ ४ ॥ बोलि सचिव
सुचि सोधि सुदिन मुनि मंगल साज सजाए । महाराज
अभिषेक वरषि मुर सुमन निसान बजाए ॥ ५ ॥ लै लै भेंट
नृप अहिप लोकपति अति सनेह सिरु नाए । पूजि प्रीति
पहिचानि राम आदरे अधिक अपनाए ॥ ६ ॥ दान मान
सनमानि जानि रुचि जाचक जन पहिराए । गए सोक सर
सूधि मोद सरिता समुद्र गहिराए ॥ ७ ॥ प्रभुप्रताप रवि
अहित अमंगल अब उलूक तम ताए । किए बिसोक हित
कोक कोकनद लोक सुजस सुभ छाए ॥ ८ ॥ रामराज
कुलि काज सुमंगल सवनि सवै सुष पाए । देहिं असीस
भूमिसुर प्रमुदित प्रजा प्रमोद बढाए ॥ ९ ॥ आसम धरम
विभाग वेद पथ पावन लोग चलाए । धरम निरत सियराम
चरन रत मनहुं राम सिय जाए ॥ १० ॥ कामधेनु सहि बिटप
कामतप्त कोउ विधि वाम न लाए । ते तव अब तुलसी तेज
जिन्ह हित सहित राम गुन गाए ॥ ११॥ १२॥ -

रण० सु० ॥ १॥२ ॥ युधा मे साँचि के कपिन को औ कृपा से
र के नर नारि को जिआवन भए ॥ ३ ॥ दरश हरष दर्शन के हर्ष
मदाराज अभिषेक मदाराज के अभिषेक होने में ॥ ४ ॥ ५ ॥ अहिप
राने शेष चायुकी आदि औ इन्द्रादि लोकपाल ॥ ६ ॥ सोक रूप
र मुखि गए औ भानंद रूप सरिता औ समुद्र अथाह होत भए
॥ मधु के प्रताप रूप सूर्य ने अहित औ अमंगल औ अघ रूप
क को मुखदायी जो तम ताको नाश किए । इहां तम करि अधिघा
औ हिन रूप चक्रवाक औ कमल को विगत सोक किए औ लोक
दर यम शुभ छाए ॥ ८ ॥ श्रीरघुनाथ के राज्य में सब काज में
ल भयो औ सब ने सब प्रकार के सुख पाए ॥ ९ ॥ यनहुं राम
जाए मानो श्री सतिाराम के पुत्र हैं । भूमि काम धेनु होत भई औ
कल्पतरु होत भए औ फोऊ पर विधाता वाम न भए ते प्रजा तब
राज्य में सुखी भए अघ तेऊ सुखी हैं जे हितसहित रामगुण
॥ १० ॥ २२ ॥

राग टोड़ी । आनु अवध भानंद वधावन रिपु रन
ते रामु घर आए । सजि सुविमान निसान बजावत
हत देव देपन धाए ॥ १ ॥ घर घर चारु चौक चंदन
मंगल कलस सवनि साजि । धुज पताक तोरन वितान
विविधि भांति बाजन बाजि ॥ २ ॥ रामतिलक सुनि
दीप के नृप आए उपहार लिए । सौयसहित आसीन
आसन निरपि जोहारत हरपि दिये ॥ ३ ॥ मंगल गान
धुनि जयधुनि मुनि आसीस धुनि भुवन भरे । वरपि
न सुर सिद्ध प्रसंसत सब के सब संताप हरे ॥ ४ ॥ राम-
भद्र कामधेनु सहि सुष संपदा लोक छाए । जनम
म जानकीनाथ के गुनगन तुलसिदास गाए ॥ ५ ॥ २३ ॥

इति श्री रामगीतावल्यां लंकाकाण्डः समाप्तः ।

आजु इ० ॥ १ ॥ घर घर में सुंदर चौक चंदन ते औ मणि ते औ
 मंगल कलश सब ने साजे तोरण कहैं बंदनवार बितान कहैं मंडप ॥२॥
 उपहार भेंट, आसीन बैठे ॥ ३ ॥ ४ ॥ श्री रघुनाथ के राज्य में भूमि
 कामधेनु भई सुख औ संपदा सब लोक में छावत भई जन्म जन्म में
 जानकीनाथ के गुनगन को गाए । इहां जन्म जन्म पद ते अपने को
 बाल्मीक जी को अवतार सूचन किए । स्पष्ट श्रीनाभा जी लिखे “कलि
 कुटिल जीव निस्तार हित बाल्मीक तुलसी भयो” लंका कांड की समाप्ति
 जैसे बाल्मीक जी रामराज्य में किए तैसे गीतावली में गोसाईं जी किए ।

दोहा ।

मंगल श्री सरयू सरित, मंगल विविन प्रमोद ॥
 मंगल सीता राम जू, जो मोदहु को मोद ॥
 इति श्रीतुलसीदासकृतरामगीतावलीप्रकाशिकाटीकायां श्रीसीताराम-
 कृपापात्र श्रीसीतारामीय हरिहरप्रसादकृतौ लङ्काकाण्डः समाप्तः ।

श्रीसीतारामाभ्यां नमः ।

मटीक गीतावली—उत्तरकाण्ड ।

मङ्गलाचरण—दोहा ।

इत फलैगी उत चंद्रिका, कुंडल तरियन कान ।
मिय सियबल्लभ मो सदा, बसो हिये बिच आन ॥ १ ॥

मूल ।

राग मोरठ—वन ते आइ कौ राजा राम भए भुभाल ।
मुदित चौदह भुवन सब सुख सुखी सब सब काल ॥ १ ॥ मिटे
कलुष कलैस कुलधन कपट कुपय कुचाल । गठ दारिद्र टाप
दाहन दह टुरित दुःखान ॥ २ ॥ कामधुक सहि कामतह तरु
उपल मनगन माल । नारि नर तेहि समय मुकतो भरे भाग
भुभाल ॥ ३ ॥ बरन आश्रम भरम रत मन बचन दीप मराल ।
राग मिय मैयक मंगड़ा माधु मुमुष रमाल ॥ ४ ॥ रामराज
समाज घरनत मिठ नुर दिगपाल । सुगिरि सो तुलसी चरु
हिय हरप होत बिमान ॥ ५ ॥ १ ॥

टीका ।

वन १० । भए भुभाल पृथ्वीपालन में मुक्त भए चौदहो भुवन के राजा
नव रतिन श्री गणेश में नव मृग हरिमुखी होत भए । १० वन बने
बनेन जो रोगजनित श्री कृष्णन कृष्णदेवनादि मो मिटे श्री बल्लभ
भी कुरंग में परि जो दुखान न चमन रहे मो मिटे श्री हारण हरे होत

दंभ औ पाप रूप दुकाल अर्थात् दुरभिक्षादि तें जो दारिद्रजनित दोष रहे सो गए ॥ २ ॥ भूमि कामधेनु भई, वृक्ष कल्पवृक्ष भए, पाथर सब लालमणि के समूह भए अर्थात् चिन्तामणि भए औ तेहि समय में नारि नर मुकृती औ सुन्दर भाल अपना भाग्य तें भरत भए ॥ ३ ॥ वरणाश्रम धर्म में रत औ मन वचन करि हंस सम बेपधारी अर्थात् बोली मधुर औ बेपौ उज्ज्वल औ राम सिय के सेवक औ सनेही औ परकार्यसाधक औ सुमुख कहैं प्रसन्नमुख औ रसयुक्त वचन अर्थात् मिष्ठभाषी ॥ ४ ॥ १ ॥

राग ललित—भोर जानकीजीवन जागे । सूत मागध प्रवीन विनु बोना धुनि द्वारे गायक सरस रागरागे ॥ १ ॥ स्यामल सलोने गात आलसबस जभाँति प्रियाप्रेमरस पागे । उनीदे लोचन चारुमुष सुपमा सिंगारु हेरि हारे मार भूरि भागे ॥ २ ॥ सहज मुहाई छवि उपमा न लहै काव सुदित बिलोकन लागे । तुलसिदास निसिवासर अनूप रूप रहत प्रेम अनुरागे ॥ ३ ॥ २ ॥

भोर ३० । सूत पौराणिक, मागध वंशप्रसंसक, सरस रागते रागे कहैं गावत भए । उनीदे लोचन नन्दि भरे नयन सुन्दर और मुख की परम शोभा देखि शृंगार रस हारे औ एक के को कहै बहुत काम भागे ॥ १ ॥ स्वाभाविक सुन्दर छवि ताकी उपमा कवि नहीं पावत । हर्षित सब देखन लागे यह अनूप रूप के प्रेम में राति दिन दास अनुरागे रहत हैं ॥ २ ॥ ३ ॥ २ ॥

राग कल्याण—रघुपति राजीवनयन सोभा तन कीटि मयन करुनारस अयन चयन रूप भूप माई । टेपो मपि अतुलित छवि संतवंध कानन रवि गावत कल कीरति कवि कीविद ममुदाई ॥ १ ॥ मञ्जन करि सरजुतोर ठाटे रघुवंश वीर सेवत पदकमल धीर निरमल चित लाई । ब्रह्ममंडली

सुनीन्द्रहस्त मध्य इन्द्रवदन राजत मुष्मदन लोकलोचन सुप-
 राई ॥ १ ॥ विद्युरित मिररुहवन्द्य कुंचित विच सुमनजूध-
 मनिज्जग मिथुफनि यनोक ममि समोप आई । जनु समीत
 है रकोर राधि गुग रुचिर मोर कुंडलछवि निरपि चोर मनु-
 दत अधिकाई ॥ ३ ॥ ललितभृकुटि तिलकभाल विभुक्त
 दधर दिङ्ग रमाल डाम उत्तर कवीन नामिका मुहाई ।
 मधुकर जग पंकज विच मुक्त विनोकि नोरज पर जगत
 मधुर अवली मानो घीवि कियो जाई ॥ ४ ॥ मुंदर पट पीत
 विमद भ्राजत घनमाल उरमि तुलसिका प्रसून रचित
 विविध विधि बनाई । तनु तमाल अधविच जनु विविधि कीर
 पाति रुचिर ऐमजाल अंतर परि ताते न उहाई ॥ ५ ॥ संकर
 हटि पुंडरीक निवसत हरि चंचरीक निरव्यलोक मानस गृह
 मंतत रहे छाई । अतिमय आनंद मूल तुलसिद'म सानभूल
 परन सकल सुल अवधमंडन रघुराई ॥ ६ ॥ ३ ॥

रघुपति ॥ १० ॥ सखी प्रति सखी कहति है । री माई अर्थात् री सखी रघु-
 पति जो कमलनयन हैं औ जिन के तन की शोभा कोदिपयन सम हैं औ
 करणारम के अयन कहे गृह हैं औ चैनदाता रूप भूर हैं जिन को यागायत
 चैन कहे आनंद रूप ब्रह्मादि तिन के भूप हैं तिन को देखो अतुलित छवि
 है उन की औ मंत रूपी कमल वन के सूर्य हैं अर्थात् प्रफुलित करनिहारे
 हैं औ उन की मुंदरि कीरति कवि पंडितन को ममुदाय गावत हैं ॥ ११ ॥
 सो श्रीरघुवंश वीर स्नान करि के सरजूतीर में खेद हैं । धीर कहे शानी
 अपने निर्मल चित्त को लगाय उन के पद कमल को भवत हैं । ब्राह्मणन
 की मंडली औ मुनिन के समूहन के बीच में चन्द्रवदन सुखसदन
 सब लोग के नैनन को सुखदाता श्रीरघुनाथ सोहत हैं । ब्राह्मण वशिष्ठ
 न्याय करि ब्रह्ममंडली ते मुनीन्द्रहस्त पृथक् लिखे ॥ १२ ॥ मिररुह

कहैं वार कुंचित कहैं टेढ़े तिन को वरुख कहैं समूह विधुरित कहैं विखरे भए हैं । तिन के बीच बीच फूलन के गुच्छे गथे हैं, सो मानो मणि-युक्त सर्पन के बालकन की सेना चन्द्रमा के समीप आई है, सो सेना देखि चन्द्रमा डरि अकोर दै जुगल सुंदर कुंडल जो मयूर है ताको राखे अर्थात् सर्प को मयूर खात है तिन कुंडल मयूरन की छवि देखि चोर सर्पबालक बहुत सकुचत हैं । इहां मणि गूथे भये पुष्प है, सिसुफाणि की सेना टेढ़े विखरे वार हैं चन्द्रमा मुख है कुंडल के आहं कर वार मुख पर नहीं आय सकत है सो सकुचना है । शंका । सर्प को मणि गुप्त रहत हैं इहां फूल तो प्रगट है । उत्तर । मणि जो सिर पर गुप्त रहत है ताकी आभा बाहर चमकत है तैसे बालन में पुष्प गुप्त हैं किंचित् पखुरी जो निकली है सो आभा रूप हैं ॥३॥ भौंहें ललित हैं औ भाल तिलक औ ठोड़ी औ ओठ औ दांत रसीले हैं हंसी अति सुंदर है औ कपोल नासिका सुंदर है मानो नीरज कहैं कमल इहां कमल करि नेत्र जानना तिन के ऊपर भ्रम की अवली लरत हैं, यहां भ्रमर की पंक्ति दोनो भौंहें हैं सो कमल रूप नेत्र के रस पान करिने हेतु लरत हैं सो विलांकि मधुकर जुगल जो कमल में हैं, इहां मधुकर जुगल कस्तूरी को तिलक रेख है । जो केसर को तिलक मानो तो पीत जुगल मधुकर जानो पंकज मुख है अर्थात् कमल वदन पर जो जुगल मधुकर तिलक रेख सो औ नासिका रूप सुधा सो दोऊ के बीच अर्थात् दोऊ भौंह भ्रमरावली के बीच कियो । भाव धरहर कियो जाय कै ॥ ४ ॥ सुंदर पीत वस्त्र धारे हैं औ विमद वनमाल तुलसी औ पुष्प करि रचित त्रिविधि विधान ते बनाई उर में शोभत । मानो तमाल वृक्ष के अधविच त्रिविध सूगन की पांति नचिर बैठी है । कोऊ संदेह करै कि पक्षी चंचल होत हैं धिर क्यों हैं गढ़े हैं, ता हेतु लिखत हैं कि सोने के जाल के भीतर परे हैं ताने उड़ात नहीं हैं । इहां तमाल तरु राघव हैं । अधविच वसस्थल है त्रिविध कीर पांति वनमाला जो हरित श्वेत पीत तुलसी पुष्पन करि है सोई, सोने की जाल पीत वसन है ॥ ५ ॥ त्रिव जी के हृदय कमल यों राम रूपी भंवर जो नेवास करत है औ विवर्णलीक कहैं दूषनरहित मानम कहैं हृदय रूप गृह में निरंतर जो छायो रहत है औ अतिस आनन्द को मूल है औ

महल भूय हरिदासो औ श्री अवध के गंडन कहैं भूपन करनिदासो
पुसी, मैं जो तुलसीदास ना पर मानुहुल रहौ ॥ ६॥३॥

राजत रघुवीर धोर भंजन भदभीर पीरहरन मकल
मरजुतीर निरपलु सपि मोहैं । रंग अनुरज मनुरजनिवार
दनुजधन विरंगकरन जंग जंग कवि अनंग अगनित मन
मोहैं ॥ १ ॥ मुपमा मुप मोल नयन नयन निरपि निरपि नील
कुंचितक्षत्र कुंडल कल नासिक चित पोहैं । मनरं कुंडुविंध
मध्य बांज मोन प्रेजन लपि मधुप मकार कीर पाए तकि त-
कि निज गोहैं ॥ २ ॥ ललित गंडमंडल मुविमाल भाग-
तिनक भालक मंजुतर अवध अक रुचिर वंक भौहैं । अरुन
धधर मधुर शील दमन दमक दामिनिदुति ललमति प्रिय
दमनि चारु चितवनि तिरछौहैं ॥ ३ ॥ कंबुकंठ भुजविमाल
उरनि तरुन तुलसिमाल मंजुल मुक्तावनिजुत जागति श्रिय
मोहैं । ललु कलंद नंदनिमनि इंद्रनाल सिधर पर मिध-
मति लमति हंसरनि मंदुल अधिकौ हें ॥ ४ ॥ दिव्यतर
दुल्लभ भव्य नयन रुचिर चंपकचय चंचला कलाप कमल निकर
पनि किधौ हें । मज्जन चप भपनिहित भूपन मनिगन
ममेत रूप जलधि वपुष नित मन गर्यंद वीहैं ॥ ५ ॥ अरुनि
पेवन चातुरी तुरीय पैपि प्रेममगन पगन परत इत उत मय
प्रक्षित तैहि समो हें । तुलसिदास यह मुधि नहि कोन का
कहां ते पाए कोन पाए ताके टिग कोन ठाउं कोहें ॥ ६ ॥

राजत ६० । श्री मर्त्या रघुवीर धोर भंजन हरिदास भदभीर धोर
पौ औ मकल पीर हरिदास मरजु नीर मैं नेरे मोहैं वंदे मनदुल
गोपन हें देखहु । भाई औ पतुन मनुष्य संग हें औ दनुज हें दह रो

विसेप तोदनिहारे हैं जो दनुजवन पाठ होय तो अस अर्थ करना
 दनुज रूप वन को तोदनिहारे हैं । हैं तो पंख बलिष्ठ पर सुंदर ऐसे हैं
 कि अंग अंग की छवि पर एक को को कहै अगिनित काम माँहें ॥१॥
 परमा शोभा औ मुख औ जील के मृदु जे नैन हैं तिन्हें देख औ द्रियम
 टेढ़े चाल औ कुंडल औ सुंदर नासिका जे चित्त पोहत हैं तिन्हें देख ।
 भाव वशकरि लेत हैं सो मानो चंद्रमा के बिंब के मध्य में कमल
 मछरी पंजरीट लखि कै भंवर मछरी सुआ अपने अपने गौहें कहैं
 संबंध जानि आए । इहां चंद्रबिंब श्री राघव को मुख है तेहि मध्य कमल
 मीन खंजन रूप नेत्र है तेहि को देखि कै कमल जानि बाल रूप भ्रमर
 आए औ कुंडल रूप मकर अपनो सजाती नेत्र मीन को मानि आए
 औ नासिका जो फीर सोऊ अपनो सजातीय अर्थात् पक्षी नैन खंजन
 को जानि आए ॥ २ ॥ ललित कपोल मंडल है औ सुंदर बिसाल
 भाल तामें तिलक अति सुंदर टेढ़ी भाँहें अंक सम है औ लाल ओठ
 हैं घोल मधुर हैं दांतन की चमक दामिनि की दुति सम है हंसनि औ
 तिरछी चितवनि देखि हृदय हुलसति है ॥ ३ ॥ संख के तीन रेखा
 सम कंठ है भुज बिसाल है उर में तुलसी की माला मोतिन की माला
 युक्त है जाको योगी जिय सो देखत हैं मानो यमुना जी नीलमणिद्र
 पहार के सिखर को परसि धसति कहैं गिरति तहां हंसनि की पंक्ति
 संकुल कहैं संकीर्ण अधिक होती अर्थात् एक में एक सटि लसति इहां
 यमुना तुलसी की माला है मनींद्रनील रघुनाथ हैं सिखर कांधा है
 ताको परमि धारासम माला नीचे को गिरयो है ताके पास मोतिन
 की माला है सो हंस की पंक्ति है ॥ ४ ॥ अति अलौकिक पीत वसन
 भव्य कहैं सुंदर नवीन जो है सो कैधों सुंदर चंपा के पुष्पन का समूह
 है कैधों बिजुरीन को समूह है कैधों सोनानि के भ्रमरन को समूह है
 अर्थात् पीत भ्रमरन का समूह है औ रूप रूपी समुद्र जो है सो भूपन
 रूप मनिगन समेत सज्जन के नेत्र रूप मछरी के निकेत कहैं रहिवे
 को स्थान है । भाव समुद्र में मछरी रहत है सो इहां सज्जन का नेत्र है,
 वहां मुनिगन रहत इहां भूपन है, तेहि रूप रूपी समुद्र में मन रूप
 हाथी को वपुष कहैं सरीर बोह लेत है अर्थात् ह्वत उतिराति है ॥५॥

सर्गों के रचने की चतुर्गति प्रदर्शित करते मुनि नव तुरंग जो श्रीरघु-
नाथ तिन की देखि के प्रेम में दूबन भई . पग नहीं इन घर के ओर
एत न इन घरक ओर परन नेहि समय यों सब चक्रिन है गई । गोसाईं
हो कहन है यह मुनि नहीं रही कि कवन की हों आं फेहि ठांव ते
मां जो जान जान करना है फांके दिग हों आं कवन ठांव के रहेया
हो तुरंग ने रघुनाथ घोष हेतु प्रमान : “तुरीया जानकी प्रोक्ता तुरीयो
रघुनंदनः” इति महागमायणे ॥ ६॥४ ॥

टेंपु सपि आजु रघुनाथ मोभा घना । नील नौरद वरन वपुष
भुवनाभरन पीत अयर धरन हरन दुतिदामिनी ॥ १ ॥ सरजु
मज्जन किये संग मज्जन लिये हेतु जनपर हिये कृपा कीमल
घनी । मज्जनि आवत भजन मत्त गजवरगवन लंक मृगपति
ठवनि सुवर कोसल धनी ॥ २ ॥ सघन चिक्कन कुटिल चिकुर
विलुलित मृदुल करनि विवरत चतुर सरस सुपमा जनी ।
ललित अहिंसमुनिकर मनहुं ससि सन समर खरत धर-
हरि करत रुधिर जनु जुगफनी ॥ ३ ॥ भाल भ्राजत तिलक
जलज लोचन पलक चारु भू नासिका सुभग मुक आननौ ।
विभुक्त सुंदर अधर अरुन द्विज दुति सुधर वचन गंभोर मृदु
हास भव भाननी ॥ ४ ॥ सवन कुंडल विमल गंड मंडित
पपल कलित कलकांति अति भांति कछु तिन तनौ । जुगल
कंचन मकर मनहुं विधुकर मधुर पिपत पहिचानि करि
सिंधु कीरतिभनी ॥ ५ ॥ उरसि राजत पदिक जीतिरचना
अधिक माल सुविमल चहुं पास वनी गजमनी । स्याम नव
जलद पर निरपि दिनकर कला कौतुको मनहुं रहि घेरि
उडगन अनौ ॥ ६ ॥ मंदिरनि पर परी नारि आनंद भरी
निरपि वरपहि विपुल कुसुम कुंकुम कनी । दास तुलसी राम

परम करुना धाम काम सतकोटि मद हरत छवि आपनी
॥ ७ ॥ ५ ॥

देखु इति । हे सखी आजु जो रघुनाथ की शोभा बनी सो देखु ।
श्याम मेघ सम शरीर को रंग है सो शरीर समस्त भुवन के आभरन
कहैं भूपन रूप है औ पीतवसन का जो पहिरन है सो दाहिनी की
धृति हरनिहारो है, सरजू ते भंजन किए संग में सज्जनन को लिए हेतु
कहैं भीति जन के ऊपर जिन क हृदय में है औ कृपा करि कोमल
स्वभाव धनी कहैं अत्यंत है औ मतवारे श्रेष्ठ हाथी सम चाल है औ
लंक कहे कठि औ ठवनि कहे भकड़ सिंह सम है । हे सजनी कोशल
धनी कुंअर भौन आवत है ॥ २ ॥ सघन चिकन टेढ़े वार अरुण भाव
ज्ञान किए ते अरुण हैं ताको कोमल हाथ सो रघुनाथ धिखरत कहैं
पृथक् पृथक् करत तासे अतिरसयुक्त परमा शोभा जनी कहैं उत्पन्न
भई । सुंदर सर्पन के बालकन के समूह मानो चन्द्रमा सन मुद्र में लरत
तहां दुई सर्प सुंदर धरहरि करत हैं इहा सर्पन के बालकन के समूह
बार हैं शशि मुख है युग फनी दोउ हाथ है मुख पर जो वार परत हैं
सो लख है हाथन ते जो सम्हारव है सो बरहरि है । भाव यह कि अमृत
हेतु चंद्रमा सो सर्पन के बालक लरत हैं दुई बड़े सर्प धरहरि करत हैं ।
कि जो कोई अपना माल न दे तो तासो लड़ना न चाहिये ॥ ३ ॥
ललाट में तिलक शोभत कमल सम नेत्र हैं पलकें और भौंह सुंदर हैं
औ नासिका सुंदर सुगा के मुख सम है, अर्थात् ठोर सम ठोड़ी औ अरुन
अधर ओष्ठ के नीचे को भाग औ दांतनि की दुतिधर कहैं ओष्ठसहित
सुंदर है । वचन गंभीर है औ मृदु हँसी संसार की नासनिहारी है ॥ ४ ॥
कानन में चंचल निर्मल कुंडल है तिन्ह करि कपोल भूषित हैं कल कहैं
सुंदर शोभित आति प्रकाशित जिन्ह की कांति तिन्ह कुंडलन ने कष्ट
तनी कहैं विस्तार कियो है । ताको कहत हैं मानो दुई सोने के मकर
अर्थात् कुंडल रूप मछरी चंद्र की किरन मधुर अमृत पियत इहां मुख
चंद्र है रूप अमृत है, समुद्र की कीर्ति जो बनी भई है अर्थात् चन्द्रमा
अमृत आदि समुद्र ते उत्पन्न है यह कीर्ति ते पहिचानि करि के पियन
कि हमहुं समुद्र ते उत्पन्न हैं तो भाई के चीज लेवे में दोष नहीं ॥ ५ ॥

र में पदिक शोभति तांकी रचना की जोति अधिक है औ गजमुक्ता
 करि बनी सुंदर विशाल माला चहुं पास शोभत सो मानो श्याम नवीन
 मेघ पर सूर्य की कला देखि के कौतुक करनेवाली तारागन की सेना घेर
 री । इहां श्याम नव जलद रघुनाथ को बसस्थल है औ पदिक जोति
 दिनकर की कला हैं तारागन मोती की दाना हैं, कौतुक मेघ सूर्य की
 कला को होनो हैं ताको देखि तारागन विचारे हमहूँ सग ललटी करें
 गोते मेघ के ऊपर ताहूँ पर सूर्य के समीप आनि बैठे यह अति आश्चर्य
 कौतुक किये ॥ ६ ॥ मंदिरन पर खड़ी आनंद भरी नारि निरखि कै
 श्रुत फूल औ कुमकुम कहैं केसरि वा रोरी ताकी कनिका को छटि
 कति हैं । गोसाईं जी कहत हैं परम करुणा के धाम जो राम सो आपनी
 रवि सो सौ कोटि काम के मद को हरत हैं ॥ ७ ॥ ५ ॥

प्राच्य रघुयोर छवि जातिनहि कछु काही । सुभग सिंहा-
 सनासीन सीतारमन भुयन अभिराम बहुकाग सोभा सही
 ॥ १ ॥ चारुचामर व्यञ्जन छत्र मनिगन विपुलदाम मुकुटा-
 वली जोति जगिमगि रही । मनहुं राकेस सँग हंस उडगन
 बरहि मिलन आये हृदय जानि निज नायही ॥ २ ॥ मुकुट
 सुंदर सिरसि भालवर तिलक भूकुटिल कचकुंडलनि परम
 पाभालही । मनहुं हरहर जुगल मारध्यत्र की मकरलागि
 यवननि करत मेघ की बतकाही ॥ ३ ॥ पद्मन राजीवदल
 नयन करुना अयन वदन सुपमासदन हासत्रय तापही ।
 विविधि कंकनधार चरसि गजमनिमाल ननहुं वगपांति
 भुगमिलि चली जलदही ॥ ४ ॥ पीत निरमल श्रेष्ठ मनहुं
 मरकत सैल पृथुलदामिनि रहो णाढ़ तजि सरजही । सलित
 सःयकषाप पोनु भुजयल अतुल मनुजतन दनुजदल दहन
 मंडन मही ॥ ५ ॥ जामु गुन रुपनहि कलित निरगुन सगुन

संभुसनकादि सुक भक्ति दृढ करि गही। दासतुलसी राम-
चरन पंकज सदा वचन मन करमं चहै प्रीति नित निर-
वही ॥ ६ ॥ ६ ॥

आजु ६०। आसीन घंटे, भुवन अभिराम चौदहों भुवन में सुंदर
है, सही सत्य ॥ १ ॥ सुंदर चंवर पंखा छत्र तामो बहुत मनिगन औ
मोतिन की पंक्ति अर्थात् झालरि लगी है औ दाम कहैं गुच्छा तिन की
जोति जगमगाय रही मानो छत्र नहीं राफेस कहैं पूर्णचन्द्र है, चमर
नहीं हंस है। चमर स्वेत होत है ताते हंस कहे। मुक्तामणि नहीं है तारा-
गन हैं औ पंखा नहीं है वरही कहैं मयूर है, हृदय में अपना स्वामी
जानि मित्रन आय पंखा मयूर के पक्ष का है औ मयूर के नाचवे सम
डोलत रहत है ताते मयूर कहे ॥ २ ॥ सुंदर मुकुट सिरपर है औ ललाट में
श्रेष्ठ तिलक है भौंहें टेढ़ी हैं औ दोऊ कुंडल परम प्रभा को लही है मानो
शिव जी के डर ते कामदेव के ध्वजा के दोऊ मछरी कान में लगी
मेल की बतकही करत हैं। इहां दोऊ कुंडल मछरी हैं। भाव हमारे स्वामी
काम को मारि डारे अब हम को भी शिव कदापि मारि डारें यह हेतु
शिव जी को स्वामी रघुनाथ को जानि मेल की बतकही करत हैं कि
इन के कहे शिव जी न मारेंगे मेल है जायगो ॥ ३ ॥ लाल कमल
सम नेत्र करुणा के गृह हैं औ मुख परमा शोभा को घर तीनों ताप
हरता है और विविध प्रकार के कंकन हारादि अर्थात् बनमाला आदि
औ घर में गजमुक्ता की माला है सो मानो माला नहीं है जुगवगति
पाति है, शरीर रूप मेघ सो मिलि चली है ॥ ४ ॥ मलरहित पीतारंग
को बसन मानो शरीर रूप मरकतमणि कं शैल पर पृथुल कहैं समूह
पीताम्बर रूप बिजुली सहज ही स्वभाव जो चंचल ताको तजि कै
छाय रही धिर होय रही, पीनभुजा औ वल अतुलित है, सुंदर बान
धनुष धारे मनुष्य के शरीर सम शरीर औ दनुज रूपी वन के दहन
कहैं अग्नि औ पृथ्वी के भूषणकर्ता हैं ॥ ५ ॥ गुण रूप को निर्गुण
सगुण शिवादि नहीं कहत अर्थात् नहीं निश्चय करि सकत। शंभु सनकादि
शुंभ ने केवल भक्ति ही को दृढ करि गहि रही है। गोसाईं जी कहत हैं

हिरन निर राग के चरण कमल में मदा मन धवन कर्म करि प्रीति
नो निरादिषो चाहत है ॥ ६॥६ ॥

रामराज राजमौलि मुनिवर मनहरन सरन लायक
सुपदायक रघुनायक टेपोरी । लोच लोचनाभिराम नीलमनि
तमाज आमरूप मोलधाम अंगद्वि अनंगकोरी ॥ १ ॥ भाजत
सिरमुकुट पुरट निरमित मनिरचित चारु कुंचित कच रुचिर
परमसोभा नहि घोरी । मनहुं चंचरीक पुंजकंज दृंद प्रीति-
लागि गुंजत कलगान तान दिनमनि रिझयोरी ॥ २ ॥ अरुन
कंजदल विमाल लोचन भू तिलकभाल मंडित श्रुतिकुंडलवर
सुंदरतर जोरी । मनहुं संघरारि मारि ललित मकर जुग-
विचारि दौन्हे ससिकहं पुरारि भाजत दुहुंघोरी ॥ ३ ॥
सुंदर नासा कपोल चिबुक अधर अरुन बोल मधुर दसन
राजत जब चितवत सुपमोरी । कंजकोस भीतर जनु कंजराग
सेपर निकर रुचिर रचित बिधि विचित्र तडित रंगवोरी
४ कंबुकंठ उरविद्याल तुलसिका नवीनमाल मधुकरवर
नास विवस उपमा रुनिसोरी । जनुकलंद जात नीलसैल ते
सो समीप कंदवृंद वरपत छवि मधुर घोरिघोरी ॥ ५ ॥
नैरमल अति पीतचैल दामिनि जनु जलदनील रापी निज
लोभाहित विपुल विधि निहोरी । नैननि को फल विसैप
अरुन सगुन वेप निरपहु तजि पलक सुफल जीवन
योरी ॥ ६ ॥ सुंदर सीतासमेत सोभित करुनानिकेत
वक सुप देत लेत चितवत चितचोरी । वरनत यह अमित
प यकित निगम नागभूष तुलसिदास छवि बिलोकि सारद
र भोरी ॥ ७ ॥ ७ ॥

राम राज १० । राजन के मौलि कहैं मस्तक रूप औ मुनिंवरन
 के मन हरनिहारे औ शरण के योग्य मुख के दाता रघुकुल के स्वामी
 वा रघु नाग जीव ताके स्वामी जो राम राजा तिन को री सखी देखो
 सब जग के नेत्रों को रमणीय हैं औ नील मणि सम श्याम औ चिकन
 औ तमाल सम शुष्ट औ श्याम हैं औ रूप औ शील के गृह हैं औ
 कोरी कहैं करोरिन काम की छवि है जाको ॥ १ ॥ सिर में पुरट कहैं
 सोना ताको मुकुट निर्मित कहैं बनायो औ मणिन करि जड़ित सुंदर
 शोभत औ सुंदर टेढ़े बाल तिन की उत्कृष्ट शोभा थोरी नहीं मानो
 बाल नहीं भ्रमरन को समूह हैं मुख औ दोऊ नेत्र एही कमलन के बृंद
 हैं तिन के मीति लागि गुंजार करत हैं सो सुंदर तान करि गान ते सूर्य
 रूप मुकुट काँ रिसायो । भाव सूर्य को चंचल सुभाव है ताको रीक्षि कै
 छोड़ि धिर है धैरे ॥ २ ॥ लाल कमल के दल समान विशाल नेत्र हैं
 औ भौंह करि तिलक करि भाल शोभित है औ श्रेष्ठ कुंडलनि की
 जोड़ी अति सुंदर कानन में हैं मानो संवरारि कहैं काम ताको मारि
 कुंडल नहीं हैं ताके पताका केलित दोऊ मछरी हैं तिन को मुख रूप
 चंद्रमा कहैं शिव जू दियो सो दोऊ ओर शोभत है ॥ ३ ॥ नासिका
 औ कपोल औ ठोड़ी सुंदर हैं औ ओठ लाल हैं बोल मधुर है जब मुख
 मोरि देखत हैं तब दाँतै शोभत हैं मानो कमल कोस के भीतर कंज
 कहैं कमल राग कहैं लाल अर्थात् लाल कमल तिन के सुंदर शिखर
 का समूह अर्थात् पखुरिन का समूह विधि कहैं ब्रह्मा ने आश्चर्य
 विजुली के रंग में थोरि कै रचित कियो है । इहां कंज कोस मुखकोस
 है ताके भीतर लाल कमल को शिंपर को समूह दाँतै अरुण है तद्विवा
 को रंग शलक है वा कंज राग कहैं पञ्चरागमणि शृंग तिन के समूह
 ॥ ४ ॥ शंख सम कंठ है छाती चौड़ी है तामें नवीन तुलसी को माला
 है तेहि विषे श्रेष्ठ सुगंध ते विवस है भ्रमर घेरि रहे हैं ताकी जो उपमा
 है री सखी सो सुनु । मानो कलिदजात कहैं जमुना जी नील परबत
 ते घसी कहैं गिरी तिन के समीप कंद वृंद कहैं मेघन को समूह । इहां
 जमुना श्याम तुलसी की माला है श्री राघव को शरीर नीलपर्वत
 है पसिबो माला को नीचे के ओर लटकनो है ताके समीप जो

काम का धर्म है सो देव है. माना के पुत्र के सम जेइ उद्वेग है मुख से
 जे मर करक दान है सो करमना है. जो गुंजार मन्द करत है सो गर-
 जन है ॥५॥ कांति निर्मल जो पाल बसन बिजली मम नाहो मानो श्याम
 रंगने बहुत मदार निहोरो करि अदने मोभाहिन राखी है । उहां श्याम
 रंग श्याम शरीर है. पाल पैल (कपड़ा) दापिन में करक अलंकार है । जनु
 हंसा है, पाल मन्द में करकानिजयोकि नीन अलंकार का संकर है ।
 शिंघर करि भवन को फल नर दान अमृत मगुण वेष थी रामचंद्र को
 शिंघर ननि देरहु. तब अदने जीवन को मुफल जानो ॥ ६ ॥ करुणा-
 निरंज करुणा के पृष्ठ, निगम वेद, नागभूष शेष ॥६॥७ ॥

राग केदारा—सपि रघुनाथ रूपनिहार । सरदविधु रयिसु-
 मत मनमिज मानभंजनिहार ॥१॥ ग्यामसुभग शरीर जनमन
 गम पुरनिहार । चानचंदन मनहु मरकत सिपर लसतनिहार
 २ ॥ रुखिर उर उपवीत राजतपदिकगजमनिहार । मनहुं
 र धनु नपतगन बिच तिमिरगंजनिहार ॥ ३ ॥ विमल-
 ति दुक्ल दामिनिदुति विनिंदनिहार । बदन सुपमासदन
 भितमदन मोहनिहार ॥ ४ ॥ सकल चंग अनूपनहि कीच
 कवि बरननिहार । दासतुलसी निरपतहि सुपलहत निरंज-
 नहार ॥ ५ ॥ ८ ॥

सखि ३० । सरद को पूर्ण चन्द्र औ अश्वनीकुमार औ काम के
 कार भंजनिहार रूप निहार ॥ १ ॥ सुंदर चंदन जो शरीर में है
 मानो मरकत के शिखर पर निहार कहैं बरफ लसत है ॥ २ ॥ सुंदर
 में यज्ञोपवीत औ पदिक कहैं चौकी औ गजमुक्तन का हार शोभत
 में मानो यज्ञोपवीत नहीं है इन्द्र धनु है । इहां केवल आकार में उपमा
 में नहीं । गजमनि हार नहीं है तारागण है ताके बीच में चौकी
 है तिमिरगंजनिहार कहैं सूर्य है ॥ ३ ॥ दामिनि के दुति को
 त करनिहारो निर्मल पीत बसन है जाको औ मदन को मोहन

करनिहारो परमा शोभा को ग्रह को शोभित बदन जाको ॥३॥ निरखि-
निहार देखनेवालों पर ॥ ५ ॥ ८ ॥

सपि रघुबीर सुप छविदेपु । चित्तभीति सुप्रीति रंगसुसु-
पता अवरेपु ॥ १ ॥ नयन सुषमा निरपि नागरि सुफल जीवन
लेपु । मनहुं बिधि जुग जलज बिरचे ससि सुपूरन मेपु ॥ २ ॥
भृकुटि भालबिस्ताल राजत बचिर कुंकुमरेपु । भ्रमर है
रवि बिरन ल्याए कारनजनु उनमेपु ॥ ३ ॥ सुमुखि केस
सुदेस सुंदर सुमन संजुत पेपु । मनहु उडगन बाहु आवे
मिलन तम तजि देपु ॥ ४ ॥ अवन कुंडल मनहुं गुरु कबि
कारत वाद बिसेपु । नासिका डिज अधर जनु रघौ सदन
करि बडुबेपु ॥ ५ ॥ रूपवरनि नहि सकत नारद संभु सारद
सेपु । कहै तुलसीदास क्यों मतिमंद सफल नरेपु ॥ ६ ॥ ८ ॥

चित्त रूपी भीत पर सुंदर भीति रूपी रंग तें ता स्वरूप को लिखि
लेहु ॥ १ ॥ हे नागरि नेत्रों की परमाशोभा देखि कै अपने जीवन को
सुफल लेखो । मानो नेत्र नहीं हैं ब्रह्मा ने मेघ राशि के पूर्ण चन्द्रमा में
जुगल कमल बनाए हैं । इहां मेघ राशि को पूर्णचन्द्र श्री राघव को मुख
है । मेघ के चन्द्रमा निर्मल होत है औ मेघही के सक्रांति में श्री राघव
को जन्महू हैं ताते मेघ के चन्द्रमा की उपमा दिए । चंद्र दिग कमल कैसे
विकाशित भए सो हेतु आगे लिखत हैं ॥ २ ॥ भौहें, युक्त भाल जो
विशाल है तामें सुंदर केसरि को जुगल रेखां शोभत है, मानो भौह दोनों
भ्रमर हैं तिन्हों ने उन्मेघ कहैं विकाश करिवे हेतु नेत्र रूप कमल के
कुमकुम रेखा रूप सूर्य किरन को ल्याए । भाव यह कि मुख रूप चंद्र
देखि संशुद्धि भए हैं तिन को तिलक रेख रूप सूर्यकिरन ते मझुलित
करायो चाहत हैं । छवि रूप मकरंद के पान करिवे हेतु ॥ ३ ॥ सुंदर
मुख पर केस अपने भाग पर सुंदर पुष्पन युत देख, मानो फूल जो है
सो तारागन हैं तिन्ह के बाह ते वाररूप तम मुख रूप चन्द्र तें मिलन

भायो ॥ ४ ॥ कानन में जो दोऊ कुंडल हैं सो वृहस्पति भुक्त हैं परस्पर
बाद करत हैं इहां कुंडलन का हलना सो बाद है । नाक दांत ओठ नहीं
हैं मानो काम बहुत बेप करि टिक रखा है ॥ ५ ॥ सकल नरेणु सप
मनुष्यन में ॥ ६ ॥ ९ ॥

राग जयतथो—देपोराघो वदन विराजत चारु । जात न
वरनि विलोकतही मुप मुप किधौ छवि बरनारि सिंगार ॥ १ ॥
रुचिर चिबुकर रद जोति अनूपम अधर अरुन सित हास निहाव ।
मनो ससिकर यस्यौ चहत कमलमहुं प्रगटत दुरत न यनत
विचार ॥ २ ॥ नासिक सुभग मनहुं सुकसुंदर चितवत चकित
अधरजु अपाव । कल कपोल मृदु बोल मनोहर रीति चित
चतुर अपनपौ वारु ॥ ३ ॥ नयन सरोज कुटिल कचकुंछल
भृकुटि सुभाल तिलक सोभासार । मनहुं केतु के मकर चाप
सर गयो विसरि भयो मोहित मार ॥ ४ ॥ निगम सेप सारद
सुकसंकर वरनत रूप न पावत पार । तुलसिदास कहै कहौ
कौन विधि अतिलघु मति लड कूर गंवार ॥ ५ ॥ १० ॥

देखो ६० । हे सखी देखो श्री राघव को मुख सुंदर सांभत है ।
देखत ही जो मुख होत है सो बरन्यो नहीं जात है, मुख है कैरौ भेष्ट
छवि रूप स्त्री को शृंगार है ॥ १ ॥ सुंदर ठोड़ी है औ दातानि की जोनि
अनुपम है ओठ लाल औ हंसी उज्ज्वल इन सब को निहार । मानो रंगी
रूप चंद्रमा को किरण ओठ रूप कमल में बसो चाहत है पर विचार
नहीं यनत कबहुं प्रगटत कबहुं छवि जान है अर्थात् नव मधुनाथ
मुसकात तब प्रगटत जब मुमुखाव छोड़ देत तब छवि जान
॥ २ ॥ नासिका जो सुंदर सो मानो सुवा को चोच है । अपार आदर
करि देखनवारे चकित होय ताको चितवत है सुंदर दरोह है औ
कोमल बोल मनोहर है ताको मुनि चतुर जन चित में रीति के अने
अपनपौ कहै देहाध्यास वा आत्मा अपना नेवछावरि बरन ॥ ३ ॥

नेत्र कमल सम हैं, टेढ़े बालें हैं औ कुंडल भौंह सुंदर भालतिलक प
सब शोभा को सारांश रूप हैं मानो कुंडल नहीं केतु कहैं ध्वजा पर के
मीन हैं औ भृकुटी नहीं हैं चांप है तिलक नहीं है बाण है श्री रघुवर
मुख देखि मोहित होय काम इन सब को बिसारि गयो ॥ ४५॥१० ॥

राग ललित—आञ्जु रघुपति सुप्र दंघत लागत सुप्र
सेवत सुख सोभा सरद ससि सिहाई । दसन बसन जाल-
विसद दास रसाल मानो हिमकरकर राखे राजीव मनार्द्र ॥ १ ॥

अन नयन बिसाल ललित भृकुटि भालतिलका चावतर-
कपोल चिबुक नासा सुहाई । विधुरे कुटिल कच मानहु
सधु जालच अलिनलिन जुगल ऊपर रहै लुभाई ॥ २ ॥ अवन
सुंदर सम कुंडल कलजुगम तुलसिदास अनूप उपमा कहि
न जाई । मानहुं मरकत सीप सुंदर ससिसमीप कनक
मकरजुत विधि विरचि बनाई ॥ ४ ॥ ११ ॥

हे सखी आञ्जु रघुपतिमुख देखत मुख लागत कहै मुख होत है ।
वह मुख कैसा है कि सेवक पर सुंदर रखपूर्वक रहत है औ जाके शोभा
को शरद पूनो को चंद्रमा सिहात है । दसन बसन कहैं ओठ सो लाल
है औ हांस उज्ज्वल रसीला है मानो मुख नहीं चंद्रमा है उज्ज्वल हांस
नहीं ताको कर कहैं किरन है तिहि से ओष्ठ रूप कमल को मनाइ
राखे भाव चंद्रमा को कमल ते विरोध है ताको छोड़ाय राखे ॥ १ ॥
लाल नयन विशाल हैं सुंदर हैं औ कपोल मोड़ी नासिका सुंदर हैं औ
बिखरे भए टेढ़े वार हैं सो मानो वार नहीं हैं भ्रमर हैं । छवि रूप मधु
के लालच ते जुगल नेत्र रूप कमल के ऊपर लोभाय रहे हैं ॥ २ ॥
कान सुंदर हैं ताके सम कुंडलो कल कहैं सुंदर दुइ हैं । गोसाई जी कहत
हैं कि उपमा रहित हैं ताते उपमा नहीं कही जात है । मानो कान नहीं हैं
मरकत मणि जो स्याम रंग को ताको सीप सुंदर हैं । सो मुख रूप चंद्रमा
के निकट सोने के कुंडल रूप मछली युत घट्टा जी ने बनाइ रख्यो
। हंसका । कहे की उपमा नहीं कहि जाति है फेरि उपमा कहे सो क्यों ।

रस । तब उपमा न पाए तब जी कहें न टोनेदार सो उपमान
 २२२२२२ अर्थात् मग्न मन की भाँप न टोने औ सोने की मछरी
 की टोने ॥ ३॥११ ॥

राग भैरव—प्रातःकाल रघुवीर ददनछवि चितै चतुर
 चित मेरे । होइ विवेक विनोचन निरमल सुफल सुसीतल
 तरे ॥ १ ॥ भालविमानविकट भृकुटी बिच तिलकरेय रचि
 रात्रै । मगधुं गदनतम तकि सरफत धनु जुगल कनक सर
 माजै ॥ २ ॥ रचिर पनक लोचनजुग तारक स्याम अरुन
 मित कोए । जनु अलि गनिन कीस महुं बंधुक सुमन सेज
 सजि सोए ॥ ३ ॥ विनुलित ललित कपोलनि पर कच मेचका
 कुटिल मुशए । मनो विधु महुं प्रनरुष्ट बिलोकि अलि विपुल
 सकौतुक आए ॥ ४ ॥ सोभित स्वयन कगककुंडल कल लंबित
 बिबि भुजमूले । मनहुं कीकि तकि गहन चहत जुग उरग धुंदु
 प्रतिकूलि ॥ ५ ॥ अधर अरुनतर दसन पांतिवर मधुर मनोहर
 वासा । मनहुं सोन सरसिज महुं कुलिसनि तडित सहित
 हातवासा ॥ ६ ॥ चरु चिबुक सुकतुंड विनिंदक सुभग सुउन्नत
 नासा । तुलसिदास छवि धामराममुप सुपद समन भव-
 वासा ॥ ७ ॥ १२ ॥

भात १० । हे चतुरचित्त मेरे ! प्रातःकाल रघुवीर के मुख की छवि
 को देखो, तब विवेक रूपी नेत्र तेरे मलरहित फलसहित औ शीतल
 होई । चतुर कहिये को यह भाव कि मुख छवि के सनमुख कराया
 चारु हैं ताते बढ़ाई दें बोले ॥ १ ॥ विशाल भाल औ भौंह के बीच में
 निकल की रेखा सुंदर शोभति है मानो मुख रूप काम ने बाल रूप तम
 को ताकि के भौंह रूप धनुष पर पीत तिलक रूप युगल सोने को
 मान साज्यो है ॥ २ ॥ पलकें औ नेत्रें सुंदर हैं, तारक कहें पुतरी श्याम

हैं औ ललाई मिश्रित श्वेत आँख के कोए कहैं कोने हैं सो मानो पुतली
रूप भ्रमर नेत्र रूप कमल के कोस में ललाई रूप दुपहरि के फूल की
शय्या बिछाय सोए ॥ ३ ॥ अरु श्रेष्ठ श्याम टेढ़े वार सुंदर कपोलन पर
शोभत है मानो मुख चन्द्र मह नेत्र रूप वनरुह कहैं कमल देखि कै
केश रूप भ्रमरैं कौतुकसहित अर्थात् एक से एक में मिले क्रीड़ा करते
आये ॥ ४ ॥ लंबे जां विधि कहैं दोऊ भुजा हैं तिन के मूल में सुंदर
सोने के कुंडल कानो के शोभित हैं सो मानो कुंडल रूप मयूर को देखि
के दोऊ भुजा रूप सर्प जो चन्द्रमा के प्रतिकूल में है अर्थात् मुख चन्द्र
के सम्मुख मुख नहीं है पार्श्वभाग में है सो पकड़ा चाहत है । भाव कुंडल
मयूर को मुख चंद्र के अनुकूल जानि के ॥ ५ ॥ आँठ लालतर है दाँतनि
की पाँति श्रेष्ठ है औ मधुर हंसी मन की हरनिहारी है, मानो ओठ नहीं
सोने कहैं लाल रंग के सरसिज कहैं कमल है, तामें दाँत पाँक्ति नहीं
कुलिस कहैं हीरन का समूह है सो हंसी तड़िता रूप हंसी सहित वास
कियो है या दाँतनि की चमक सो तड़िता है ॥ ६ ॥ सुंदर ठोड़ी है औ
मुवाके ठोर को निंदा करनिहारी अति सुंदर उन्नत नासिका है । गोसई
जी कहत हैं छवि को धाम औ मुख को दाता औ भवनास को शमन
करनिहारो श्रीरामजी को मुख है ॥ ७ ॥ १२ ॥

राग कैदारा—सुमिरत श्रीरघुवीर की बाँहैं । होत
सुगम भव उदधि अगम अति कोठ लांचत कोठ उतरत
याहैं ॥ १ ॥ सुंदर श्याम सरौर सैल तें धसि जनु है जमुना
धवगाहैं । अमित अमलजल बल परिपूरन जनु जननी
सिंगार सविता हैं ॥ २ ॥ धारैं बान कूल धनु भूपन जलघर
भंवर सुभग सबघाहैं । विलसति वीचि विजे विरुदावलि
करसरोज सोहत सुपमा हैं ॥ ३ ॥ सकल भुवन मंगल मंदिर
के द्वार विसाल सोहाई साहैं । जे पूजौ कौसिकमय रिपवनि
जनक गनप संकर गिरिजा हैं ॥ ४ ॥ भवधनु दलि जानकी
विवाही भए विहाल नृपाल प्रपाहैं । परसुपानि निम्न किए

महामुनि जी धितए कवेहुं न कृपा हैं ॥ ५ ॥ जातुधान तिय
 जानि बियोगिनि दुपई सीय सुनाइ कुचाहैं । जिन्ह रिपु-
 मारि सुरारिनारि तेइ सीस उघारि दिवाईधा हैं ॥ ६ ॥ दस-
 मुप बिबस तिलोकाशोकपति विकल विनाये नाकुचना हैं ।
 सुखस बसे गावत जिन्ह को जसु अमर नाग नर रुमुपि सनाहैं
 ॥ ७ ॥ जी भुज वेदपुरान सेप सुक सारदसहित सगेइ सराहैं ।
 कलपलताहु कि कलपलतावर कामदुहाहु कि कामदुहा हैं
 ॥ ८ ॥ सरनागत आरत प्रनतनि को दै दै अभयपद पीर
 निवाहैं । करिभाई करिहैं करती हैं तुलसिदास दासनि
 पर छाहैं ॥ ९ ॥ १३ ॥

सुमिरत १० । श्री रघुनाथ के ध्वजन को स्मरण करत मात्र में
 संसाररूपी समुद्र जो अति अगम है सो धुगम होत । पराभक्तिवाले तो
 बारी काल लांघि जात औ सकामा भक्तिवाले प्रारब्ध भोगपूर्वक
 संसार समुद्र को पाहैं उतरत अर्थात् किंचित् देर होत पर उतर में
 सदैव नहीं ॥ १ ॥ सुंदर श्याम शरीर रूप परवत ते मानो द्वै जमुना
 की धारा अवगाई फई अथाहं घसी । भाव नीचे को गिरी, पितिरहित
 निर्मल बल रूप जल करि भरी । जमुना जी सूर्य से जनमी हैं यह मुना
 रूप जमुना शृंगार रस रूप सविता कहैं सूर्य से जनमी हैं ॥ २ ॥ बान
 धार है धनुकूल है जो भूपन पहिरे हैं सो जलचर हैं औ सब पाहैं
 धंवर हैं घाह अंगुरी के बीच को कहत हैं जाको कोऊ देश में नाहें
 कहें घाहें फाहें गासा कहत हैं । नदी में कमल रहत है, इहाँ गुपना कहें
 परमा शोभा करि सोहत जो फर सो कमल है ॥ ३ ॥ मङ्गल धुरन
 रूप मंदिर के मङ्गल रूप जो दरवाजा विशाल ताके सुंदर सारे बने
 शीशु को बाजू धुमा हैं । भाव बाजू आधार से दरवाजा रहत है नैम
 सय मङ्गल इन धुमन के आधार में रहत हैं औ जेहि धुमन को बिजा-
 पित्र जी के यज्ञ में ऋषि सप्त आ विवाह में जनक औ आ अष्टाव के

जय किये पर गणप कहैं लोकपाल सब औ शिव पार्वती जू काशी में
 जे मरै तेहि कै मोक्ष हेतु पूजा ॥ ४ ॥ जिन्ह भुजन ने शिवधनु तोरि
 जानकी जू को विवाही, राजा सब त्रपा कहैं लज्जा करि विहाल भए
 औ जेहि भुजन ने परशुराम को महामुनि किए अर्थात् शान्त बनाय
 दिए जे परशुराम कृपायुक्त काहू को कबहुँ न देखे ॥ ५ ॥ श्री
 जानकी जू को वियोगिनि जानि निशाचरन की स्त्री कुचाहैं सुनाय
 दुख देत भई तब जिन्ह भुजन ने शत्रु को मारि कै तेई निशाचर की
 स्त्रीन की सीस उचारि कै अर्थात् बिधवा करि कै धा कहैं दोहाई देवाई
 दाहै पाठ होय तो अस अर्थ करना उन के पतिन के चिता को दाहै
 कहैं आंचि देवाई अर्थात् दग्ध करिवे समय में ॥ ६ ॥ तीनों लोक के
 लोकपालन को रावन विकल औ विशेष बश करि नाक ते चना
 बिनाए सो सुबस वसे जिन्ह भुजन को यश देवता नाग नरन स्त्री
 सनाहैं कहैं अपने पतिन सहित गाथाति हैं ॥ ७ ॥ जेहि भुजन को वेद
 पुराण शेष शुक सरस्वती नेहसहित सराहैं हैं कि कल्पवृक्ष औ काम-
 धेनू के कामधेनु हैं । भाव कल्पवृक्ष कामधेनु जो सब को मनोरथ पूरन
 करत तिनहुँ के मनोरथ पूरन करत हैं ॥ ८ ॥ आरत जीव शरणागत
 में आय प्रणाम करत तिन को अभयपद दै दे ओर कहैं अंत लो निवा-
 हत । भाव आदि सों अंत लो निवाहत । गोसाईं जी कहत हैं सो कर
 दासनि पर छाई करि आए औ करेंगे औ करत हैं ॥ ९ ॥ ११ ॥

राग भैरव—रामचंद्र करकंठ कामतरु वामदेव चित-
 कारी । सियसनेह बरबेलि बलिखतवर प्रेमबंधु बरबारी ॥ १ ॥
 मंजुल मंगलमूल मूलतनु करख मनोहर सापा । रोम परन
 नय सुमन सुफल सबकाल सुजन अभिलापा ॥ २ ॥ अविचल
 अमल अनामय अविगल ललित रहित छल छाया । समन
 सकल संताप पापकल मोह मान मद माया ॥ ३ ॥ सेवहि सुचि
 मुनि भृंग विहंग मन सुदित मनोरथ पाए । मुमिरत चिय
 हुलसत तुलसी अनुराग उमगि गुन गाए ॥ ४ ॥ १४ ॥

श्रीगणेश का हस्तकमल मग जो कनकवृक्ष मो वामदेव कहैं
 वन्द को दिनरात्रि है औ भीजानरी जू को मोह सोई श्रेष्ठ लता है
 मो करि बलित कहैं आननादेव है मो श्रेष्ठ मेम जो बंधु का सोई वर-
 णा कहैं बाद है अर्थात् नाको येग है ॥ १ ॥ हस्त कमल रूप कल्प-
 वृक्ष कनकवृक्ष मंगलमूल को मूल कहैं जड़ मो तनु कहैं शरीर है औ
 वरुण कहैं अंगुरी मय आम्बा है हस्त में जो गोम है सो वृक्ष को पत्र है
 नैवे हुल है औ सुंदर जनन की जो अभिलाषा सब काल में सोई
 सुंदर फल है । भाव अभिलाषानुसार फल फरयो रहत है ॥ २ ॥ विशेष
 करि चंचलतारादिनि निषेध औ रोगरादिनि । भाव जैसे भिलामा आदि
 वृक्ष की छाया रोगकागी होनि है तसो नहीं, अविरल कहैं सपन हैं,
 देविंसे में ललित है औ लल करि रहित छाया है अर्थात् ठग आदि
 वृक्ष लगाय भलो थल बनाय राखत हैं कि कोई पथिक सुथल देखि
 बाम करंगो नाको धनादि हरोंगो तस नहीं । फिर छाया कैसी है सकल
 मंत्राय अर्थात् दक्षिण दक्षिण भौतिक क्षमन करनिहारी है औ पाप औ
 रोग औ माया करि जो मोह मान मद ताको क्षमन करनिहारी ॥ ३ ॥
 वृक्ष को भ्रमर पक्षी सेवत हैं इहां पवित्र जो मुनिन को मन सोई भ्रमर
 औ पक्षी है सो मन भाए रस फल पाए हराखित है सेवत । गुसाई जी
 करत हैं या कल्पवृक्ष के तो नीचे गए सुख पावत है औ इहां स्मरण
 करत मात्र में हिय हुलसत औ गुनगान किये ते अनुराग खमगि चलत
 ॥ ४ ॥ १४ ॥

रामचरन अभिरामं कामप्रद तोरयराज विराजै । शंकर
 हृदय भक्ति भूतल पर प्रेम पङ्कजवट भाजै ॥ १ ॥ स्यामचरन
 पदपोट भरनतल लसति बिसद नपथ्येनी । जनु रविमुता
 सारदा सुरसरि मिलि चलि जलित विवेनी ॥ २ ॥ चंकुस
 कुक्षिस कमल ध्वज सुंदर भवर तरंग विलासा । सप्पदि सुर
 सप्पम मुनिजन मन मुदित मनोहर घासा ॥ ३ ॥ विनु विराग

जप जाग जोगव्रत विनुतीरथ तनु त्यागे । सब सुष कुलभ सद्य
तुलसी प्रभुपद प्रयाग अनुरागे ॥ ४ ॥ १५ ॥

राग ३० । चरन में तीरथ राज प्रयाग का रूपक करि कहत हैं । श्रीराम को चरन रमणीय मनोरथदाता प्रयाग रूप शोभै है । शंकर को जो मेम सोई अक्षयवट है सो शंकर के हृदय की भक्ति रूप भूतल पर सोइत है ॥ १ ॥ पदपीठ श्याम वर्ण है, तरवा लाल है औ नखन्ह की पंक्ति उज्ज्वल सोइति है । मानहु यमुना सरस्वती औ गंगा मिलि के सुंदरि त्रिवेणी चली है, सरस्वती जैसे प्रयाग में गुप्त है तैसे तरवा गुप्त है ॥ २ ॥ अंकुशादि जे चिन्ह है ते भँवर तरंग के विलास हैं । सुरसंत औ मुनि जन अर्थात् मननशील ते मनोहर चरन रूप प्रयाग में वास औ मज्जन करत हैं । इहां पद के वर्णित आदि में जो हर्पना औ पुलकना सो मज्जन है । “कहू सुनत हर्पहि पुलकाहीं । ते मुकती मनमुदि नहाहीं” ॥ औ ध्यान करना वास करना है । “पदराजीव वरनि ना जाहीं । मुनि मनप्रथुष वसाहि जिन्ह माहीं” ॥ ४ ॥ १५ ॥

राग बिलावल—रघुवररूप बिलोकु नेकु मन । मकर
लोक लोचन सुप्रदायक नयसिष सुभगं श्यामसुंदर तन ॥ १ ॥
चारुचरनतल चिन्ह चारि फल चारिदत परचारि जानि जन ।
रागत नय जनु कमल दलनि पर चरनप्रभारंजित तुषारकन
॥ २ ॥ जंघाजानु आनु उर उर कटि किंकिन पटपीत सुहावन ।
रुचिर नितंब नाभि रोमावलि त्रिवलि बलित उपमा कहु
आवन ॥ ३ ॥ भृगुपदचिन्ह पदिक उर सोभित मुकुतमाल
कुंकुम अनुलेपन । मनहुं परसपर मिलि पंकजरवि प्रगव्यी
निज अनुराग सुजस धन ॥ ४ ॥ बाहुविमल ललित सायक
धनु करकंकन कैयूर महाधन । विमल दुकूल दलन दामिनि-
दुति जग्योपवीत लसत अतिपावन ॥ ५ ॥ कंबुग्रीव हनि
सीव चिबुध द्विज अधर कपोल बोल भयमोचन । नाभिक

हृत्पद्म हृत्पद्मिपुत्र तन्मन चमन राजीव विमोचन ॥ ६ ॥
 हृत्पद्म भृकुटिदर भाग्यतिनककचि सुचिमुन्मत्तर सखन विभू-
 पन । मनहुं भारि मनमित्र पुरारि दिए ससिहि चाप सर
 मकर चटुपन ॥ ७ ॥ कुंचित कच कंचन किरीट सिर जटित
 मोतिमय वहुविधि मानिगन । तुलसिदाम रविचुल्लरवि छवि
 कवि कहि न सकत सुक संभु महमफन ॥ ८ ॥ १५ ॥

रघुवर १० । सुंदर तरवा में जे अंकुजादि चारि चिन्ह हैं ते जन
 जानि के ललकारि के चागे फाल देत हैं वा अंकुश अर्थ कुलिश धर्म
 कमल कामध्वज मोक्ष देत हैं । नप मानहुं नहीं सोहत हैं कमलदलानि
 पर मानःकान्त के सूर्य के प्रभा ने रंजित ओसफण सोहत हैं ॥ २ ॥
 वज्रित सरित ॥ ३ ॥ भृगुपद को चिन्ह आं धुकधुकी औ मुक्तामाल
 और केसर को अनुलेपन सोहत हैं मानो कमल आं सूर्य परस्पर मिलि
 के अपना अनुराग आं घनो सुयश प्रगट कियो है । इहां भृगुपदचिन्ह
 कमल पदिक सूर्य मुक्तामाल सुयश कुंकुम को अनुलेपन अनुराग है
 ॥ ४ ॥ कंगूर विजायठ, महाधन बड़े मोल को ॥ ५ ॥ द्विज दांत ॥ ६ ॥
 देश भाई औ श्रेष्ठ भाल पर सुंदर तिलक है और कुंडल की रुचि
 करिये कांति सुंदर है मानो शिव ने कामदेव को मारि के ताकों चाप
 सर आं दूषणरहित मकर चंद्रमा को दियो है । यहां मुखचंद्र है, भृकुटी
 चाप है, तिलक सर है, कुंडल मकर है ॥ ६ ॥ ७ ॥ १५ ॥

राग कान्हरा—देपो रघुपतिछवि अतुलित अति । जनु
 तिलोक सुपमा सज्जलि विधि रापी रुचिर अंग अंगनि प्रति
 ॥ १ ॥ मदुमराग रुचि भृदुपदतल ध्वज अंकुस कुलिस कमल
 यहि सूरति । रही आनि बहुविधि भगतन की जनु अनुराग
 भरी अंतरगति ॥ २ ॥ सकल सुचिन्ह सुजन सुपदायक ऊरध-
 रैय विसेप विराजति । मनहुं मानु मंडलहि सवारत धखौ
 सूत विधि सुत विचित्र मति ॥ ३ ॥ मुभग अंगुष्ठ अंगुली

अविरल ककुब अरुननप जोति जगसगति । चग्नपीठ उन्नत
 नतपालक गूढ गुल्फं जंघा कदलीजति ॥४॥ काम तून तल
 सरिस जानुजुग उरु करिकर करभङ्गि विलपावति । रसगा
 रचित रतन धामौकर पीतवसन काटि कसे सर वसति ॥५॥
 नाभीसरसि द्विवली निसैनिका रोमराजि सेवालक्ष्मि
 पावति । उर मुकुतामनि मान्न मनोहर मनहुं रंस अवली उडि
 आवति ॥ ६ ॥ हृदय पदिक भृगुचरन चिन्हवर बाहुविसाल
 जानुललि पहुंचति । कलकियूर पूर कांचनमनि पहुंची मंजु
 कांजकर सोइति ॥ ७ ॥ सुजव सुरेप सुनय अंगुलिनुत सुन्दर
 पानि सुद्रिका राजति । अंगुलीवान कमान बाजलक्ष्मि सुरनि
 सुपद असुरनि उर सालति ॥ ८ ॥ स्यामसरौर सुचंदन
 चरचित पीतदुकूल अधिक छवि छाजति । नील जलदपर
 निरपि चंद्रिका दुरनि त्यागि दामिनि जनु दमकति ॥ ९ ॥
 जग्योपवीत पुनीत विराजत गूढ जंजुवनि पीन अंसुतति ।
 सुगढपृष्ठ उन्नतकृष्णाटिका कंबुकूठ सोभा मनमानति ॥१०॥
 सरदसमय सरसीरुह निंदक सुप सुपमा ककुबहत नहिं
 वनति । निरपतही नयननि निरुपम सुप रविसुत मदन सोम-
 दुति निदरति ॥११॥ अरुन अधर द्विजपांति अनूपम ललित
 रंसनि जनमन आकरपति । विद्रुम रचित विमान मध्य सानो
 सुरमंडली सुमनचय वरपति ॥ १२ ॥ मंजुल चिबुक मनोहर
 हनुथलु कलकपोल नासा मन मोइति । पंकज मानविमोघन
 लोचन चितवनि चारु अमृत जल सींचति ॥ १३ ॥ केस
 मुदेस गंभीर वचन वर श्रुति कुंडल डोलनि जिय जागति ।
 लपि नव नील पयोदर सित रुनि रुधिर मोर जोरो जनु

नाचति ॥ १४ ॥ भौं है दंक मयंक अंक रुचि कुंकुमरेण भाल भलि
भाजति । सिरसि हेम हीरक मानिकमय मुकुटप्रभा सब
भुवन प्रकासति ॥ १५ ॥ वरनत रूप पार नहिं पावत निगम
सिपु मुक्त संकर भारति । तुलसिदास कैहि विधि वपानि
कहै यह मन वचन अगोचर मूरति ॥ १६ ॥ १७ ॥

देखो ६० ॥ १ ॥ लाल मणि की कांति सम कोमल तरवा है और
सोम ध्वज अंकुश कुलिश कमल एहि चारि रेखन की मूरति है मानो
सो रेखा अन्तर्गति अनुराग भरी से आर्त जिज्ञासु अर्थार्थी हानी चारो
मकार के भक्तन की आनि रही ॥ २ ॥ सब श्रीरघुनाथ के पदन के
सुन्दर चिन्ह मुजनन के सुखदायक हैं पर उर्दरेखा विशेष सोभति है
मानो सूर्य मंडल के सँवारते में विचित्रमति पिम्बकर्म ने गूत घरयो
है । यहाँ तरवा को रंग लाल है ताते सूर्यमंडल की उपमा कही ॥ ३ ॥
उन्नत ऊँचा, नवपालक शरणागतपालक, गूढ़ गुल्फ घुटना डंका है ॥ ४ ॥
करिकर करभाहिं दिलखावति हाथी के यथा के मुँह को बिलखावति
है, रसना किंकिनी, चामीकर सुवर्ण सरवसति तरफस ॥ ५ ॥ नाभी
तड़ाग है, तेहि तड़ाग की सीढ़ी त्रिवली है औ तामे रोमन की पाँनि
सेवार की छवि पावति है ॥ ६ ॥ केपूर पूर कंचन मनि कंचन औ
मणि ते पूर कहैं भरा बिजायट है ॥ ७ ॥ मुनव सुरेख सुंदर जब की
रेखा है, अंगुलीनान अगुस्ताना ॥ ८ ॥ मानो इयाम मेघ पर चंद्रिका
देखि के चंचलता त्यागि के दामिनि दमकति है यहाँ इयाम मेघ इयाम
शरीर है, चंदन चंद्रिका है, दामिनि पीतान्तर है । दामिनि के मिर होने
को यह भाव कि जब चंद्रिका ने अपनी मर्यादा छोड़ी तब हम बसो न
छोड़ें ॥ ९ ॥ सुंदर यशोपवीत सोभति है, हंसुली गुप्त है औ शिखर
औं पुष्ट पांथ है औ पीठि की सुंदर गढ़नि है, कृष्णादिश बर लेखनी
बोज देन में जाको जोता फरत है अर्थात् गले को दृष्टमान को उन्नत
है ॥ १० ॥ रविभुज अभिनीहमार, सोम चंद्रमा ॥ ११ ॥ अंठ जट
है औ दांतनि की पाँनि उपमारति है औ जन के दन की मोहरिदासी
सुंदर हंतानि है । मानो मृगा के बिमान के दाय में देखा की चंद्रमा

॥ १२ ॥ चिनुक कपोलन के नीचे को
॥ १३ ॥ मानो नवीन मेघ देखि के
॥ १४ ॥ ज्यों ही ज्यों नाचति है । यहाँ नवीन मेघ
॥ १५ ॥ हृन्त पोर है डोलनि नाचनि है ॥ १६ ॥
॥ १७ ॥ भाव बिना अंक को दृष्ट
॥ १८ ॥ के चिन्ह कहीं । सतसई में चिन्ह
॥ १९ ॥ ही चिन् अधिक देखा । ज्यों
॥ २० ॥ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥

... ॥ १ ॥ गोरुर ...
 ... ॥ २ ॥ गोरुर ...
 ... ॥ ३ ॥ गोरुर ...
 ... ॥ ४ ॥ गोरुर ...
 ... ॥ ५ ॥ गोरुर ...
 ... ॥ ६ ॥ गोरुर ...
 ... ॥ ७ ॥ गोरुर ...
 ... ॥ ८ ॥ गोरुर ...
 ... ॥ ९ ॥ गोरुर ...
 ... ॥ १० ॥ गोरुर ...

तार ॥ अतिमचत अमकन सुपनि विधुरे चिकुर विलुण्ठित-
 शर । तमतडित उडगन अरुन विधु जनु करत व्योम विधार
 ॥५॥ हिय हरपि वरपि प्रसून निरपति विबुधतिय तनतूरि ।
 जानंदजल लोचन मुदितमन पुलकतन भरिपूरि ॥ सब
 कहहिं अविचल राजनित कल्यान मंगल भूरि । चिरजिओ
 जानकिनाथ जग तुलसो सजीवनमूरि ॥ ६ ॥ १८ ॥

आली १० । अति सुंदर चहुंओर स्फटिकमणि की भीति हैं औ
 सुंदर मणि में दरवाजा है । हे सखी कांच को गच देखि के मन नाचत
 है, मानो कांच को गच नहीं है काम की फांसी है । बंदनवार मंदप पताका
 चर ध्वज फूल फलनि की घोषा परिछाहीं प्रति की छवि की शाखी छावि
 की दैकें विंव प्रति कहति है किं तुम से हम गरू हैं ॥१॥ सरल सूधा
 गदीर नीचे के चारों पाटीको कहत हैं औ पाटी ऊपर के चारो, पाटी
 को कहत हैं, भँवरा गोल गोल धरन में लटके रहत हैं । बलित प्रथित
 लना धरन के नीचे रहत हैं जामे डांडी लगाई जाती है । पडुली पटरा
 को पटरो नहीं है मानो रति के हृदय की सोने की मालोंकी पदिक है
 अर्थात् जुगावली है भाव पटरा पदिक है औ जामे लटको है सो सोने
 की माला है अर्थात् डांडी जाको एक बार कुमकुम तिलक को उपमा
 दि आप ॥ २ ॥ सधन घन गंभीर घटा, मृदुहारि नान्दी नान्दी, बूंदी
 ॥ १० ॥ ३॥ नवसत, सोलहो झुंगार, दिंडोळसार, झलिये को स्थान ॥४॥
 सरिन्ह पारिन्ह सूहाराग औ गौड महार राग गार्वे, मंजीर पायेंजेव
 पुर धुंधुरु, बलय कंकन एन के जो धुनि है सो धुनि नहीं है पांनो
 म के हथोरी के ताल हैं, अत्यंत जो झूला मचत है ताने पमीना को
 न मुखन पर है रहे हैं औ चार बिखरि परे हैं औ माला टोछि रहे हैं
 र बिखरे तम है, अंग की गोलाई तदित है, उडगन कई तारागन सो
 रकण हैं, अरुण कई सूर्य सो दार है औ विबुध कई चंद्रमा सो हृदय
 सो आकाश में विहार करत हैं ॥ ५ ॥ विबुध तिय के तुण तुरिये को
 भाव कि जामे नजर न लागै वा लज्जा को तुन सम नोरिहे देखै
 स्वर्ग मुख को तुण सम तोरे ॥ ६ ॥ १८ ॥

राग मूहव—कोसलपुरी सुहावनि सरिसरजू के तीर ।
 भूपावली मुकुटमनि नृपति जहां रघुवीर ॥ १ ॥ पुरनरनारि
 चतुर अति धरम निपुनरत नीति । सहज सुभाय सकल घर
 श्रीरघुवीरपद प्रीति ॥ छंद ॥ श्रीरामपदजलजात सब के
 प्रीति अविरल पावनी । जो चहत सुक सनकादि संभु विरंचि
 मुनिमन भावनी ॥ सबही के सुंदर मंदिराजिर राउ रंक न
 लखि परे । नाकेसदुर्लभ भोगलोग करहि न मन विषयनिहरे
 ॥ १ ॥ सबरितु मुपप्रद सो पुरी पावस अतिकमनीय । निरपत
 मनहि हरति इठि हरित अवनि रमनीय । वीरबह्मटि विरा-
 जही दादुर धुनिचहुंभोर ॥ मधुर गरजिघन वरपहिं
 सुनि मुनि बोलत मोर ॥ छन्द ॥ बोलत जो चातक मोर
 कोकिल कीर पारावत घने । पग विपुलपाले बालकनि
 कूजत छडात सुहावने ॥ बकराजि राजत गगन हरिधनु
 तडित दिसिदिसि सोइहीं । नभनगर की सोभा अतुल अव-
 लोकि मुनिमन मोइहीं ॥ २ ॥ गृहगृह रचे हिंडोलना महि
 गवकांच मुठारि । विचविचित्र चहुंदिसि परदा पटिक
 पगार ॥ सरलविसाल विराजहिं विदुस पैंग सुजोर ।
 चारुपाटि पटु पुरट की भरकत सरकत मोर ॥ छन्द ॥
 सरकत भवर डांडी कनकमनि जटितदुति जगमग रही ।
 पटुनी मनहुं विधि निपुनता निजप्रगट करि रापीसही ॥
 बहुरंग लसत वितान मुकुतादाम सहित मनोहरा । नव
 सुमनमाल सुगंध लोमे मंजु गुंजत मधुकरा ॥ ३ ॥ भुंडभुंड
 भूलन चली गजगामिनि वरनारि । कुमुभिचीर तन सोइहीं
 भूपन विविधि सवारि ॥ पिंकवयनी मृगलोचनी सारद ससि

२६ ॥ राममुनय मदगावर्ही मुखर सुमरिग गुंड ॥
 २७ ॥ मारिग गुंडमरान मोरठ मुइव सुपरनि वाजर्ही ।
 २८ ॥ भांति तान तरंग मृनि गंधर्वकिन्नर लाजर्ही ॥ अति
 २९ ॥ दृष्ट कटिनाक अद्वि अधिक मुन्दरि पावर्ही । पटउडत
 ३० ॥ मदन घमता रंमि रंमि अपरमयी भुलावर्ही ॥ ४ ॥ फिरिफिरि
 ३१ ॥ नृदहिं भासिनो अपनो अपनो वार । विबुध विमान धकित
 ३२ ॥ मण टपत अरिता अपार ॥ दरपि सुमन हरपहिं सुर
 ३३ ॥ वानहि हरिगुन गाथ । पुनिपुनि प्रभुहि प्रभंसर्ही जयजय
 ३४ ॥ जानकिनाथ ॥ छन्द ॥ जय जानकोपति विसद कोरति
 ३५ ॥ सकललोक मलापरा । सुरयधृ टहिं असोम चिर जीवहु राम सुप्र
 ३६ ॥ संपति महा ॥ १ ॥ पायमममय कछु अवध वरगत सुनि
 ३७ ॥ रवीच नसावर्ही । रघुवीर के गुनगनन बल नित दासतुलसी
 गावर्ही ॥ ५ ॥ १८ ॥

कोसल ३० । सरि नदी, जलजान कमल, अधिरल निरंतर, अजिर
 भांगन, नाकेश इंद्र ॥ १ ॥ अयनि पृथ्वी, चातक पपीहा, कोकिल कोइल,
 धीर दुआ, पारावन कसूतर, बकराजि बकपांनि, हरिधनु इंद्रधनु ॥ २ ॥
 पगार भीति, विद्रुम मृंगा, पुरट सोना, मुकुतादाम भोगतिन फी माला,
 मजुकर भ्रमर ॥ ३ ॥ शारद शशि समतुंड शरत्काल पूर्णिमा के चंद्र सम
 ह्वन, गुंड मलारंभद ॥ ४ ॥ विशद उज्ज्वल ॥ ५ ॥ १९ ॥

राग असावरी—सांझसमय रघुवीरपुरी की सोभा आज
 रनी । ललित दीपमालिका विलोकहिं हितकरि अवधधनी
 ॥ १ ॥ फटिकभीत सिपरनि पर राजति कांचनदीप अनी ।
 २ ॥ अनु अहिनाथ मिलन आये मनि सोभित सहस्रफनो ॥ २ ॥
 प्रतिमंदिर कलसनि पर भाजहिं मनिगनदुति अपनी ।
 मानहुं विपुल प्रगटि पुरलोहित पठइ दिए अवनो ॥ ३ ॥

घरघर मंगलचार एकरस हरपित रंक गनी । तुलसिदास
कलकीरति गावत लो कलिमल समनी ॥ ४ ॥ २० ॥

अर्थ से सूचित होत है कि यह पद देवारी को है । सांझ ३० इहां
स्फटिक की भित्ति शेष हैं औ ताकी शिखरें फणि हैं औ दीपमालिकां
मणि हैं ॥ १ ॥ यहां लोहित कहै मंगल सो कलसन के मणि हैं ॥ २ ॥
रंक दरिद्र गनी तालवर ॥ ३ ॥ २० ॥

राग गौरी—अवधनगर अतिमुन्दर वरसरितां के तीर ।
नीतिनिपुन नर निवसहिं धरमधुरंधर धीर ॥ १ ॥ सकल
रितुन्ह सुपदायक ता महुं अधिक वसंत । भूप मौलिमनि
जहं बस नृपति जानकी कंत ॥ २ ॥ बन उपवन नवकिंसलय
कुसुमित नानारंग । बोलत मधुर सुपर पग पिकवर गुंजत
भृंग ॥ ३ ॥ समय विचारि कृपानिधि देखि हारि अतिभीर ।
पेलहु सुदित नारि नर विहंसि कहै उरघुवीर ॥ ४ ॥ नगर
नारि नर हरपित सब चले पेलन फागु । देखि रामकृषि अतु-
लित उमगत उर अनुरागु ॥ ५ ॥ स्याम तमाल जलदंत
निरमल पीतदुकूल । अरुन कंजदल लोचन सदा दास अनु-
कूल ॥ ६ ॥ सिरकिरीठ श्रुतिकुंडल तिलक मनोहर भाल ।
कुंचितकैस कुटिल भुजं चित बेनि भगत कृपाल ॥ ७ ॥ कल-
कपोल सुकनासिक ललित अधर द्विज जोति । अरुन कंज-
महं जनु जुगपांति रुचिर गज मोति ॥ ८ ॥ वरदरशीव
अमित बलबाहु सुपीन विसाल । कंकनहार मनोहर उरसि
लसति वनमाल ॥ ९ ॥ उर भृगुचरन विराजत द्विजप्रिय
चरित पुनोत । भगतहेतु नर विग्रह सुरवर गुन गोतीत
॥ १० ॥ उदर विरेष मनोहर सुंदर नाभिगंभीर । हाटक

घटित जटितमनि कटितटरट मंजीर ॥ ११ ॥ ऊरु जांनु-
 पीन मृदुभरकत पंभ समान । नूपुर मुनिमन मोहत करत
 सुकोमल गान ॥ १२ ॥ अरुनवरन पदपंकज नपटुति डंठु
 प्रकास । जनकसुता करपल्लव लालित विपुल विलास ॥ १३ ॥
 कंज कुलिस ध्वज चंकुस रेप चरन सुभचारि । जनमन मीन
 शरन कहं वनसीरची संवारि ॥ १४ ॥ अंगभंग प्रति अतुलित
 सुषमा वरनि न जाइ । एहि सुषमगन होइ, मन फिरि नहि
 पनत लोभाइ ॥ १५ ॥ पैलतफागु अवधपति अनुजसपा
 सबसंग । वरपि मुमन मुर निरपहि सोभा अमित, अंग
 ॥ १६ ॥ ताल, मृदंग भांभ डफ वाजहिं पनव निसान । सुघर
 सरस सहनाइन्ह गावहिं समय समान ॥ १७ ॥ योना वेनु
 मधुरधुनि सुनि किन्नर गंधर्व । निजगुन गरुष हरुष अति
 मानहिं मन तजि गर्व ॥ १८ ॥ निजनिज अटनि मनोहर गान
 बरहिं पिकवैनि । मनहुं हिमालय सिपरनि लसहिं अमर
 नगनैनि ॥ १९ ॥ धवलधाम ते निकसहिं जहं तहं नारिवरुष ।
 मानहुं मधत पयोनिवि विपुल अपहरा जूय ॥ २० ॥ किंसुक
 वरन सुषंसुक सुषमा सुषनि समेत । जनु विधु नियह रहैकरि
 शमिनि निकर निकेत ॥ २१ ॥ कुंकुम मुरस अवीरनि भरहि
 अनुर वरनारि । रितु सुभाय सुठि सोभित देखि विविधि
 विधि गारि ॥ २२ ॥ जो सुष लोगलाग जपतप तीरथ ते दूरि ।
 रामरूपा ते मोइ सुष अवधगलिन रघौ पुरि ॥ २३ ॥ पैलि
 बसंत कियौ प्रभु मज्जन सरजूनीर । विविधि भांति प्रांष्ट
 बन पाए भूपन चीर ॥ २४ ॥

भगति अनूप । मृदुमुमुकाङ्क्ष दीन्ह तब कृपादृष्टि रघु-
भूप ॥ २५ ॥ २१ ॥

अवध ३० । वर सरिता सरजू ॥ १ ॥ नवकिसलय नवीन पल्लव,
कुसुमित पुष्पित ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ पीत दुकूल पीतांबर ॥ ५ ॥ शुक्ति फान
कुंचित देहा ॥ ६ ॥ द्विज दांत इहां मुख कोस अरुन कमल है औ जुग
दंत पंक्ति गजमोती है ॥ ७ ॥ वरदर ग्रीव श्रेष्ठ संखसम कंठ ॥ ८ ॥
द्विज मिय चरित पुनीत श्रीराम द्विजन के मिय है औ चरित पुनीत
वा द्विजन को मिय है चरित पुनीत जिन का ॥ ९ ॥ हाटक सोना
मंजीर करि फिकिनी लेना पावजेय नहीं ॥ १० ॥ ११ ॥ इंदु चंद्रमा ॥ १२ ॥
इहां रखै बंसी है वा एक रेखा को बंसी कहा ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ पनव
ढोल निंसान नगारा ॥ १६ ॥ हरअ हलुका ॥ १७ ॥ अग्नि अटारिन,
अमरमृगनयन देव पत्नी ॥ १८ ॥ इहां धवल धाम छीर सागर औ निक-
सने वाली नारि अपछरा समूह है ॥ १९ ॥ किंसुक कहैं लाल वरग
के सुंदर अंसुक कहैं जो वस्त्र तेहि समेत परम शोभा सहित जे सुख हैं
ते मानो बिधुनिबड कहैं चंद्रमा के समूह है दामिन निकर अरुन वस्त्र
के घुघुटे हैं तिन में निकेत हैं यह करि रहे हैं ॥ २० ॥ कुंकुम कुंकुमा
सुरस अवीर घोरा भवा अवीर सुंदर ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ गोसाईं
जी कहत हैं जे तेहि अवसर में अनूप भक्ति मांगी तेहि को मृदु मुस-
काय के तब कहैं तेहि काल में कृपादृष्टि करि के रघुभूप कहैं रघुकुल
के राजा दिए वा रघु कहैं जीव तिन के भूप जे श्रीराम ते दिए, वा
गोसाईं जी ध्यान में यह पद बनाए वा काल में प्रत्यक्ष रघुनाथ वर
दान दिए सो स्पष्ट अंत के तुक में लिखे ॥ २४ ॥ २५ ॥ २१ ॥

राग वसन्त । प्रिलंत वसन्त राजाधिराज । दीपत न
कौतुक सुरसमाज ॥ १ ॥ सोहैं सदा अनुज रघुनाथ साथ
भोलिन्ह अवीर पिचकारि हाथ ॥ २ ॥ वाजहिं मृदंग डफत
बेनु । किरकहिं मुगंध भरे मलय रेनु ॥ २ ॥ उत जुवति
जानकी रंग । पहिरे पट भूपन सरस रंग ॥ ३ ॥ लिये
वैत सोधे विभाग । चांचरि भूमक गावहिं सरस राग ॥

नूपुर किंकिनि धुनि अति सुहाइ । ललनागन जव छेहि
धाहि धाइ ॥ ५ ॥ लोचन भांजहिं फगुआ मनाइ । छाडहिं
नवाइ हाहा कराइ ॥ ६ ॥ चढे परनि विदूषक स्वांग
साजि । करै कूट निपट गइ लाज भाजि । नर नारि परस-
पर गारि देत । सुनि रसत राम भाइन्ह समेत ॥ ७ ॥ बर-
पत प्रसून बर विबुध वृन्द । जय जय दिनकरकुलकुमुद
वृन्द ॥ ८ ॥ ब्रह्मादि प्रसंसत अवध बास । गावत कल
कोरति तुलसिदास ॥ ९ ॥ २२ ॥

पेलत ६० । नभ आकाश मलय रेनु चंदनरन ॥ १ ॥ २ ॥ लोचन
आमहिं अंजन लगाइ देइ ॥ ३ ॥ पर गदहा विदूषक भांइ ॥ ४ ॥
विबुध देवता ॥ ५ ॥ २२ ॥

राग कीदारा—देपत अवध को आनंद । हरपि बरपत
सुमन दिनदिन देवतनि को वृंद ॥ १ ॥ नगर रचना सिपन
को विधि तकत बहुविधि वंद । निपट लागत अगम ज्यों
जलचरहिं गमन सुखंद ॥ २ ॥ मुदित पुष्पोगनि सराहत
निरपि सुप्रमाकंद । जिन्ह के सुचलिचप पिपत राम सुपार-
बिंद मरंद ॥ ३ ॥ मध्यव्योम विलंबिचलत दिनेस उडुगन
चंद । रामपुरी विलोकि तुलसी मिटत सबदुष वंद ॥ ४ ॥ २३ ॥

देखत ६० । नगर रचना सीखवे को वंद कई प्रकार यदुविधि ते
विधाता तकत हैं सुखंद स्वेच्छा ॥ १ ॥ सुखमादंद परमाशोभा के
मूल, सुभालचिख नेश रूप सुंदरभ्रमर, मरंद रस ॥ २ ॥ व्योम आकाश,
दिनेस सूर्य उडुगन तारागण ॥ ३ ॥ २३ ॥

राग सोरठ—पासत राजुयों राजाराम धरमधुरीन । सावधान
मुजान सबदिन रहत नयलय लीन ॥ १ ॥ खान पगनति

न्याउ देख्यो आपु वैठि प्रवीन । नीचु हतिं महिदेव वाचक
 कियो मोक्ष विहीन ॥ २ ॥ भरत ज्यों अनुकूल जगनिरुपाधि
 नेह नवीन । सकल चाहत रामहो ज्यों जलबगाधहि सोन
 ॥ ३ ॥ गाढ़ राजसमाज लाघत दासतुलसी दीग । सिंह निज-
 कार देहु निजपदप्रेम पावन पौन ॥ ४ ॥ २४ ॥

पालतः ६० । नयनीति यती ने स्वान को मारा रहा सो विनयपत्रिका
 में स्पष्ट है, स्वान के हेतु कियो पुरवारर यती गर्यद चढ़ाई अर्थात् शिव
 निर्माल्य खाइवे ते स्वान भयो रह्यो सोई अधिकार यती को दिए काक
 औ उलूक को विवाद रहा उलूक कहत रहा कि ई स्थोन हमारा है औ
 काक कहत रहा कि हमारा है सो पहिले ते रहनेवाला उलूक को जानि
 के जिताए औ शूद्र तप करत रहा ताते ब्राह्मण को बालक मरि गयो
 ताते नेहे शूद्र को मारि के ब्राह्मण के बालक को जियाए ६ जैसे भरत जी
 के अनुकूल है तैसे निरुपाधि नेह नवीन पूर्वक जगत अनुकूल है २।३।४॥२४

संकठ सुकृत को सोचत जानि जिय रघुराउ । सहस
 हांस पंचसत में ककुब है अब आउ ॥ १ ॥ भोग पुनि पितु
 आपु को सोउ किये बने बनाउ । परिहरे विनु जानकी
 नहि और अनघ उपाउ ॥ २ ॥ पालिवे असिधारव्रत प्रियप्रेम-
 पाल सुभाउ । होइहित केहिभांति नित सुविचार नहि
 चितचाउ ॥ ३ ॥ निपट असमंजसहुं बिलसति मुप मनोहर-
 ताउ । परमधीर धुरीन हृदय कि हरप विसमय काउ ॥ ४ ॥
 अनुज सेवक सचिव हैं सबसुमति साधु सपाउ । जान कोउ न
 जानको विनु अगम अलप लपाउ ॥ ५ ॥ रामजोगवत सीयमन
 प्रियमनहि प्रान प्रियाउ । परमपावन प्रेम परमित समुक्ति
 तुसली गाउ ॥ ६ ॥ २५ ॥

संकठ ६० । सहस द्वादश पंचशत पारह हजार पांच सौ वर्ष में ककुब

अर माय है यशवि चान्नीज जी के मन मे ग्यारह हजार वर्षे आयत
है रारा गोमर्त जी वह कल मे भिन्न के निते ताने शंका नहीं करना
॥३॥३॥३॥३॥३॥३॥

राम विचारि कै रायी ठीक दे मनसाहिं । लोकवेद सनेह
पानत पञ्च कृपालहिं जाहिं ॥१॥ प्रियतमा पति देवता जीहि
चमा रमा मिहाहिं । तुर्दिनी सुकुमारिसियतियमनि समुक्ति
सकुचाहिं ॥२॥ मेरेहोमुप रुपोमुपु भवनो सो सपनेहुं नाहिं ।
मेदिनी गुनगेहनी गुन मुमिरि सोवसमाहिं ॥ ३ ॥ रामसोय
सनेह परगत भगम रुकवि सकाहिं । रामसोय रहस्य तुलसी
कहत रामकृपाहिं ॥ ४ ॥ २६ ॥

राम ६० ॥ १ ॥ मेदिनी श्री जानकी जू गुनगेहनी गुन केगृह ॥२॥
रामकृपाहिं रामकृपा हरि तुलसी श्रीराम रहस्य को कहत हैं ॥३॥४ ॥२६॥

चरचा चरनि सोंच रंघी जानि मनि रघुराड । दूत मुख
सुनि लोक धुनि घर चरनि यूभो आड ॥ १ ॥ प्रिया निज
अभिलाष रुचि कह कहति सिय सकुचाड । तीय तनय
समेत तापस पुजिहों वन जाड ॥ २ ॥ जानि कनकासिंधु
भाबी बियस सकल सहाय । धीर धरि रघुवोर भोरहिं लिए
लपन योजाड ॥ ३ ॥ तात तुरतहिं साजि खंदन सीय लीहु
चटाड । बालमीक मुनोस आश्रम आडपहु पहुंचाड ॥ ४ ॥
भलेहि नाथ सुहाय माथे राखि राम रजाड । अले तुलसी
पालि सेवकधर्म अवधि अजाड ॥ ५ ॥ २७ ॥

चरचा ३० । चरनि सों दून सों जानि मनिजानी शिरोपणि
अपीछ प्रसादि जे शानी तिन के शिरोपणि ॥ १ ॥ २ ॥ खंदन रय
॥ ३॥३॥३॥३॥३॥३॥

आए लपन लै सौंपी सिय मुनीसहि आनि । नाइ सिस
 रहे पाइ आसिप जोरि पंक्तज पानि ॥ १ ॥ बालमीक
 विलोकि व्याकुल लपन गरत गलानि । सर्वविद वृक्षत न
 विधि की वामता पहिचानि ॥ २ ॥ जानि जिय अनुमान ही
 सिय सहस विधि सनमानि । राम सदगुणधाम परमिति
 भई ककु क मलानि ॥ ४ ॥ दीनबंधु दयाल देवर दीपि अति
 अकुलानि । कहति बचन उदास तुलसीदास विभुषन रानि
 ॥ ४॥२८ ॥

आए ६० सर्वविद सर्वज्ञ ॥ १ ॥ श्रीराम सदगुण धाम के परमिति
 कहैं मर्यादा हैं पर यह क्या किया यह विचारि के बालमीक जी की
 बुद्धि कुछ मलान भई ॥ २॥३॥२८ ॥

तौलीं बलि आपु ही कीवो विनये समुक्ति सुधारि ।
 जौलीं हों सिद्धि लेउं बन रिपिरोति बसि दिन चारि ॥ १ ॥
 तापसो कहि कहा पठवति नृपति को मनुहारि । बहुरि
 तेहि विधि आइ कहि है साधु कोउ हितकारि ॥ २ ॥ लपन
 लाल कृपाल निपटहि डारिबो न बिसारि । पालिबो सब
 तापसिनि ज्यों राजधरम विचारि ॥ ३ ॥ सुनत सीता
 बचन मोचत सकल लोचन वारि । बालमीकि न सके तुलसी
 सो सनेह संभारि ॥ ४॥२९ ॥

सु० ॥ २९ ॥

सुनि व्याकुल भयेउ तरु ककु कछी न जाइ । जानि
 जिय विधि-वाम दौन्ही मोहि सरूप सजाइ ॥ १ ॥ कहत
 द्विय मेरी कठिनई लपि गइ प्रीति लजाइ । आजु-पौसर
 ऐसें जौ न चले प्रान बजाइ ॥ २ ॥ इतहि सोय सनेह संकट

तेहि राम रजाइ । मौन ही गहि चरन गौने सिध मुखा-
सिध पाइ ॥ ३ ॥ प्रेमनिधि पितु को कछौ मैं परुषः पवन
पदाइ । पाप तेहि परिताप तुलसी उचित सहै सिगाइ
। ४॥३० ॥

मुगप ॥ ३० ॥

गौने मौन हीं वारहि वार परि परि पाय । जात जनु
परची कर लछिमन भगन पछिताय ॥ १ ॥ असन बिनु
रन वरम बिनु रन बच्यो कठिन कुघाय । दुसइ सांसति
रान को हनुमान ज्यायौ जाय ॥ २ ॥ हेतु हीं सिय हरन
को तब अवहुं भयौ सहाय । होत इठि मोहि दाहिनो दिन
देव दासन दाय ॥ ३ ॥ तज्यो तनु संयाम कीहि लागि गोध
बसी जटाय । ताहि हीं पंखाइ कानन बल्यो बबध रुभाय
। ४ ॥ घोर हृदय कठोर करतय मृज्यौ हीं विधि पाय । दास
तुनमो जानि राख्यो कृपानिधि रघुराय ॥ ५॥३१ ॥

गौने ३० । लछिमन जी पधाचार में मगन हैं मानो लछिमन जी
सी जान हैं कर ते रची भई अर्थात् प्रणिमा मो जान है । बोज रच-
न मृतक को कहत, अब लछिमन जी का पछितार करन हैं कि भोजन
बिना रन में बेचड आ बखतर बिना रण में एचेडें । एउनि दुनाउ का
मन्य दुगेर तुक में है ॥ १॥२॥३॥४॥५॥३१ ॥

पुचि न सोचिये पाइ हो जनकइह जिय जानि । जानि
ही कल्याण कीतुक कुसल तुव कल्यानि । १॥ राजरिपि बिनु
समुर प्रभु पति तू मुमंगलपानि । ऐमेइ दल बामता दहि
राम विधि की जानि ॥ २ ॥ बोलि मुनि कन्टा मियाई दोति
गति पहिपानि । आनसिन्ह की देवसरि सिधं रीइ रीइ रन-

मानि ॥ ३ ॥ स्नाद प्रातर्हि पूजिवो वटः विटपः अभिमत
दानि । सुवन लाहु उछाहु दिन दिन देविचन हित हानि
॥ ४ ॥ पाप ताप विमोचनौ कहि कथा सरस पुरानि ।
बालमीक प्रबोध तुलसी गर्द गह्व गलानि ॥ ५ ॥ ३२ ॥

पुत्रि १० । राजकापि तुम्हारे पिता औ समुह हैं, प्रभु पति हैं, तू
सुमंगलखानि हौ ॥ १ ॥ कपि श्री जानकी को आपनि कन्या बोले
प्रीति की गति पदिवानि के सिखाई कि हे सिय आलसिन्ह की देवता
जो गंगा हैं तिन्ह को सनमान करि के सेइअहु ॥ २ ॥ ३॥ ४ ॥ ५ ॥ ३२ ॥

जब ते जानकी रहि रुचिर आश्रम आइ । गगन जल
यल विमल तब ते सकल मंगल दाइ ॥ १ ॥ निरस भूरुह
सरस फूलत फलत अति अधिकाइ । बंद मूत अनेक चंकुर
स्नाद सुधा लजाइ ॥ २ ॥ मलय मरुत मराल मधुकर मोर
पिक-समुदाइ । मुदित मन मृग विहंग विहरत विषम वयन
विहाइ ॥ ३ ॥ रहत रवि अनुकूल दिन ससि रजनि
सजनि मुहाइ । सोय सुनि सादर सराहति सपिन भलो
सनाइ ॥ ४ ॥ मोद विपिन विनोद चितवत लित चितौ
चुराइ । राम विनु सिय सुपद बन तुलसी कहै किमि गाइ
॥ ५ ॥ ३३ ॥

जब ते १० । निरस भूरुह शुष्क वृक्ष ॥ १ ॥ मलय मरुत दक्षिण
पवन तेहि से मुदित मन होय मृग पक्षी विषम घर विहाय विहरत हैं ॥
रहत रवि अनुकूल दिन उज्जता आदि से खेल नहीं देत हैं ॥ ३ ॥ ४ ॥
सहि प्रकरण की व्याख्या स्पष्ट करि नहीं लिखी बालमीकीय रामायण
औ पद्मपुराण में स्पष्ट है ॥ ५ ॥ ३५ ॥

सुभ दिन सुभ बरो नौकी नपत लगन मुहाइ । पुत
अस कानकी है मुनिनधू उठि गाइ ॥ १ ॥ हरप्रिय वरपत मुन

न गहनं दधाड वजाड । मुवन कामन आग्रमनि रहे
 मोद भगन छाड ॥ २ ॥ तेहि निना तहं सनुसूदन रछे
 दिधि दन पाड । मांगि मुनि सो विदा गयने भोर सो रुप
 पाड ॥ ३ ॥ सातु मोली बहिन हूं ते सामु तें अधिकार ॥
 दरहि तापस तोयतनया मोयहित चित लाड ॥ ४ ॥ किये
 विधि व्योहार मुनिवर विप्रवृंद बोलाड । कहत सब रिपि
 हवा को फल भयो आजु भवाड ॥ ५ ॥ मुरुप रिपि मुप सुतनि
 को सिय सुपद सकन सहाड । सुल राम सनेह को तुलसी
 न जिय री जाड ॥ ६ ॥ ३४ ॥

सुभ ० । पद सुगम । कथा स्पष्ट श्रीमद्रामायण में ॥ ३४ ॥

मुनिवर करि छठी कीन्ही बारहे को रीति । वनवसन
 पहिराड तापस तोपपोषे प्रीति ॥ १ ॥ नामकरन सुषन्न-
 प्रासन धेदधांधो नीति । समै सवरिपिगज करत समाज
 साजि समोति ॥ २ ॥ बालबालहिं बाहहिं करिहैं राजसुख
 जगु जीति । रामसियसुत गुरभनुयइ उचित अचल प्रीति
 ॥ ३ ॥ निरधि बालविनोद तुलसी जातबासर बीति । विभ-
 चरित सिय चितचितेरो लिपत नितहित भोति ॥ ४ ॥ ३५ ॥

मुनि १० । समीति सभा वा समिग्र ॥ १ ॥ २ ॥ हित भीति भीति
 रूप भीति पर ॥ ३ ॥ ३५ ॥

बालक सोय के विहरत मुदित मन दोउ भाइ । नाम
 लक्षकुम राम सिय अनुहरत सुंदरताइ ॥ १ ॥ देत मुनि मुनि-
 सिसु पिछौना लित धरत दुगाइ । घेल घेलत न्यप सिमुह के
 बालवृंद बोलाइ ॥ २ ॥ भूप भूपन वसन बाहन राज साज
 मलाइ । वरम चरम कृपान सर धनु तून लित बनाइ ॥ ३ ॥

दुषी सिय पिय विरह तुलसी सुषी सुत सुपपाद । आंचपय
उफनात सींचत सलिल ज्यों सकुचाद ॥ ४ ॥ ३६ ॥

बाल ३९ ॥ १ ॥ बरम वस्तनर, चरम ढाल, कृपान तलवार, तून
तरकस ॥ २ ॥ ३ ॥ ३६ ॥

कैकड़ लौलौं जिअत रह्यो । तौलौं बात मातु सों सुइ
भरि भरत न भूलि कह्यो ॥ १ ॥ मानी राम अधिक जननी
तें जननिहुं गस न गह्यो । सोय लपन रिपुदवन रामरूप लपि
सब की निवह्यो ॥ २ ॥ लोक वेद भरजाद दोष गुन गति
चित्त चपन चह्यो । तुलसी भरत समुझि मुनि राघो राम
सनेह सह्यो ॥ ३ ॥ ३७ ॥

बाल ४० । गस गांस ॥ १।२ ॥ चप नेत्र इहां सिंहावलोकन रीति
से पिछिली कथा कहे ॥ ३॥३७ ॥

राग रामकलौ । रघुनाथ तुम्हारे चरित मनोहर गावत
सकल अवधवासो , अति उदार अवतार मनुज वपु धरे ब्रह्म
अज अविनासो ॥ १ ॥ प्रथम ताडिका हति सुबाहु वधि मप
राष्ट्रौ द्विज हितकारी । देखि दुषो अति सिला सापवस
रघुपति विप्रनारि तारो ॥ २ ॥ सब भूपनि को गरव इछ्यो
हरि भंज्यौ संभुचाप भारी । जनकमुता समेत आवत गृह
परसराम अति मदहारी ॥ ३ ॥ तात वचन तजि राजकाज
सुर-चित्रकूट मुनिमेध धर्यो । एक नयन कीन्हो सुरपति-
सुत वधि विराध रिपिसोक रक्ष्यो ॥ ४ ॥ पंचवटो पावन
राघव करि सूपनपा कुरूप कीन्हो । परदूपन संघार कपट
मृग गोधराज कहुं गति दीन्हो ॥ ५ ॥ हति कबंध सुगीव
मपा करि वेधे ताल बालि माग्यो । वानर रीष्ट सहाय अनुज

धनं सिंधुं जालि इमु दिम्भारगौ ॥ ९ ॥ मकुज पुत्र दलमहित
 ज्ञानन मारि जटिल सुन्दर टागौ । परम माधु जिय जानि
 दिम्भारन मन्त्रापुरी तिलक मारौ ॥ १० ॥ मोता अरु लखि-
 मन मंग मोने चौगो जिते दाम आए । नगरनिकट विमान
 जायो मध नर नारी टेपन धाए ॥ ११ ॥ मिव विरंचि सुक नार-
 दादि मुनि अमृति करत विमल दानो । चौदह भुवन चराचर
 ररपित आए राम राजधानी ॥ १२ ॥ मिले भरत जननी गुरु
 पञ्जन आहत परम अनंद भरे । दुमह वियोग जनित दारुन
 दुप रामचरन टेपत विमरे ॥ १३ ॥ वेद पुरान विचार लगन
 सुभ महराज अभिषेक कियो । तुलसीदास जिय जानि सुभ-
 यमरु भक्तिदान तव मागि लियो ॥ १४ ॥ ३८ ॥
 इति श्रीतुलसीदासकृतरामगीतावल्यां उत्तरकाण्डः समाप्तः ।
 रघुनाथ १० । ११ । १२ । १३ । १४ । १५ । १६ । १७ । १८ । १९ । २० । २१ । २२ । २३ । २४ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । ३२ । ३३ । ३४ । ३५ । ३६ । ३७ । ३८ । ३९ । ४० । ४१ । ४२ । ४३ । ४४ । ४५ । ४६ । ४७ । ४८ । ४९ । ५० । ५१ । ५२ । ५३ । ५४ । ५५ । ५६ । ५७ । ५८ । ५९ । ६० । ६१ । ६२ । ६३ । ६४ । ६५ । ६६ । ६७ । ६८ । ६९ । ७० । ७१ । ७२ । ७३ । ७४ । ७५ । ७६ । ७७ । ७८ । ७९ । ८० । ८१ । ८२ । ८३ । ८४ । ८५ । ८६ । ८७ । ८८ । ८९ । ९० । ९१ । ९२ । ९३ । ९४ । ९५ । ९६ । ९७ । ९८ । ९९ । १०० ।

दोहा ।

श्रीमद्विष्णु रघुनाथ निधि, रामसखे पद नाथ ।

हरिहर भगवन् मतिमंद हूँ, टीका सखे बनाय ॥

इति श्रीतुलसीदासकृतरामगीतावलीप्रकाशिकाटीकायां श्रीमीताराम-
 कृपापात्र श्रीमीतारामीय हरिहरपदादकृतौ उत्तरकाण्डः समाप्तः ।





विज्ञापन ।

- रामचरित मानस गोस्वामी तुलसी दास कृत शुद्धपाठ
का रामायण फोटो, जीवनी और जिल्दसहित ७)
- रामचरितमानस बिना जिल्द और फोटो ४)
- रामायण परिचर्या परिशिष्ट प्रकाश-रामायण
की सारगर्भित अपूर्व टीका दो जिल्दों में १०)
- मानसभाव प्रकाश-रामायण की भावपरिपूर्ण
टीका तीन जिल्दों में १०)
- कवित्तरामायण और हनुमानबाहुक सटीक १)
- वेराग्यसंदीपिनी-बंदनपाठक कृत टीका सहित ॥)
- सटीक मानसमयंक सातो कांड ४)
- श्रीगुणवरगुणदर्पणश्रीमहात्मायुगलानन्यशरणकृत १,
- योगदर्शन भाषाभाष्यसहित २॥) और ३)
- श्राद्धमीमांसा १)
- सटीक किष्किंधाकांड अनेक शंकासमाधान
सहित ६०० पृष्ठों में २॥)
- हरिश्चन्द्रकला प्रथम खंड नाटकसमूह ४)
- ” २ य० इतिहास ग्रंथसमूह ३)
- ” ३ य० राजभक्ति ग्रंथसमूह २)
- ” ४ य० भक्तरहस्य भक्ति ग्रंथसमूह ४)
- ” ५ म० काल्यामृतप्रवाह कविनाग्रंथ ४)
- ” ६ छ० भिन्न २ विषय के ३७ ग्रंथ १२)







